R

S-Y-466

सचित्र उत्तराखण्ड

चारोंधाम सप्तपुरी माहात्म्य

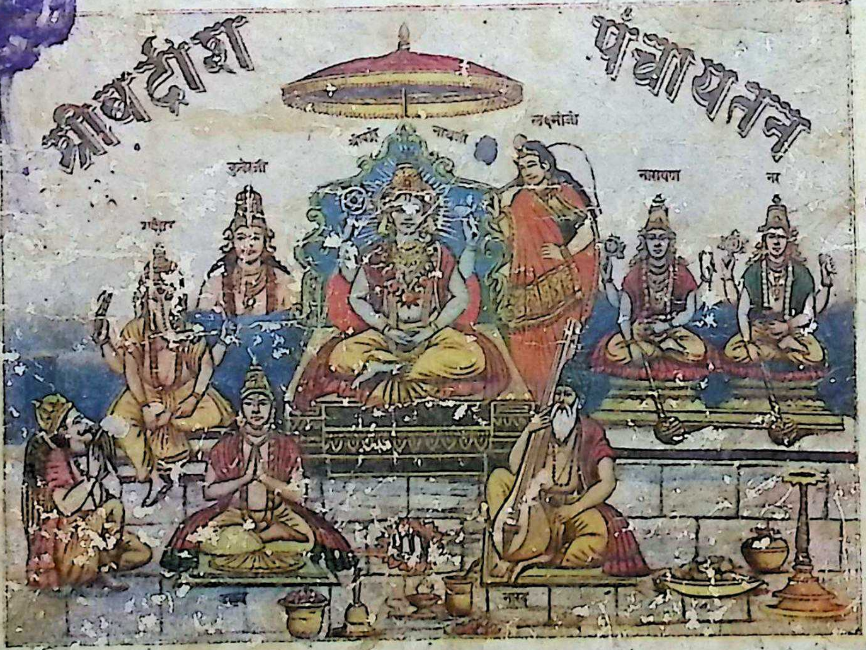

३९७-८.५

BIRENDRA LIBRARY

227, Dhalayacha Tole,
Lalitpur 16, Nepal.

सचित्र उत्तराखण्ड

चारोंधाम सप्तपुरी माहात्म्य

इसमें बदरीनाथ, जगन्नाथ, द्वारिकानाथ, रामेश्वर, केदारनाथ, गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी तथा उत्तराखण्ड के व भारत के अनेक तीर्थों का माहात्म्य सम्मिलित है

प्रकाशक

पण्डित महेशानन्द एण्ड सन्स

नन्दप्रयाग-गढ़वाल (यू० पी०)

प्रकाशक

पं० महेशानन्द एण्ड सन्स

नन्दप्रयाग-गढ़वाल (यू० पी०)

सर्वाधिकार स्वरक्षित

मुद्रक

शिवशंकर भार्गव

फाइन प्रेस, १४, हिवेट रोड, लखनऊ

भूमिका

हमारे सनातन धर्म में तीर्थों की बड़ी महिमा लिखी है, जिनकी यात्रा से मनुष्यों का ऐहलौकिक व पारलौकिक कल्याण होता है। केवल धर्मशास्त्रों में ही नहीं, वरन् वेदों में भी तीर्थों की महिमा पाई जाती है। भारत के चारों कोनों में जगन्नाथ, द्वारिका-रामेश्वर और श्रीबद्रीनाथ कलियुगी जीवों की मुक्ति को विराजते हैं। देवर्षि, ब्रह्मर्षि, सिद्ध, गन्धर्व, सुर, नर और मुनियों का सेवित, परम पुण्यप्रद इस उत्तर हिमालय की तीर्थमय स्वच्छन्द भूमि में श्रीबदरी क्षेत्र अर्थात् श्रीनर-नारायण का आश्रम ही यात्रा का परमोच्च स्थान समझा जाता है।

हमारे सम्पूर्ण प्राचीन पुरुष वीतराग होकर इसी क्षेत्र में निवास करके परम सायुज्य को प्राप्त हुए। वर्तमान काल में इस पर्वतराज के प्राकृतिक सौन्दर्य, शीतल जल-वायु का आनंद करते-करते श्रीबदरी-केदार की इच्छित फल देनेवाली यात्रा है। हरिद्वार से यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ होते हुए, गिरिश्रृंग लाँघते हुए पुण्य सलिला यमुना, भागीरथी, अलकनन्दा, नन्दाकिनी, मन्दाकिनी आदिक पुण्य प्रवाहवाली गंगाओं के दर्शन व स्नान प्रतिदिन करते रहने से मनुष्य के काम क्रोधादिक दोष दूर होकर शरीर निर्मल और स्फूर्तिदायक होता है। हमारी फर्म द्वारा प्रकाशित १२०० पृष्ठ के श्रीकेदारखण्ड ग्रन्थ में उत्तराखण्ड के तीर्थों का विशद विवरण दिया गया हैं।

इस माहात्म्य में उत्तराखण्ड के तथा भारत के अन्या सुप्रसिद्ध तीर्थ स्थानों का माहात्म्य दिया गया है। अन्त में उत्तराखण्ड यात्रा मार्ग का भी विवरण और नकशा दिया गया है। आशा है, यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

गोविंदप्रसाद नौटियाल, अध्यक्ष, फर्म—"महेशानंद एण्ड सन्स"

विषय-सूची

बदरिकाश्रम का आरम्भ माहात्म्य १
विरहीगंगा ४
महाभद्रा ५
सूर्यतीर्थ ५
दण्डाश्रम ६
गरुड़गङ्गा ७
ज्योतिमंठ ८
विष्णुप्रयाग ९
सूक्ष्मक्षेत्र १०
पांडुकेश्वर ११
नरनारायणपर्वतस्थित तीर्थ १३
बिन्दुमती गंगा १५
वैखानसतीर्थ १६
योगीश्वरभैरव १७
कूर्मधारा १८
शिबजी से बदरिकाश्रम की महिमा कथन १९
चार प्रकार का बदरिकाश्रम २१
ब्रह्मकपाल की उत्पत्ति २७
बदरीपुरी में केदारलिङ्ग ३०
सनत्कुमारसंहितांतर्गतकेदार-माहात्म्य ३२
तप्तकुण्ड की उत्पत्ति ३४
तप्तकुण्डमाहात्म्य ४१
पञ्चशिला ४६
नारदशिला ४७
मार्कण्डेयशिला ५३
वैनतेयशिला ५८
बदरिकाश्रम त्यागने योग्य नहीं ६५
वाराहशिला ६६
नारसिंहशिला ६८
भगवान् नारायण का बदरिकाश्रमवास ७३
महाराज की वर्तमान मूर्ति ८०
महाराज की प्रदक्षिणा ८४

महाप्रसाद ८४
चरणामृत ९०
तीर्थ पर इष्ट मन्त्र का जप ९२
पुरी में चातुर्मास्यवास ९३
भगवान् बदरीनाथजी के दर्शन ९३
श्रीब्रह्मकपाल माहात्म्य ९६
सरस्वतीगङ्गा १०२
इन्द्रधारा १०४
मानसोद्भेद १०५
वसुधारा १०७
सोमकुण्ड १०९
सत्यपद १११
पञ्चधारा ११२
सोमकुण्ड माहात्म्य ११५
द्वादशादित्यतीर्थ १२०
पुरुषार्थतीर्थ १२१
सत्यपद १२२
विमलतीर्थ १२४
उर्वशीकुण्ड १२४
आयुधतीर्थ १२८
रुद्रतीर्थ १२९
मुचुकुन्दाश्रम १२९
व्यासतीर्थ १३०
मणिभद्राश्रम १३०
मेरुशिखर १३२
लोकपालतीर्थ १३६
मानसोद्भेदसङ्गम.... .... १४०
धर्मक्षेत्र १४२
कूर्मोद्गारतीर्थ १४३
ब्रह्मावर्ततीर्थ १४४
यत्रा करने के नियम १४५
श्रीकेदारमाहात्म्य १५७
तुङ्गनाथमाहात्म्य १९८
त्रियुगीनारायण माहात्म्य १९९
मध्यमेश्वर माहात्म्य २००
श्रीकल्पेश्वर माहात्म्य २०१

रुद्रनाथ माहात्म्य २०२
कर्णप्रयाग माहात्म्य २०३
रुद्रप्रयाग माहात्म्य २०४
देवप्रयाग माहात्म्य २०५
हरिद्वार माहात्म्य २०८
गंगोत्तरी यमुनोत्तरी माहात्म्य २०९
उत्तरकाशी माहात्म्य २४७
जगन्नाथ माहात्म्य २४८
रामेश्वर माहात्म्य.... .... २५८
द्वारिकानाथ माहात्म्य २६८
अयोध्यापुरी माहात्म्य २७९
मथुरापुरी माहात्म्य २८०
काशीपुरी माहात्म्य २८१
कांचीपुरी माहात्म्य २८२
अवन्तिकापुरी माहात्म्य २८३
कुरुक्षेत्र माहात्म्य.... .... २८४
हरिक्षेत्र माहात्म्य २८५
गयाक्षेत्र माहात्म्य २८५
पुष्करक्षेत्र माहात्म्य २८६
बाराहक्षेत्र माहात्म्य २८६
प्रयागराज माहात्म्य २८७
नैमिषारण्य माहात्म्य २८७
चित्रकूट माहात्म्य.... .... २८८
नर्मदा माहात्म्य २८८
उत्तराखण्ड यात्रा मार्ग २८९

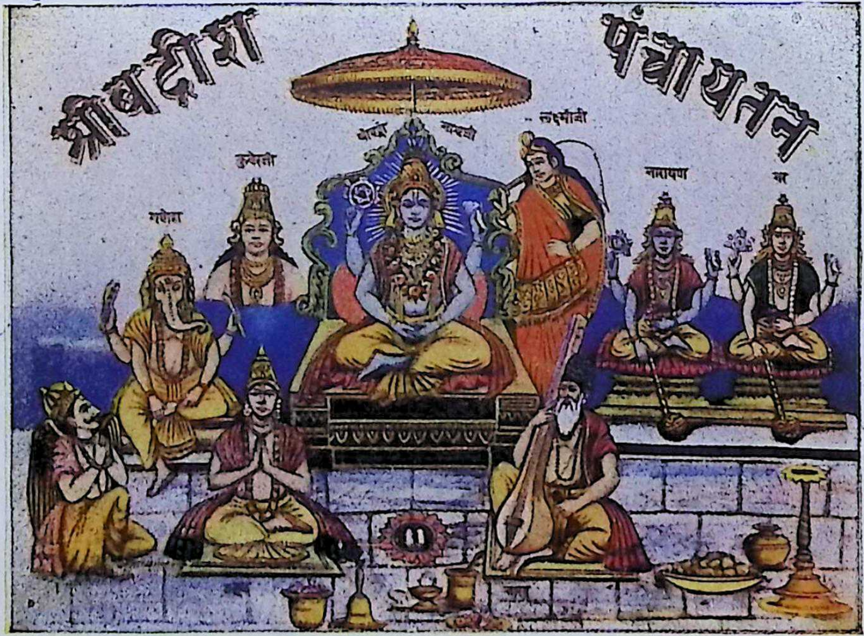

श्रीबद्रीश पंचायतन

चारोधाम

प्रथमोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ नन्दप्रयागमाहात्म्यम् ॥

(श्रीबद्रिकाश्रमका आरम्भ)

वसिष्ठ उवाच—कण्वाश्रमं समारभ्य यावन्नन्दगिरिर्भवेत् ॥
तावत्क्षेत्रं परं पुण्यं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ॥ १ ॥

भाषा—कण्वऋषिके स्थान (नन्दप्रयाग) से लेकर नन्दगिरि पर्वत तक यह (बद्रिकाश्रम) ऐश्वर्य तथा मुक्तिका देने वाला है ॥ १ ॥

कण्वनाम महातेजा महर्षिर्लोकविश्रुतः ॥
तस्याश्रमपदे गत्वा भगवन्तं रमापतिम् ॥ २ ॥

भाषा-महातेजस्वी महर्षि कण्व लोक में विख्यात हैं उनके आश्रम में जाकर भगवान् रमापति को नमस्कार कर ॥ २ ॥

दुरात्मानोऽपि गच्छन्ति पदं दुःखविवर्जितम् ॥
नन्दप्रयागके स्नात्वा संपूज्य च रमापतिम् ॥ ३ ॥

भाषा-दुरात्मा पुरुष भी दुःख से छूट कर अच्छे पदको प्राप्त होते हैं। नन्दप्रयाग में स्नान तथा रमापति भगवान् का पूजन करके ॥ ३ ॥

किं किं न जायते तस्य मुक्तिस्तस्य करे स्थिता ॥
धन्याः कलियुगे घोरे ये नरा बदरीं गताः ॥ ४ ॥

भाषा-क्या कुछ इसको नहीं मिलता ? और मुक्ति तो उसके हाथ ही में स्थित रहती है। इस घोर कलियुग में वही मनुष्य धन्य हैं जो श्रीबद्रिकाश्रम को गए हैं ॥ ४ ॥

यत्र ब्रह्मादयो देवा हरिभक्तिरताः प्रिये ॥
निवसन्ति स्थले रम्ये नानातीर्थविराजिते ॥ ५ ॥

भाषा-वसिष्ठजी अरुन्धति से बोले। हे प्रिये ! अनेक तीर्थों से विराजित जिस रमणीक स्थल में ब्रह्मादिक देवते हरिभक्तिमें तत्पर रहते हैं ॥ ५ ॥

ये तत्र वासिनो लोका बदर्य्याश्रममण्डले ॥
विष्णुरूपधराः सर्वे भवन्ति वरवर्णिनि ॥ ६ ॥

भाषा—हे वरवर्णिनि ! जो मनुष्य बद्रिकाश्रम में वास करते हैं वे सब साक्षात् विष्णुरूपधारी हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ ६ ॥

नन्दप्रयागे तु यथा बभूव मम वल्लभे ॥
यज्ञो नन्दस्य राज्ञो वै तच्छृणुष्व समाहिता ॥ ७ ॥

भाषा—हे वल्लभे ! नन्दप्रयाग में जिस प्रकार नन्दराजा का यज्ञ हुआ था वह मैं तुमसे कहता हूँ सावधान होकर सुनो ॥ ७ ॥

नन्दो नाम महाराजा धर्मात्मा सत्यसंगरः ॥
यज्ञं चकार विधिवद्बह्वन्नं भूरिदक्षिणम् ॥ ८ ॥

भाषा—महाराजा नन्द बड़े धर्मात्मा तथा सत्यवादी थे उन्होंने विधिपूर्वक बड़ी दक्षिणा और बहुत अन्न से यज्ञ को किया ॥ ८ ॥

तत्र ब्रह्मादयो देवा भागं स्वं स्वं पुरा दधुः ॥

मूर्तिमन्तो महात्मानो भक्तास्तस्य महीपतः ॥ ९ ॥

भाषा-वहाँ आकर ब्रह्मादि देवतोंने पहलेही आकर अपने २ भाग को धारण किया और वे देवते उसकी भक्ति से मूर्तिमान् होकर स्थित हुए ॥ ९ ॥

नाम चक्रुश्च संतुष्टास्तन्नाम्ना सफलं कृतम् ॥

संगमे स्नानमात्रेण शुद्धा नन्दालकनन्दयोः ॥ १० ॥

भाषा-सन्तुष्ट हुए उन देवताओं ने उसी के नामसे वह क्षेत्र विख्यात किया । वहां अलकनन्दा तथा नन्दाकिनी गंगाओंके संगममें स्नान करके मनुष्य शुद्ध हो जाता है ॥१०॥

पितॄन् संतर्प्य विधिवत् पितॄन् संतर्प्य चोदकैः ॥

नमस्कृत्वा च तत्क्षेत्रं परिक्रम्य शिवं पुनः ॥ ११ ॥

भाषा-यहां यथाविधि पितरको तर्पण करे और पुनः क्षेत्रको तथा शिवलिंगको नमस्कार तथा परिक्रमा करे ॥ ११ ॥

॥ विरहीगंगा ॥

तत उत्तरदिग्भागे नदी परमपावनी ॥

व्रीहिका नाम विख्याता सर्वपापहरा मता ॥ १२ ॥

भाषा–नन्दप्रयागके उत्तरको सर्व पापों की हरनेवाली विरही गंगा ख्यात है ॥ १२ ॥

॥ महाभद्रा ॥

ततो दक्षिणतो भद्रे महाभद्रा नदी परा ॥
तत्रैकचिह्नमाख्येयं शृणु स्वस्थेन चेतसा ॥ १३ ॥

भाषा–हे भद्रे ! उसके दक्षिणमें महाभद्रा गंगा है उसका चिह्न कहता हूँ सावधान होके श्रवण करो ॥ १३ ॥

तत्रैको वटवृक्षोऽस्ति सप्तसप्तपरिच्छदः ॥
पत्राणि तानि दृष्ट्वा वै दृष्टिस्तम्भः प्रजायते ॥ १४ ॥

भाषा--वहां सात २ पत्तोंवाला वटवृक्ष है उसके पत्तोंको देखके मनुष्य की दृष्टिस्तम्भ हो जाती है ॥ १४ ॥

॥ सूर्य्यतीर्थ ॥

तत्रैव सूर्य्यतीर्थं च चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥

अन्यच्छृणु महातीर्थं गव्यूतौ पूर्वदिक्स्थितम् ॥१५॥

भाषा--वहीं अर्थ, धर्म, काम तथा मोक्षका देनेवाला सूर्यतीर्थ है और भी महातीर्थ कहता हूँ सुनो। जो दो कोश पूर्वमें स्थित है ॥ १५ ॥

॥ दण्डाश्रम ॥

तत्र गाणेश्वरी मूर्तिः सर्वविघ्नविनाशिनी ॥
दण्डाश्रमेऽपि तत्रैव यत्र राजा पुरा प्रिये ॥ १६ ॥

भाषा--सम्पूर्ण पापोंको तथा विघ्नोंको नाश करनेवाली गणेशजीकी मूर्तिसहित दण्डाश्रम है। हे प्रिये जहां पहले राजा ॥ १६ ॥

दण्डो नाम्ना रवेः कुण्डे तेपे परमकं तपः ॥
यन्नाम्ना दण्डकारण्यं ख्यातमस्ति त्रिलोकके ॥ १७ ॥

भाषा- दण्डानाम से विख्यात था उसने सूर्य्यकुण्डपर परम तपस्या की, उसी के नाम से त्रिलोकी में दण्डकारण्य क्षेत्र विख्यात हुआ ॥ १७ ॥

दण्डाश्रमेऽपि यो मर्त्यः स्नानं दानं जपं क्रियाम् ॥

तत्कोटिगुणसंख्यातं भवतीति शिवेरितम् ॥ १८ ॥

भाषा-दण्डाश्रम में भी जो मनुष्य स्नान, दान, जपादिक क्रिया को करता है वह कोड़ गुणा अधिक फल देनेवाला होता है यह शिवजी ने कहा है ॥ १८ ॥

॥ गरुड़ गङ्गा ॥

ततो गरुडगंगायां गंगाया दक्षिणे तटे ॥
स्नात्वा देवं समभ्यर्च्य पक्षीशं विष्णुरूपिणम् ॥ १९ ॥

भाषा-तब गंगा के दक्षिण ओर गरुडगङ्गा में स्नान और विष्णुरूपी गरुड भगवान का पूजन करे ॥ १९ ॥

पञ्चकोटिसहस्राणां वर्षाणां वसते चिरम् ॥
विष्णुलोके योगिगम्ये ततो योगिषु जायते ॥ २० ॥

भाषा-वह मनुष्य योगिगम्य विष्णुलोक में पांच करोड हजार वर्ष तक वास करता है, इसके उपरान्त वह योगियों में उत्पन्न होता है ॥ २० ॥

न तत्र सर्पजभयं विद्यते न तथा विषात् ॥

विषग्रस्तोऽपि यो मर्त्यो जले घृष्टं पिबेत्तु वै ॥ २१ ॥

भाषा-वहां न सर्पका भय है, न विषका भय है, विषसे ग्रस्त मनुष्य उसकी शिलाको घिसकर पीता है ॥ २१ ॥

न तत्र सर्पविषजं भयं भवति कर्हिचित् ॥
ततो गणेशनद्यां वै स्नात्वा पापक्षयो भवेत् ॥ २२ ॥

भाषा--उसको सर्पके विषसे उत्पन्न हुआ भय कभी नहीं होता, इसके उपरान्त गणेशगंगा है जिसके स्नानसे पापोंका नाश हो जाता है ॥ २२ ॥

॥ ज्योतिर्मठ ॥

ततः क्रोशसप्ते पुण्यं ज्योतिर्धाम शुभप्रदम् ॥
नृसिंहरूपी भगवान् यत्रास्ते मुक्तिदायकः ॥ २३ ॥

भाषा-उससे सात कोशपर ज्योतिर्धाम (जोशीमठ) पुण्यको देनेवाला है। जहां मुक्ति के दाता श्रीनृसिंह भगवान स्थित हैं ॥ २३ ॥

यत्र प्रह्लादयोगीन्द्रो हरिभक्तिपरायणः ॥

एतत्तीर्थसमं नास्ति विष्णोः प्रीतिकरं परम् ॥ २४ ॥

भाषा—जहां योगीन्द्र प्रह्लाद हरिभक्तिपरायण हैं। अत्यन्त विष्णु की प्रीति देनेवाले इस तीर्थ के समान कोई तीर्थ नहीं है ॥ २४ ॥

एतत्पीठसमं नास्ति सिद्धिदं सर्वकामदम् ॥

यदस्मिन् क्रियते कर्म तत्सर्वं कोटिसंख्यकम् ॥ २५ ॥

भाषा--सर्व कामना और सिद्धिकी देनेवाली इस पीठके समान कोई पीठ नहीं। यहां जो कर्म किया जाता है उसका करोड गुना फल मिलता है ॥ २२ ॥

तस्मात् सर्वप्रयत्नेन नास्मिन्पापं समाचरेत् ॥

नृसिंहं पूजयेद्भक्त्या यदीच्छेद्विष्णुतां नरः ॥ २६ ॥

भाषा--इस तीर्थ पर किसी प्रकार भी पाप न करे, (क्योंकि पापभी करोडगुणाही होगा) विष्णुपदकी इच्छावाला मनुष्य भक्तिभाव से नृसिंह भगवान्का पूजन करे ॥२६॥

॥ विष्णुप्रयाग ॥

विष्णुप्रयागके स्नात्वा विष्णुलोके महीयते ॥

यत्र ब्रह्मादयो देवाः परां सिद्धिमवाप्नुयुः ॥ २७ ॥

भाषा--विष्णुप्रयाग में स्नान करके मनुष्य विष्णुलोक का वास करता है जहां ब्रह्मादि देवते सिद्धिको प्राप्त हुए थे ॥ २७ ॥

तत्र स्नात्वा जपं कृत्वा नारायणपरायण ॥
नमो नारायणायेति जपेत्प्रणवपूर्वकम् ॥ २८ ॥

भाषा--वहां स्नान करके तथा जप करने से नारायण में परायण होके ओंकारपूर्वक "ॐ नमोनारायणाय" अष्टाक्षर मन्त्र का जप करे ॥ २८ ॥

ततो गच्छेन्महाभागे बदर्याश्रममण्डले ॥
जयं च विजयं चैव संपूज्य द्वारपालकौ ॥ २९

भाषा--जय विजय द्वारपालोंका पूजन करके बद्रिकाश्रममण्डल में प्रवेश करे ॥२६ ॥

॥ सूक्ष्मक्षेत्र ॥

अतः परं परं स्थानं देवानामपि दुर्लभम् ॥
सूक्ष्मक्षेत्रामिति प्रोक्तं सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ३० ।

भाषा–इसके आगे देवताओं को भी दुर्लभ परमस्थान है यह सूक्ष्म बद्रीक्षेत्र कहा है । यह सत्य है, कुछ सन्देह नहीं ॥ ३० ॥

॥ कलियुग में बद्रीवन अगम्य हो जाता है ॥

इदं विष्णुप्रयागाख्यं द्वारं विष्णोः प्रकीर्तितम् ॥
प्रायः कलौ मनुष्याणामगम्या बदरी भवेत् ॥ ३१ ॥

भाषा–यह विष्णुप्रयाग विष्णु का द्वार है, प्रायः मनुष्यों को बद्रिकाश्रम कलियुग में अगम्य हो जाता है ॥ ३१ ॥

यावद्विष्णुर्महीपृष्ठे यावद्गंगा महेश्वरि ॥
तावद्वै बदरी गम्या दुर्गम्या च ततः परम् ॥ ३२ ॥

भाषा–हे महेश्वरि ! पृथ्वीपर विष्णु और गंगा जबतक विराजते हैं तभीतक बदरिकाश्रम गम्य है, फिर वह अगम्य हो जायगा ॥ ३२ ॥

॥ पांडुकेश्वर ॥

पाण्डुना च तपस्तप्तं शप्तेन मृगरूपिणा ॥
मुनिना परकोपेन पाण्डुस्थानं ततः स्मृतम् ॥ ३३ ॥

भाषा--वहां मृगरूपी मुनिसे शापित हुए पाण्डुने तप किया था इसी कारण से इस स्थान का नाम पांडुकेश्वर हुआ। पांडुने भ्रमसे एक मृगके बाण मारा, वह मुनि मृगरूपसे रति करता था, उस मुनिरूपी मृगने मरते समय शाप दिया कि तुमभी अपनी स्त्रीसे रति करते ही मृतक हो जाओगे ॥ ३३ ॥

प्रसन्नो भगवानाह पांडुं परमसुन्दरम् ॥
भो भोः पाण्डो तव क्षेत्रे धर्मादीनां सुताः किल ॥३४॥

भाषा--परम सुन्दर पांडु से प्रसन्न हुए भगवान् बोले। हे पांडो! तुम्हारे क्षेत्रमें निश्चय धर्मादिकों से पुत्र उत्पन्न होवेंगे ॥ ३४ ॥

भविष्यन्ति सुतात्मानः सर्वे शास्त्रार्थपारगाः ॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य विष्णोश्च परमात्मनः ॥ ३५ ॥

भाषा--वे सब पुत्र आत्मवान् तथा शास्त्रार्थ के पारगामी होंगे, इस प्रकार परमात्मा भगवान् विष्णुके वचन सुनके ॥ ३५ ॥

कृतकृत्यं स्वयं मेने दर्शनादेव सुन्दरि ॥

पंधिश्वरो महादेवो भक्तानां प्रीतिवर्द्धनः ॥ ३६ ॥

भाषा--हे सुन्दरी ! दर्शनमात्रसे वह राजा अपनेको कृतकृत्य समझा । और वहां पंधिश्वर महादेव हैं ॥ ३६ ॥

॥ नरनारायणपर्वतस्थित तीर्थ ॥

गङ्गाया दक्षिणे पार्श्वे पर्वते नरनामके ।
तीर्थानां च सहस्राणि लिङ्गानां च शतानि वै ॥ ३७ ॥

भाषा--गंगाजीके दक्षिण ओर नरनामक कैलास है वहां हजारों तीर्थ और सैकड़ों शिवलिंग हैं ॥ ३७ ॥

अगम्यानि कानिचिद्वै तथा गम्यानि च प्रिये ॥
तस्मिन्वै पर्वते नित्यं देवाः सर्वे महर्षिभिः ॥ ३८ ॥

भाषा--हे सुन्दरी ! कुछ तीर्थ वहां गम्य तथा कुछ अगम्य हैं उस नरनाम पर्वतपर सदैव सब देवते और महर्षि ॥ ३८ ॥

गायन्ति विष्णुमेकाग्रमनोभिर्वचसा गुणैः ॥

मृदंगध्वनिघोषो वै भेरीशब्दाः सहस्रशः ॥ ३९ ॥

भाषा--मन और वाणी से एकाग्र हो विष्णुका यश गायन करते हैं। मृदंग और भेरी के हजारों शब्द सुनाई देते हैं ॥ ३६ ॥

श्रूयन्ते पुण्यनिलयाः सामगानां तथा स्वनाः ।
तस्मिन् गिरौ हि वर्तन्ते पुण्यान्यायतनानि च ॥ ४० ॥

भाषा--वहां पुण्यात्मा लोग सामवेद के दिव्य स्वर श्रवण करते हैं वहां परम पुण्य-दायक स्थान हैं ॥ ४० ॥

तप्तोदकानि बहुशः शीततोया जलाशयाः ॥
सर्वे पुण्याः समारंभा विष्णुभक्तिकरास्तथा ॥ ४१ ॥

भाषा--वहां बहुत से गरम जल के तथा शीतजल के सरोवर हैं वे पुण्य के बढ़ाने-वाले तथा विष्णुभक्ति के देनेवाले हैं ॥ ४१ ॥

उत्तरे पर्वते देवि तथा दिव्या महर्षयः ॥
सिद्धा गुह्यास्तथा नागास्तथैवाप्सरसां गणाः ॥ ४२ ॥

भाषा--हे देवि ! उस पर्वतके तथा गंगाजी के उत्तर पर्वत (नारायणनाम) में महर्षि, सिद्ध, गुह्य, नाग, तथा अप्सराओं के समूह ॥ ४२ ॥

नृत्यन्ति गायमानाश्च विष्णुं सर्वेश्वरेश्वरम् ॥
नदीनामुत्तमा तत्र धारा परमपावना ॥ ४३ ॥

भाषा--नृत्य करते हैं तथा सर्वेश्वर भगवान् विष्णुका यश गान करते हैं और वहां गंगाजीकी परम पवित्र धारा हैं ॥ ४३ ॥

॥ बिन्दुमतीगंगा ॥

गङ्गाया अष्टमी ज्ञेया नाम्ना बिन्दुमती मता ॥
निःसृता बिन्दुसरसो महापापौघनाशिनी ॥ ४४ ॥

भाषा--यह बिन्दुमती गंगाजीकी आठवीं धारा है। बड़े पापसमूहों को नाश करनेवाली है। बिन्दुसरोवर से निकलने से बिन्दुमती कहाती है ॥ ४४ ॥

दर्शनादेव यस्या वै महापापौघनाशनम् ॥
जायते किमु स्नानाद्यैः सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ४५ ॥

भाषा-जिसके दर्शनमात्र से महापाप समूह का नाश होता है, उसके स्नान करनेसे जाने क्या महान् फल मिलेगा ? इसमें सन्देह नहीं ॥ ४५ ॥

॥ वैखानसतीर्थ ॥

ततः क्रोशद्वये देवि वैखानसमुनिस्थलम् ॥
यज्ञभूमिस्तथा तत्र तेषां मुनिवरात्मनाम् ॥ ४६ ॥

भाषा--हे देवि ! उसके दो कोश आगे वैखानस मुनिका स्थल है तथा वहींपर मुनि श्रेष्ठों की यज्ञभूमि भी है ॥ ४६ ॥

नदीनां प्रवरा सा वै महापातकनाशिनी ॥
होतृस्थाने मुनीनां तु शृणु प्रत्ययलक्षणम् ॥ ४७ ॥

भाषा--यहांपर नदियों में श्रेष्ठ नदी (घृतगंगा) है, और मुनियों के होतृ (यज्ञ) स्थान विश्वासके लक्षण सुनो ॥ ४७ ॥

अद्यापि तत्प्रदेशे वै यवा दग्धास्तथा तिलाः ॥
अंगाराश्चापि दृश्यन्ते होतृस्थाने महात्मनाम् ॥ ४८ ॥

भाषा-आजपर्यन्त भी प्रत्यक्ष उस स्थानमें जले हुए जौ तिल निकलते हैं तथा अंगारेभी दिखाई देते हैं (जो चाहे देख सक्ता है हनुमान् चट्टी के पास सड़कहीमें यह यज्ञका पहाड़ है) ॥ ४८ ॥

॥ योगीश्वरभैरव ॥

तदूर्ध्वं पर्वते रम्ये देवगन्धर्वसेविते ॥
योगीश्वर इति ख्यातो भैरवोऽतिभयङ्करः ॥ ४९ ॥

भाषा-इसके ऊपर पर्वतमें देव और गन्धर्वों से सेवित मनोहर स्थान है वहां योगीश्वर नामक अतिभयंकर भैरवजी की मूर्ति है ॥ ४६ ॥

तमर्चयित्वा नत्वा च गच्छेत्सूक्ष्मतरे स्थले ।
कुबेरस्य शिलां नत्वा दारिद्र्यं नोपजायते ॥ ५० ॥

भाषा-उनको पूजन तथा दण्डवत् करके सूक्ष्मतर स्थल में पहुँच कुवेरशिला को दण्डवत् करे उनकी पूजा करने से मनुष्य दरिद्री नहीं होता ॥ ५० ॥

स्नात्वा ऋषीणां गंगायां धारायां ये समाहिताः ॥

पानं कुर्वन्ति ते मर्त्या ब्रह्म परमवाप्नुयुः ॥ ५१ ॥

भाषा-जो एकान्तचित्त से ऋषि गंगा का स्नान करके उसका जल पान करते हैं वे मनुष्य परब्रह्म को प्राप्त होते हैं ॥ ५१ ॥

दत्त्वा चाश्रमवासिभ्यो जीर्णानि वसनानि च ॥
गच्छेच्छुद्धे महाक्षेत्रे श्रीमद्बदरिकाश्रमे ॥ ५२ ॥

भाषा-(ऋषि गंगा में स्नान करके) पहिने हुए वस्त्र बदरिकाश्रमवासियों को देकर महाक्षेत्र पुरी में प्रवेश करे ॥ ५२ ॥

॥ कूर्मधारा ॥

आचमेत्कूर्मधारायां जलं परमपावनम् ॥
यदीच्छेत्सुतरां शुद्धिं दर्शने परमात्मनः ॥ ५३ ॥

भाषा-और परम पवित्र कूर्मधारामें आचमन करे। यदि अत्यन्त शुद्धि और परमात्मा के दर्शन की इच्छा होवे ॥ ५३ ॥

इति श्रीकेदारखण्डान्तर्गत श्रीबदरीमाहात्म्ये प्रथमोऽध्यायः ॥ २ ॥

द्वितीयोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

शिव जी से बदरीकाश्रम की महिमा कथन ।

स्कंद उवाच—बदर्य्याख्यं हरेः क्षेत्रं श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः ॥
किं पुण्यं किं फलं तस्य कृपया वद मे पितः ॥ १ ॥

भाषा-स्कन्दजी बोले । बद्रीनाथ नामकरके जो भगवान् विष्णुका क्षेत्र है उसकी महिमा श्रवण किया चाहते हैं । हे पितः ! कृपा करके कहिये, वहाँ किस फलकी प्राप्ति होती है ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच—साधु पृष्टं त्वया वत्स गुहयाद्गुहयं वदामिते ॥
बदर्याख्यं महापुण्यं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ॥ २ ॥

भाषा-श्रीशिवजी कहते हैं । हे कार्तिकेय ! तुमने अच्छा प्रश्न किया है । गोप्यसे

गोप्य महापवित्र तीनों लोकमें दुर्लभ ऐसे बदरीक्षेत्रका महात्म्य तेरे पास कहता हूँ ॥२॥

न काशी न तथा कांची मथुरा न तथा गया ॥
प्रयागश्च तथायोध्या नावंती कुरुजांगलम् ॥ ३ ॥

भाषा–इस तीर्थके तुलय काशी, कांचीपुरी, मथुराजी, गया, प्रयागराज (गंगायमुनाका संगम), अयोध्याजी, अवंतीपुरी और कुरुक्षेत्रभी नहीं है ॥ ३ ॥

क्षेत्रस्य स्मरणादेव महापातकनाशनम् ॥
विमुक्ताः किल्बिषात्सद्यः स्मरणाद्मुक्तिभागिनः ॥ ४ ॥

भाषा–बदरीक्षेत्रके स्मरण करने ही से महापातकों का नाश हो पापों से छूटके उसी कालविषे पुनः स्मरण किये से मनुष्य मुक्तिभागी होता है ॥ ४ ॥

अन्यतीर्थे कृतं येन तपः परमदारुणम् ॥
तद्देशाद्बदरीयात्रा मनसापि प्रजायते ॥ ५ ॥

भाषा–जिसने और तीर्थविषें बड़ा दारुण तप किया होवे और वहीं से बदरीक्षेत्रकी यात्रा मनसे स्मरण कियेसे भी होती है ॥ ५ ॥

बहूनि संति तीर्थानि दिवि भूमौ रमासु च ॥
बदरीसदृशं तीर्थं न भूतं न भविष्यति ॥ ६ ॥

भाषा-स्वर्ग, पृथ्वी, प.तालविषें बहुत तीर्थ हैं परन्तु वदरिकाश्रम के समान कोई तीर्थ न हुआ और न होयगा ॥ ६ ॥

योजनत्रयविस्तारं दीर्घं द्वादशयोजनम् ॥
अगम्यं पापिनां तद्वै महदैश्वर्यदायकम् ॥ ७ ॥

भाषा-जिसकी लंबाई १२ योजन और चौड़ाई ३ योजन है बड़े ऐश्वर्यको देनेवाला है पापियोंको अगम्य तीर्थ है ॥ ७ ॥

॥ चार प्रकार का श्रीबदरीकाश्रम ॥

स्थूलं सूक्ष्मं ततः सूक्ष्मं शुद्धं चेति चतुर्विधम् ॥
बदरीक्षेत्रमाहुर्वै सारूप्यादिप्रदं क्रमात् ॥ ८ ॥

भाषा-स्थूल, सूक्ष्म, विशेष सूक्ष्म और शुद्ध, इस प्रकार सायुज्यादि पदों के क्रमसे बदरीक्षेत्र चार प्रकारका है ॥ ८ ॥

कण्वाश्रमाद्धि षक्ष्यम्बुपर्यन्तं स्थूलमुच्यते ॥
ततो विष्णुप्रयागान्तं सूक्ष्मं विद्धि मुनीश्वर ॥ ९ ॥

भाषा–हे मुनीश्वर! नन्दप्रयाग (कण्वाश्रम) से गरुड़गंगालौं स्थूल तथा वहाँसे विष्णुप्रयागतक सूक्ष्म क्षेत्र है ॥ ९ ॥

आकुबेरशिलं तस्मात्ततः सूक्ष्मं महामुने ॥
ततः सरस्वतीतीरपर्यन्तं शुद्धमुच्यते ॥ १० ॥

भाषा–हे महामुने! विष्णुप्रयाग से कुबेरशिलातक अति सूक्ष्म तथा कुबेरशिलासे (कैलासकी) श्रीसरस्वतीगंगापर्यन्त शुद्ध क्षेत्र है ॥ १० ॥

वासे मृतौ च दानादौ जपहोमार्चनादिषु ॥
शुद्धश्रेष्ठाद्यलाभे तु स्थूलादौ तत्समाचरेत् ॥ ११ ॥

भाषा––जप, होम, अर्चन, दान तथा मुक्ति के लिये आवश्यकता होनेपर जब शुद्धक्षेत्र का अलाभ (जब वहाँ जानेको असमर्थ हो वा ६ मास शीतकाल में जब पुरी अगम्य) हो तो स्थूल (नन्दप्रयाग) बदरिकाश्रममेंही इन कर्मों को करे ॥ ११ ॥

स्थूलादपि महायोगिन् वाराणस्यादिदेशतः ॥
सत्यं शताधिकं पुण्यं नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥

भाषा--हे महायोगिन् नारदजी! यह स्थूलक्षेत्रभी वाराणसी (काशी) आदिक श्रेष्ठ तीर्थों से, सत्य कहते हैं शतगुणा अधिक फल देनेवाला है, इसलिये यहाँ इन कामोके करनेमें कुछ विचार नहीं करना चाहिये ॥ १२ ॥

अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च ॥
कृतानि येन तत्पुंण्यं बदरीस्मणद्भवेत् ॥ १३ ॥

भाषा--हजार अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञ कियेका फल और श्रीबदरीस्मरणमात्र का फल ये दोनों बराबर हैं ॥ १३ ॥

षष्ठिवर्षसहस्राणि वायु भोजनतः फलम् ॥
क्षेत्रांतरे विशालायां तत्फलं क्षणमात्रतः ॥ १४ ॥

भाषा--अन्यतीर्थविषे साठ सहस्र [हजार] वर्षतक वायुभोजन करके तप कियेसे जो फल होता है वही फल विशालामें क्षणमात्रमें मिलता है ॥ १४ ॥

क्रुते मुक्तिप्रदा त्रेतायुगे यागैकसिद्धिदा ॥
विशाला द्वापरे प्रोक्ता कलौ बदरिकाश्रमः ॥ १५ ॥

भाषा--सतयुग, त्रेता, द्वापर में यही बदरिकाश्रम योगसिद्धि देता था, किन्तु अब कलियुग में मुक्ति देता है ॥ १५ ॥

स्थूलं सूक्ष्मं शरीरं तु जीवस्य वसातिस्थलम् ॥
तद्विनाशयति ज्ञानाद्विशाला तेन कथ्यते ॥ १६ ॥

भाषा-जीवात्माके निवास को दो प्रकार के सूक्ष्म और स्थूल शरीर हैं, विशाला उसको कहते हैं जो ज्ञान से इन दोनों शरीरों का नाश करती है ॥ १६ ॥

अमृतस्य स्रवन्तीत्वाद्बदरी न त्वयागतः ॥
बदरी कथ्यते प्राज्ञैर्ऋषीणां यत्र संचयः ॥ १७ ॥

भाषा--ज्ञानी पुरुषों के गमन करने पर अमृत वर्षाती है तब बदरी नाम कही है, इसी करके बुद्धि विशारद ऋषि मुनिगण यहाँ निवास करते हैं ॥ १७ ॥

त्यजेत् सर्वाणि तीर्थानि काले काले युगे युगे ॥
बदरीं भगवान् कृष्णो न मुंचाति कदाचन ॥ १८ ॥

भाषा--समय समयपर युग युग में भगवान् तीर्थों को छोड़ देते हैं किन्तु भगवान श्रीकृष्ण कभी भी श्रीबदरिकाश्रम को नहीं छोड़ते ॥ १८ ॥

सर्वतीर्थावगाहेन तपोयोगसमाधिना ॥
यत्फलं प्राप्यते सम्यक् बदरीदर्शनाद्गुह ॥ १९ ॥

भाषा--हे कार्त्तिकेय ! सब तीर्थों में स्नान करके और तप योग से जो फल प्राप्त होता है, वही फल श्रीबदरीनारायण महाराज के दर्शन मात्रही से मनुष्यों को प्राप्त हो जाता है ॥ १९ ॥

षष्टिवर्षसहस्राणि योगाभ्यासेन यत्फलम् ॥
वाराणस्यां दिनैकेन तत्फलं बदरीं गतः ॥ २० ॥

भाषा--श्री काशीजी में साठ सहस्र 'हजार' बर्ष पर्यंत योगाभ्यास करने से जो फल होता है, वही फल एक दिन में बदरीक्षेत्र में गया हुआ मनुष्य पाता है ॥२०॥

तीर्थानां वसतिर्यत्र देवानां वसतिस्तथा ॥
ऋषीणां वसतिर्यत्र विशाला तेन कथ्यते ॥ २१ ॥

भाषा--सब तीर्थों का व सब देवतों का और ऋषिमुनियों का जहाँ सदैव वास रहता है इसीसे इस भूमिको "विशाला" कहते हैं ॥ २१ ॥

स्कंद उवाच—कथमेतत्समुत्पन्नं कैर्वा क्षेत्रं निषेवितम् ॥
को वा तस्याप्यधीशस्तु ह्येतद्वर्णय मे प्रभो ॥ २२ ॥

भाषा—स्वामी कार्तिकेय कहते भये हे प्रभो ! उसकी उत्पत्ति तथा वहाँ किसने सेवन किया है और श्रीबदरीक्षेत्र का स्वामी कौन है कृपा करके यह सब वर्णन करो ॥ २२ ॥

श्रीशिव उवाच—अनादिसिद्धमेतत्तु तथा वेदा हरेस्तनूः ॥
अधिष्ठाता हरिः साक्षान्नारदाद्यैर्निषेवितम् ॥ २३ ॥

भाषा--श्रीशिवजी कहते हैं । यह क्षेत्र अनादि सिद्ध है, जैसे अनादि वेद श्रीनारायणजी के शरीर है नारदादि ऋषियों ने सेवित किया है तथा साक्षात् भगवान् इस क्षेत्र के स्वामी हैं ॥ २३ ॥

॥ ब्रह्मकपाल की उत्पत्ति ॥

पुराकृतयुगस्यादौ स्वीयां दुहितरं स्वजः ॥
रूपयौवनशुद्धांगीं समाजयितुमुद्यतः ॥ २४ ॥

भाषा—पहिले सतयुग के आदिमें अपनी कन्या को ब्रह्माने रूप यौवन से सम्पन्न देखकर मोहित हो- उससे भोग करने को उद्यत हुआ ॥ २४ ॥

तं दृष्ट्वा तादृशं रोषाच्छिरः खड्गेन पंचधा ॥
छिन्नं च तत्कपालं मे ब्रह्महत्यापनुपत्तये ॥ २५ ॥

भाषा--ब्रह्माको ऐसा नीचकर्म करने को उद्यत देख क्रोध में हमने ब्रह्मा का पाँचवां शिर खड्ग से काट दिया और ब्रह्महत्या के प्रभाव से वह शिर मेरे हाथ में चिपट गया ॥ २५ ॥

हस्ते कृत्वा जगामाहं तत्तत्तीर्थनिषेवया ॥
दिवि भूमौ रसायां च तपश्चरणपूर्वकम् ॥ २६ ॥

भाष--ब्रह्महत्या दूर करने के निमित्त कपाल हाथ में लेकर स्वर्ग, मृत्यु, पाताल सब तीर्थों में तपस्या संयुक्त तीर्थाटन किया ॥ २६ ॥

न गता ब्रह्महत्या तु कपालं तादृशं करे ॥
तदा वैकुण्ठमगमं विष्णुं लक्ष्मीपतिं सुत ॥ २७ ॥

भाषा--ब्रह्महत्या तौ भी न गई ब्रह्मकपाल भी तैसा ही हाथ में रहा । हे सुत ! हे कार्त्तिकेय ! तब मैं श्रीभगवानजी के पास वैकुण्ठ में गया ॥ २७ ॥

विनयावनतो भूत्वा नमस्कृत्वा पुनः पुनः ॥
सर्वमाख्यातवांस्तस्मै व्यसनं करुणात्मने ॥ २८ ॥

भाषा--श्रीभगवानजी को विनयपूर्वक बारंवार नमस्कार करके अपना दुःख दया के समुद्र श्रीनारायण जी से कहा ॥ २८ ॥

तस्योपदिष्टमादाय बदरीं समुपागतः ॥
तत्क्षणाद्ब्रह्महत्या मे वेपमाना पुनः पुनः ॥ २९ ॥

भाषा--श्रीनारायण जी के उपदेश से बदरीबन को आया वहाँ पहुँचते ही उसी मुहूर्त में ब्रह्महत्या बारंबार कांपती हुई छिप गई ॥ २९ ॥

अन्तर्हिता कपालं तु कराद्विगलितं तदा ॥
ततः प्रभृति तत्क्षेत्रे पार्वत्या सह सादरम् ॥ ३० ॥

भाषा--ब्रह्मकपाल भी हाथ से छूट गया, उस दिन से आदरपूर्वक पार्वती के सहित वहाँ रहने लगा ॥ ३० ॥

तिष्ठामि तप आस्थाय ऋषीणां प्रतिमावहन् ॥
वाराणस्यां यथा प्रीतिः केदारेऽतीव मे स्थितिः ॥ ३१ ॥

भाषा--ऋषियों को प्रसन्न करता हुआ तपस्या में बैठे, काशीजी और जैसे मेरा अत्यन्त प्रीतिका रहने का स्थान केदार है ॥ ३१ ॥

कैलासे गिरिजासार्द्धं ततोनंतगुणाधिका ॥
बदरीतरूणां या वै मण्डिता पुण्यगा स्थली ॥ ३२ ॥

भाषा--कैलास विषे जैसी प्रीति पार्वती से है, इन तीर्थों से भी अनन्त गुणा अधिक

प्रीति मेरी बेर के वृक्ष से शोभायमान पुण्यस्थान बद्रीपुरी पर है ॥ ३२ ॥

अन्यत्र मरणान्मुक्तिः स्वधर्मविधिपूर्वकम् ॥
बदरीदर्शनादेव मुक्तिः पुंसां करे स्थिता ॥ ३३ ॥

भाषा--अन्य तीर्थों विषें विधिपूर्वक अपने धर्म करते हुए मनुष्यों को जो मुक्ति मिलती है, वही मुक्ति बद्रीक्षेत्र के दर्शन मात्र से मनुष्य के हाथ में स्थित रहती है ॥३३॥

॥ बदरीपुरी में केदारलिंग ॥

हरेश्चरणसान्निध्यं यत्र वैश्वानरः स्वयम् ॥
तत्र केदाररूपेण मम लिंगं प्रतिष्ठितम् ॥ ३४ ॥

भाषा--श्रीनारायण जी के चरणारविन्दों के सांनिध्य जहाँ अग्नि स्वयं है तहाँ केदार के रूप करके मेरा लिंग विराजमान है ॥ ३४ ॥

केदारदर्शनात् स्पर्शादर्चनाद्भक्तिभावतः ॥
कोटिजन्मकृतं पापं भस्मीभवति तत्क्षणात् ॥ ३५ ॥

भाषा--श्रीकेदारनाथ जी के दर्शन, स्पर्श अर्चन करने से और भक्ति-भाव सहित पूजन करने से कोटि जन्मों का किया पाप भी उसी क्षण भस्म होता है ॥ ३५ ॥

कलामात्रेण तिष्ठामि तत्र क्षेत्रे विशेषतः ॥
कला पंचदशी चात्र मूर्तिमत्येव तिष्ठति ॥ ३६ ॥

भाषा--बदरीक्षेत्रविषें मैं विशेष कलामात्र करके बैठा हुआ हूँ इस कैलास विषें मूर्त्तिमान मेरी पन्द्रह कला रहती हैं ॥ ३६ ॥

जितकृतांतभयाः शिवयोगिनः कृतमृगार्दनकृत्तिसुवाससः ॥
वरविभूतिजटाकृतभूषणाः स्वयमुपासत एव जटाधरम् ॥ ३७ ॥

भाषा--धर्मराज का भय जिन्होंने जीता है, सिंहके चर्मका जिन्होंने सुन्दर वस्त्र किया है विभूति और जटा जिनके श्रेष्ट भूषण हैं ऐसे ऋषभ वामदेवादिक शिवयोगी स्वयं मेरे स्वरूप को बदरी में उपासना करते हैं ॥ ३७ ॥

देशेऽग्निवत्परिभ्राजद्भगवच्चरणांतिके ॥
केदाराख्यं महालिंगं दृष्ट्वा नो जन्मभाग्भवेत् ॥ ३८ ॥

भाषा--अग्नि के समान देदीप्यमान जो श्रीनारायण जी के चरण हैं उनके निकट केदारनाम जो हमारा लिंग है मनुष्य उसके दर्शन करके पुनः जन्म मरण नहीं पाता है ॥ ३८ ॥

॥ केदारमाहात्म्य ॥

(सनत्कुमारसंहितान्तरगंत)

॥ श्रीसनत्कुमार उवाच ॥

केदारस्य शिवस्यात्र वक्ष्ये संक्षेपतो मुने ॥
माहात्म्यं शृणु तत्त्वेन लोकानां हितकाम्यया ॥ ३९ ॥

भाषा--श्रीसनत्कुमार जी बोले । हे मुने ! केदारनाथ नाम से जो शिव हैं उनका माहात्म्य लोकों के हित निमित्त आपसे कहते हैं सावधारण होकर श्रवण करो ॥ ३९ ॥

उमया सहितः शंभुरत्र सन्निहितः सदा ॥
दर्शनात्प्रणिपाताच्च प्रसीदति झटित्यसौ ॥ ४० ॥

भाषा--इस पुण्य क्षेत्र में पार्वती जी सहित शिव जी सदैव निवास करते हैं यहाँ उनको सेवन नमस्कार और दर्शन किये से शिव जी महाराज तत्काल प्रसन्न होते हैं ॥ ४० ॥

तस्य प्रसादाद्वासः स्यात्क्षेत्रऽस्मिन्विष्णुवल्लभे ॥
निर्विघ्नो नित्यदा नृणां भक्तिश्च बदरीपतौ ॥ ४१ ॥

भाषा--यह जो विष्णु प्रिय क्षेत्र है इसमें श्रीमहादेव जी की कृपा से वास होता है और निर्विघ्नपूर्वक मनुष्यों की भक्ति श्रीबदरीनारायण के चरणारविंदों विषें प्राप्त होती है ॥ ४१ ॥

केदारेश्वरभक्त्यादिहीनो न बदरीपतेः ॥
पुष्कलां प्रीतिमाप्नोति भक्तिं वा तत्पदाम्बुजे ॥ ४२ ॥

भाषा--श्रीकेदारेश्वर शिवजी की भक्ति से जो पुरुष हीन हैं वे बदरीपति की (पुष्कल) अति प्रसन्नता की प्रीति है तिसको नहीं पा सकते हैं और उनके चरण-कमलों की भक्ति को प्राप्त नहीं होते ॥ ४२ ॥

बदरीश्वर एवात्र केदारेश्वररूपतः ॥
वर्तते नारद श्रीमान्नात्र कार्या विचारणा ॥ ४३ ॥

भाषा-इस बदरीक्षेत्रके विषें श्रीबदरी नारायणही केदारेश्वर रूप होकर विराजमान हैं श्रीमानों ने विचार नहीं करना ॥ ४३ ॥

॥ तप्तकुण्डकी उत्पत्ति ॥

स्कन्द उवाच—कथं वैश्वानरः श्रीमान् सर्वलोकैककारणम् ॥
बदरीमनुसंतस्थौ तन्मे वद महामते ॥४४॥

भाषा-श्रीस्वामी कार्तिकेय पूछते हैं हे महामते! श्रीमान् अग्नि जो सब लोगोंका एक कारण है वह बदरीक्षेत्रमें किस कारण प्राप्त हुआ वह कहिये ॥४४॥

शिव उवाच—पुरा समाजः समभूदृषीणामूर्ध्वरेतसाम् ॥
गंगा भगवती यत्र कालिंद्या सह संगता ॥४५॥

भाषा-शिवजी बोले। जहांपर गंगा यमुनासे मिली तहां अर्थात् प्रयागमें पहिले जितेंद्रिय मुनियों की सभा हुई थी ॥ ४५ ॥

दशाश्वमेधिकं नाम तीर्थं त्रैलोक्यदुर्लभम् ॥
तत्राबभूव भगवान् हुतभुक्प्रश्रयानतः ॥४६॥

भाषा-तीन लोकविषें दुर्लभ दशाश्वमेधिक जो तीर्थ प्रयागराजमें हैं वहां भगवान् अग्नि नम्रतापूर्वक विनय करता भया ॥ ४६ ॥

ऋषीणामग्रतः स्थित्वा प्रष्टं समुपचक्रमे ॥
कियन्मानं तु तत्क्षेत्रं किं फलं तत्र जायते ॥४७॥

भाषा-सभामें ऋषियों के आगे बोले श्रीबदरीक्षेत्र का कितना प्रमाण और वहां क्या फल प्राप्त होता है ॥ ४७ ॥

अग्निरुवाच-दृष्टादृष्टैकदृग्ज्ञाना भवंतो ब्रह्मवित्तमाः ॥
दीनार्थकरुणापूर्णहृदया हि दयालवः ॥४८॥

भाषा-अग्नि बोला । जिनका ज्ञान सब स्थानोंमें एकसा है, ऐसे ब्रह्म जाननेवालों विषेभी आपही श्रेष्ठ हैं, मैंने बड़े भाग्य से देखे हो आप सरीखे दयावान् दुर्बलोंके निमित्त कृपासे पूर्ण चित्त हैं ॥ ४८ ॥

सर्वभक्षसमुद्भूतपातकालिप्ततेजसः ॥
कथं स्यान्निरयान्मोक्षो मम ब्रह्मविदुत्तमाः ॥४९॥

भाषा—हे मुनयः ! (भृगुके शाप से) सर्व भक्ष भक्ष भक्षण करने से उत्पन्न हुआ जो पातक है तिस करके मेरा तेज नष्ट हो गया है मेरा इस दुःख से छूटना कैसे होगा ? ॥ ४९ ॥

सर्वेषामृषिवर्य्याणामाज्ञया बादरायणः ॥
गंगांभसि समाप्लुत्य वाक्यं चेदमुवाच ह ॥५०॥

भाषा—अग्निके वचन सुनकरके सब ऋषियोंकी आज्ञा से श्रीव्यासदेवजी गंगामें स्नान करके यह वचन बोले ॥ ५० ॥

व्यास उवाच—अस्त्येकः परमोपायो भवतः पापनिष्कृतौ ॥
सर्वभक्षकृतः पुंसो बदरी शरणं महत् ॥५१॥

भाषा—श्रीव्यासदेवजी अग्निको कहते हैं। तुम्हारे पापके प्रायश्चित्त में एक परम उपाय है वह सब भक्षण करनेवालेको उत्तम शरण श्री बदरी क्षेत्रही है ॥ ५१ ॥

यत्रास्ते भगवान् साक्षाद्देवदेवो जनार्दनः ॥
भक्तानामप्यभक्तानामघहा मधुसूदनः ॥५२॥

भाषा--जिस बदरीक्षेत्रमें देवतोंके देवता, मधुदैत्यके मारनेवाले, साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण भक्तों ही का नहीं वरन भक्ति न करनेवालेका भी पाप दूर करनेवाले बैठे हैं ॥ ५२ ॥

तत्र गंगांभसि स्नात्वा विष्णोः कृत्वा परिक्रमाम् ॥
दंडवत्प्रणिपातेन सर्वपापक्षयो भवेत् ॥५३॥

भाषा-श्रीबदरीक्षेत्रमें अलकनन्दाजीके जलविषें स्नान करके श्रीनारायणजीके परिक्रमा साष्टांग प्रमाण करनेसे सब पापोंका क्षय होता है ॥ ५३ ॥

ततो व्यासमुखाच्छ्रुत्वा ऋषीणामनुवादतः ॥
उत्तराभिमुखो वह्निर्गंधमादनमाययौ ॥५४॥

भाषा-तब श्री व्यासदेव के मुख से वचन सुनकर उत्तर दिशा के सन्मुख हो अग्नि देवता गंधमादनको आता भया ॥ ५४ ॥

ततो बाद्रिकां प्राप्य स्नात्वा गंगांभासि स्वयम् ॥
नारायणाश्रमं गत्वा नत्वा प्रोवाच भक्तिमान् ॥५५॥

भाषा–तब बदरीक्षेत्रको पायके अग्निदेवता श्रीअलकनन्दाजी में स्नान करके श्रीनारायणजीके आश्रमको प्रवेश कर भक्तियुक्त नमस्कार कर कहता भया ॥ ५५ ॥

इति प्रसन्नो भगवान् स्तुतः सर्वहृदि स्थितः ॥
प्रोवाच मधुरं वत्स पावकं पावनार्थिनम् ॥५६॥

भाषा–हे वत्स ! सबके हृदयमें स्थित श्रीभगवान् इस तरह स्तुति सुनकर प्रसन्न होके पवित्र होने की इच्छा करनेवाले अग्निको मधुर वचनों से बोले ॥ ५६ ॥

श्रीभगवानुवाच–वरं वरय भद्रंते वरदोहमुपागतः ॥
स्तवेनानेन तुष्टोहं विनयेन तवानघ ॥५७॥

भाषा–श्रीभगवान बोले हे अनघ ! तुम्हारा कल्याण होवे । वर को मांगो मैं वर

देनेवाला तुम्हारे निकट आया हूँ, तुम्हारी स्तुति सुन और तुम्हारी नम्रता से प्रसन्न हूँ ॥ ५७ ॥

अग्निरुवाच-ज्ञातं भगवता सर्वं यदर्थमिह चागतः ॥
तथापि कथयाम्येतदीश्वराज्ञानुपालनम् ॥५८॥

भाषा-अग्नि बोले । जिस अर्थ मैं यहां आया हूँ वह आप जानते हैं तौभी आपकी आज्ञा पालन करता हूँ ॥ ५८ ॥

सर्वभक्षणजाघौघविनिवृत्तिः कथं भवेत् ॥
अत्यन्तभयसंपात्तिरेतस्माज्जायते मम ॥५९॥

भाषा-सर्व भक्षण करनेसे उत्पन्न हुआ जो पापका समूह तिससे किस तरह मेरी निवृत्ति होवे ? इस पातक से मुझको अत्यन्त भय होता है ॥ ५९ ॥

श्रीभगवानुवाच—क्षेत्रदर्शनमात्रेण प्राणिनां नास्ति पातकम् ॥
मत्प्रसादात्पातकं तु त्वयि मास्तु कदाचन ॥६०॥

भाषा—श्रीभगवान्‌जी बोले इस क्षेत्र के दर्शनमात्र ही से प्राणियों को पाप नहीं रहता मेरे प्रसन्न होने से तो तुमारे विषे कदाचित्‌भी पातक स्थित नहीं रहेगा ॥ ६० ॥

ततः प्रभृति पूतात्मा पावकः सर्वतो दिशम् ॥
कलयावस्थितश्चात्र द्रवत्वेनावतिष्ठते ॥६१॥

भाषा—उस दिवससे अग्निदेवता पवित्र स्वरूप होकर सब दिशाओं में प्रवेश करता भया और श्रीवदरीक्षेमेंत्र भी अपनी कलाको स्थापन कर तप्तजलके रूपसे स्थित है ॥ ६१ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखण्डे शिवकार्तिकेय सम्बादे
बदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ २ ॥

तृतीयाध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ तप्तकुण्डमाहात्म्यम् ॥

भगवन् भूतभव्येश सर्वधर्मविशारद ॥
अग्नितीर्थस्य माहात्म्यं कृपया वद मे पितः ॥१॥

भाषा—श्रीस्वामी कार्तिकेय पूछते हैं। आप भूत भविष्यत् वर्त्तमान के स्वामी सब धर्मों के विषें प्रवीण हो, हे पिताजी! कृपा करके मेरे पास अग्नितीर्थ का माहात्म्य कहो ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच—अतिगुह्यमिदं तीर्थं सर्वतीर्थेषु देहिनाम् ॥
संक्षेपात् कथयाम्येतत्त्वादरवशादहम् ॥२॥

भाषा—श्री महादेवजी कहते भये। सब तीर्थों विषे यह अग्नितीर्थ प्राणियों का अति गुप्त है इसका माहात्म्य तुम्हारी प्रीति के वश से कहता हूँ ॥ २ ॥

महापातकिनो ये च अतिपातकिनस्तथा ॥
स्नानमात्रेण शुद्ध्यंति विनायासेन पुत्रक ॥३॥

भाषा—बड़े पातक करनेवाले, ऐसे ही नित्य पातक करने वाली भी पुरुष विना परिश्रम ही स्नान करने से हे पुत्र! वे प्राणी शुद्ध हो जाते हैं ॥ ३ ॥

प्रायश्चित्तेन यत्पापं न गच्छेन्मरणांतकम् ॥
स्नानमात्रेण तीर्थस्य पातकं तद्विशुद्ध्यति ॥४॥

भाषा—जो पाप प्रायश्चित्त से मरणपर्यंत दूर नहीं होते हैं वह पाप अग्नि तीर्थ के स्नान करने से ही शुद्ध हो जाते हैं ॥ ४ ॥

अत्यन्तमलसंबंधाद्यथा शुद्ध्यति हाटकम् ॥
तथाग्नितीर्थस्नपनाद्देही पापैर्विमुच्यते ॥५॥

भाषा—जैसे अग्नि में अत्यन्त ज्यादे मैल फूंक जाने से सुवर्ण शुद्ध होता है ऐसे वह पुरुष अग्नितीर्थ (तप्तकुण्ड) विषे स्नान करने से सब पापों से छूट जाता है ॥ ५ ॥

नीरबिन्दुं कुशाग्रेण पीत्वा वर्षत्रयं जनः ॥
अन्यक्षेत्रे तपः कृत्वा तदत्र स्नानमात्रतः ॥६॥

भाषा-अन्य क्षेत्र के विषे मनुष्य को तीन वर्ष तक कुश के अग्रभाग के जल के बून्द को पीकर के तप करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल यहाँ स्नान मात्रही से प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

ब्राह्मणान्भोजयित्वास्मिन् यथाविभसंभवैः ॥
दरिद्रता कुले तेषां न कदाचित् प्रजायते ॥७॥

भाषा-अपनी सम्पत्ति के अनुसार पैदा किये हुए जो अन्नादि पदार्थ हैं वे ब्राह्मणों को भोजन करवाने वाले पुरुषों के कुल में कभी दरिद्र नहीं होता है ॥ ७ ॥

उपवासेन यः प्राणान् वह्नितीर्थे त्यजेन्नरः ॥
स भित्त्वा सूर्यलोकादीन विष्णुलोके प्रपद्यते ॥८॥

भाषा—जो मनुष्य उपवास करके अग्नितीर्थं (तप्तकुण्ड) में प्राण त्याग करता है वह पुरुष सूर्यादि लोकों को भेदकर विष्णुलोक को प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

चान्द्रायणसहस्रैस्तु कृच्छ्रैः कोटिभिरेव च ॥
यत्फलं लभते मर्त्यस्तत्स्नानाद्वाह्नितीर्थतः ॥९॥

भाषा—सहस्र चान्द्रायण और कोटि कृच्छ्रव्रतों के करने से जो महत्फल मिलता है, वही फल मनुष्यों को तप्तकुण्ड में एक वार के स्नान से मिलता है ॥ ९ ॥

प्रमादाद्यस्तु कुर्वन्ति पापमस्मिन् षडानन ॥
जपेन पवनायामाद्विशुद्धिरिति मे मतिः ॥१०॥

भाषा—हे कार्तिकेय! इस बदरीक्षेत्र में प्रमाद से जो पाप करते हैं, उनकी निर्मलता जब प्राणायाम करने से इस अग्नितीर्थ में हो जाती है यह हमारा सम्मत है ॥ १० ॥

ज्ञानेन मोहवशतः पापं कुर्वंति येऽधमाः ॥
पैशाचीं योनिमायांति यावदिंद्राश्चतुर्दश ॥११॥

भाषा—जो अधम मनुष्य जानकर मोहवश इस क्षेत्र में पाप करते हैं वे अधम चौदह इन्द्रों के राज्य करने तक पिशाचयोनि को प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥

स्नानं दानं जपो होमो ध्यानं देवार्चनं तथा ॥
अत्रानंतगुणं प्रोक्तमन्यतीर्थात्षडानन ॥१२॥

भाषा—स्नान, दान, जप, होम और ध्यान करना तैसे ही देवतों का पूजन करना। हे कार्तिकेय! ये महत्कार्य दूसरे तीर्थों की अपेक्षा इस अग्नितीर्थ में अनन्त गुणा फल देनेवाले होते हैं ॥ १२ ॥

बहूनि संति तीर्थानि पावनानि महांत्यपि ॥
वह्नितीर्थसमं तीर्थं न भूतं न भविष्यति ॥१३॥

भाषा—तीर्थ तो बड़े और बहुत हैं पवित्र करनेवाले हैं परन्तु अग्नितीर्थ के समान कोई दूसरा तीर्थ न हुआ न होयगा ॥ १३ ॥

शिलपंचकमध्यस्थं सान्निध्यं नित्यदा हरेः ॥
तत्रैव पावकं तीर्थं सर्वपापप्रणाशनम् ॥१४॥

भाषा—पांच शिलाओं के बीच में स्थित सर्वदा श्रीनारायण के सान्निध्य सब पापों का नाश करनेवाला यह अग्नितीर्थ अर्थात् तप्तकुण्ड है ॥ १४ ॥

कथितनियमयुक्तो वर्जयन्वर्जनीयान् ।
वसतु नियतचित्तो वह्नितीर्थे महात्मा ॥
उपलनिवहमध्ये पूजयेच्छीबदर्य्या- ।
मनवधिकरुणाब्धिं श्रीमहाविष्णुमाद्यम् ॥१५॥

भाषा—कहे हुए जो नियम हैं तिनको धारण कर वर्जनीय जो नियम हैं उनसे रहित हो एकाग्रचित्त होकर महात्मा पुरुष वह्नितीर्थ (तप्तकुण्ड) विषे वास करे और दयानिधि (दया के समुद्र) श्रीमहाविष्णु का पूजन पंच शिलाओं के भीतर करे ॥ १५ ॥

॥ पंच शिला ॥

स्कंद उवाच-कथं तत्र शिलाः पंच केन वा तत्र निर्मिताः ॥
किं पुण्यं किं फलं तासां वक्तुमर्हसि मे पितः ॥१६॥

भाषा—श्रीकार्तिकेय कहते हैं । हे पिताजी ! उस स्थान में पांच शिला किसने रची हैं इनका क्या माहात्म्य है ? क्या फल है ? मेरे पास कहो ॥ १६ ॥

श्रीशिव उवाच–नारदी नारसिंही च वाराही गारुडी तथा ॥
मार्कण्डेयशिला रम्याः शिलाः सर्वार्थसिद्धिदाः ॥१७॥

भाषा–श्रीशिवजी बोले ! नारदशिला, नृसिंहशिला, वाराहशिला, गरुड़शिला, मार्कण्डेयशिला यह रमणीय पाँचों शिला सब प्रयोजनों की सिद्ध देनेवाली हैं ॥ १७ ॥

॥ नारद शिला ॥

नारदो भगवान् तत्र प्रतेपे परमं तपः ॥
दर्शनार्थं महाविष्णोर्वायुभक्षो जितेन्द्रियः ॥१८

भाहा–अग्नितीर्थ के धोरे भगवान् नारद मुनि वायु भोजन कर जितेन्द्रिय हो श्रीनारायणजी के दर्शनार्थ तप करते भये ॥ १८ ॥

षष्टिवर्षसहस्त्राणि शिलायां वृक्षवृत्तिमान् ॥
तदासौ भगवान् विष्णुर्वृद्धब्राह्मणरूपधृक् ॥१९॥

भाषा–साठ सहस्र वर्ष पर्य्यंत शिला विषें वृक्ष के समान स्थित रहे, तब भगवान् विष्णु वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण करके आये ॥ १९ ॥

जगाम पुरतस्तस्य कृपया मुनिसत्तमम् ॥
उवाच वचनं चारु किमिह क्लिश्यते ऋषे ॥२०॥

भाषा—कृपा करके ऋषियों में श्रेष्ठ नारद मुनि को सुन्दर वचनों से बोले। हे मुनि! आप किस अभिप्राय पर कष्ट कर रहे हो? ॥ २० ॥

किं वा तपसि तद्ब्रूहि तपसा क्षीणकल्मषः ॥
बदरीवासिनो लोका विष्णुतुल्या न संशयः ॥२१॥

भाषा—क्या तपस्या करते हो? मेरे पास कहो। तप करके आपके पातक दूर हो गये हैं। बदरिकाश्रम में वास करने से मनुष्य भी विष्णु तुल्य होते हैं इसमें सन्देह ही नहीं ॥२१॥

नारद उवाच—को भवान् विजनेऽरण्ये ममानुग्रहतत्परः ॥
चेतः प्रसन्नतामेति दर्शनात्ते द्विजोत्तम ॥२२॥

भाषा—नारदमुनि बोले! मनुष्यों करके रहित इस वन में आप कौन हैं? मेरे ऊपर अनुग्रह करना चाहते हो। मैं जानता हूँ कि आप कोई उत्तम ब्राह्मण हो। आपके दर्शन से मेरा चित्त हो रहा है ॥ २२ ॥

इत्युक्तो नारदेनासौ शंखचक्रगदाधरः ॥
पीताम्बरलसत्पद्मवनमालाविभूषणः ॥२३॥

भाषा—नारदमुनि ने जब ऐसा कहा, तब शंख चक्र गदा धारण किये हुए पीताम्बर ओढ़े, कमल के पुष्पों की माला धारण किये ॥ २३ ॥

श्रीवत्सकौस्तुभभ्राजत्कमलाविमलालयः ॥
सुनन्दनन्दप्रमुखैः स्तूयमानो जनार्दनः ॥२४॥

भाषा—दिव्य भृगुलता कौस्तुभमणि कण्ठ में देदीप्यमान होती हुई श्रीलक्ष्मीजी के निर्मल स्थान सहित सुनन्द नन्द मुख्य पार्षद जहाँ स्तुति कर रहे हैं ॥ २४ ॥

दर्शयामास रूपं स्वं नारदाय कृपार्दितः ॥
तं दृष्ट्वा सहसोत्थाय तनुः प्राणमिवागतम् ॥२५॥

भाषा-ऐसे दिव्य रूप से श्रीनारायणजी कृपा करके अपने भक्त नारद को अति आनन्दरूप दर्शाते भये । नारद मुनि साक्षात् त्रिलोकीनाथ को देखकर जैसे प्राण के आ जाने से शरीर उठ बैठता है ऐसे ही अकस्मात् उठे ॥ २५ ॥

कृतांजलिपुटो भूत्वा नमस्कृत्य पुनः पुनः ॥
तुष्टाव प्रणतो भूत्वा जगतामीश्वरेश्वरम् ॥२६॥

भाषा–अंजलि बाँधकर पुनः पुनः (फेर फेर) नमस्कार करते हुए नम्रभाव से नारद-मुनि ईश्वरों के ईश्वर की स्तुति करने लगे ॥ २६ ॥

अद्य मे जीवितं ब्रह्मन्नद्य मे सफलं तपः ॥
अद्य मे सफलं ज्ञानं दर्शनात्ते जनार्दन ॥२७॥

भाषा–हे नारायण ! आपके दर्शन से आज मेरा जीवन सफल हुआ है और ऐसे ही मेरा ज्ञान और तपस्या भी सफल हुई है ॥ २७ ॥

श्रीभगवानुवाच—तुष्टोहं तपसानेन स्तोत्रेण तव नारद ॥
त्वत्तो भक्तो न मे कश्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥२८॥

भाषा–श्रीनारायण बोले । हे नारद ! तुम्हारी तपस्या और स्तुति करने से मैं प्रसन्न हुआ हूँ तीनों लोकविषैं तुम हमारे अद्वितीय भक्त हो ॥ २८ ॥

वरं वरय भद्रं ते वरदोहं तवाग्रतः ॥

मद्दर्शनाप्तकामानां सर्वेषां विद्धि नारद ॥२९॥

भाषा-हे नारद ! तुम्हारा कल्याण हो । मैं तुमको वर देने आया हूँ । समस्त कामनायें मेरे दर्शन ही से प्राप्त होती हैं इसको तुम जानते ही हो ॥ २६ ॥

नारद उवाच-वरदोसि यदा देव वरार्हो यदि चाप्यहम् ॥
भक्तिस्ते चरणांभोज निश्चला देहि मे विभो ॥३०॥

भाषा--नारदमुनि बोले । हे भगवन् ! आप मुझको वर देने आये हो, और मैं भी योग्य हूँ तो यह वर माँगता हूँ कि आपके चरणारविंदों विषें मेरी निश्चल भक्ति होवे ॥३०॥

मच्छिलासन्निधानं च न त्याज्यं ते कदाचन ॥
मत्तीर्थदर्शनात्स्नानात्स्पर्शाद्वाचमनात्तथा ॥
देहैर्न युज्यते देही तृतीयोस्तु वरो मम ॥३१॥

भाषा-मेरी शिला के निकट का वास आप कदाचित् भी न त्यागना और मेरे तीर्थ के दर्शन, स्नान, स्पर्श और आचमन मात्र करने से पुरुष मात्र को फिर देह की प्राप्ति न होवे यह तीसरा वर माँगता हूँ ॥ ३१ ॥

श्रीभगवानुवाच—एवमस्तु तव स्नेहात्तव तीर्थे वसाम्यहम् ॥
चराचराणां जंतूनां कल्याणाय न संशयः ॥३२॥

भाषा—श्रीनारायणजी ने कहा, ऐसा ही होवे, तेरे स्नेह तेरे तीर्थ विषें नित्य वास करूंगा और स्थावर जग में प्राणियों के कल्याण के लिये प्रस्तुत रहा करूंगा ॥ ३२ ॥

एवमुक्त्वा हरिः साक्षात्तत्रैवांतरधीयत ॥
नारदोपि महातेजा दिनैः कतिपयैर्गुह ॥
बदरीमावसन् हृष्टो ययौ मधुपुरीं ततः ॥३३॥

भाषा—इस प्रकार वर देके श्रीभगवान् वहीं पर अन्तर्ध्यान हो गये। हे कार्तिकेय! बड़े तेज धारी नारद मुनि कितने ही दिनों तक वहाँ निवासकर मथुरापुरी को चले गये॥ ३३ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखण्डे शिवकार्तिकेय सम्वादे श्रीबदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः समाप्तः॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ मार्कण्डेयशिला ॥

स्कन्द उवाच-मार्कण्डेयशिलायास्तु महिमानं वदस्व मे ॥
किं पुण्यं किं फलं तस्याः संज्ञा वा तादृशी कथम् ॥१॥

भाषा-स्वामी कार्तिकेय बोले। मार्कण्डेय शिला की महिमा, पुण्य और फल मेरे पास कहो और मार्कण्डेयशिला नाम क्यों हुआ? ॥ १ ॥

श्रीशिव उवाच-पुरा त्रेतायुगस्यांते मृकंडुतनयो महान् ॥
स्वल्पायुषं निजं ज्ञात्वा जजाप परमं जपम् ॥२॥

भाषा-श्रीशिवजी बोले। पहले त्रेता युग के अन्त में मृकंडु ऋषि का पुत्र मार्कण्डेय बड़ा ज्ञानी, अपनी छोटी आयु जानकर परम जप को जपने लगा ॥ २ ॥

द्वादशाक्षरमंत्रेण पूजितो हरिरव्ययः ॥
चिरायुत्वं ददौ तस्य विष्णुरंतर्द्धिमाययौ ॥३॥

भाषा-(ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) यह जो द्वादशाक्षर मंत्र है इससे नारायण जी का पूजन किया तब भगवान् नारायण जी ने मार्कण्डेय ऋषि को बड़ी आयु देकर आप अन्तर्ध्यान हो गये ॥ ३ ॥

मार्कण्डेयस्ततः कृत्वा तीर्थाटनपरिश्रमम् ॥
दर्शनं नारदस्यासन्मिथुरायां षडानन ॥४॥

भाषा-तब मार्कण्डेय ऋषि परिश्रम सहित तीर्थों के घूमने को गये। हे कार्तिकेय! मार्कण्डेय ऋषि को मथुरापुरी में नारद मुनि मिले ॥ ४ ॥

पूजितो वंदितस्तेन नारदो मुनिपुंगवः ॥
कथयामास माहात्म्यं बदर्या यत्र केशवः ॥५॥

भाषा-तब मार्कण्डेय ऋषि मुनियों में श्रेष्ठ नारदजी का पूजन करके नमस्कार कर बोले, जहाँ श्रीनारायण हैं उस बदरिकाश्रम का माहात्म्य कहिये ॥ ५ ॥

नारद उवाच-किमिति क्लिश्यते साधो तीर्थाटनपरिश्रमैः ॥
बदर्याख्यं महातीर्थं सान्निध्यं नित्यदा हरेः ॥६॥

भाषा-नारद मुनि बोले। हे साधो! श्रीबद्रीक्षेत्र में नित्य भगवान् विष्णु वास करते हैं, उसको त्याग के अनेक तीर्थों के भ्रमण करने से क्लेशित क्यों होते हो? ॥ ६ ॥

तत्र गच्छ भवान्साक्षाद्धरिं द्रक्ष्यति चक्षुषा ॥
तच्छ्रुत्वा विस्मयापन्नो विशालामाययावृषिः ॥७॥

भाषा-वहीं बदरिकाश्रम को जाओ। वहाँ श्रीभगवान जी को तुम अपने नेत्रों से से देखोगे। नारदजी का वचन सुन के आश्चर्य मानता हुआ मार्कण्डेय ऋषि बदरी को आया ॥ ७ ॥

स्नात्वा शिलोपविष्टः सन् जजापाष्टाक्षरं मुनिः ॥
बदरीनायकप्रीतिमिच्छन्सद्भक्तिपूर्वकम् ॥ ८ ॥

भाषा-स्नान करके शिला में बैठ मुनि "ॐ नमो नारायणाय" अष्टाक्षर मंत्र को जपते हुए भक्ति-पूर्वक श्रीबदरीनारायण पर प्रीति लगाये वहाँ स्थित हुए ॥ ८ ॥

ततः प्रसन्नो भगवांस्त्रिरात्र्यंते जनार्दनः ॥
शंखचक्रगदापद्मवनमालाविभूषितः ॥९॥

भाषा—तब तीन रात्रि के अन्त में श्रीभगवान प्रसन्न हो शंख, चक्र, गदा, पद्म, वन-माला करके भूषित (शोभायमान) प्रकट हुए ॥ ९ ॥

तं दृष्ट्वा सहसोत्तस्थौ प्रेमगद्गदया गिरा ॥
तुष्टाव प्रणतो भूत्वा मार्कण्डेयो जनार्दनम् ॥१०॥

भाषा—श्री नारायण जी को देख और मार्कण्डेय शीघ्र उठे प्रेम से गद्गद हो श्रीनारायण जी की स्तुति करने लगे ॥ १० ॥

एवं स्तुतिं ततः कृत्वा मार्कण्डेयेन धीमता ॥
प्रीतस्तमाह विप्रर्षे वरं मे व्रियतामिति ॥११॥

भाषा—इस प्रकार बुद्धिमान् मार्कण्डेय ऋषि ने स्तुति करके श्रीनारायण जी को प्रसन्न किया। भगवान् कहते भये। हे मार्कण्डेय ! मैं प्रसन्न हूँ वर माँगो ॥ ११ ॥

मार्कण्डेय उवाच—यदि तुष्टो भवान् मह्यं भगवान् दीनवत्सलः ॥
निश्चला त्वयिमे भक्तिः पूजायां दर्शनं तथा ॥१२॥

भाषा–मार्कण्डेय । हे दीनवत्सल ! जो आप मेरे ऊपर प्रसन्न हुए हो तो आपके पूजा तथा दर्शन पर मेरी भक्ति अचल रहे ॥ १२ ॥

शिलायां तव सान्निध्यमेवमेष वृतो मया ॥
मत्तीर्थदर्शनात्स्नानात्स्पर्शाद्वाचमनात्तथा ॥१३॥

भाषा–और मेरी शिला में आपका वास होवे तथा इस तीर्थ के दर्शन स्नान, स्पर्श और आचमन करने से प्राणियों को भक्ति हो ॥ १३ ॥

सूत उवाच–तथेत्युक्त्वा महाविष्णुर्ययावंतर्हितो द्विजः ॥
मार्कण्डेयस्तु संतुष्टो जगाम पितुराश्रमम् ॥१४॥

भाषा–(सूतजी नैमिषारण्य विषें कहते हैं) हे मुनियो ! ऐसा ही वर देकर श्रीनारायण जी अन्तर्ध्यान हो गये, और मार्कण्डेय प्रसन्न हो अपने पिता के आश्रम को चले गये ॥ १४ ॥

॥ वैनतेयशिला ॥

स्कंद उवाच—वैनतेयशिलायास्तु माहात्म्यं वद मे पितः ॥
किं पुण्यं किं फलं तस्या अनुभावं च किं भवेत् ॥१५॥

भाषा-स्वामी कार्तिकेय पूछते हैं। हे पिताजी ! गरुड़शिला का माहात्म्य व फल और पुण्य क्या है ? कृपा करके मेरे से कहो ॥ १५ ॥

श्रीशिव उवाच-कश्यपाद्विनतागर्भौ महाबलपराक्रमौ ॥
गरुडारुणौ प्रजायेतामरुणः सूर्य्यसारथिः ॥१६॥

भाषा—श्रीशिवजी बोले। बड़े बल व तेजवाले कश्यप प्रजापति से विनता के गर्भ में गरुड़ और अरुण दो पुत्र उत्पन्न हुए अरुण तो सूर्य के सारथि हुए ॥ १६ ॥

बदर्य्यां दक्षिणे भागे गंधमादनशृंगके ॥
गरुडस्तप आतेपे हरिवाहनकाम्यया ॥१७॥

भाषा और गरुड़जी भगवान् श्रीनारायण जी के वाहन होने की कामना से श्रीबदरिकाश्रम के दक्षिण और गन्धमादन के शृङ्ग में तपस्या करने लगे ॥ १७ ॥

फलमूलजलाहारी निर्द्वन्द्वस्तपतत्परः ॥
पदैकेनोपसंगम्य भुवं तस्थौ निरामयः ॥१८॥

भाषा–फल, जल और जड़ इनको भोजन करता हुआ निर्द्वन्द तपस्या विषें तत्पर एक चरण से पृथ्वीं पर खड़ा रहा ॥ १८ ॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि हरिदर्शनलालसः ॥
ततस्तु भगवान्साक्षात्पीतवासा निजायुधः ॥१९॥

भाषा–तीस सहस्र वर्ष तक श्रीनारायण जी के दर्शनों की अभिलाषा लगाये रहे। तब श्री भगवान् नारायण पीताम्बर धारण किये शंख, चक्र, गदा, और पद्म लिये ।१९।

आविरासीद्यथा प्राच्यां दिशींदुरिव पुष्कलः ॥
उवाच वचनं सम्यङ्मेघगंभीरनिस्वनः ॥२०॥

भाषा–ऐसे प्रकट हुए जैसे पूर्व दिशा में पूर्ण कला सहित चन्द्रमा प्रगट होता है। मेघ के समान गम्भीर वाणी से बोले ॥ २० ॥

तथापि न बहिर्वृत्तिर्दध्मौ दरवरं हरिः ॥
तथापि न बहिर्वृत्तिर्गरुडस्य महात्मनः ॥२१॥

भाषा—गरुड़ ने बाहर दृष्टि नहीं की तब भगवान् ने पांचजन्य शंख को बजाया तौभी महात्मा गरुड़ की चित्तवृत्ति बाहर न हुई ॥ २१ ॥

ततः प्रविश्य भगवानंतरं पवनक्रमात ॥
बहिरुन्मुखतां चेत उन्नीय बहिरायभौ ॥२२॥

भाषा—तब श्रीभगवान् जो वायु के क्रम से गरुड़ के भीतर प्रवेश करके उनके चित्त को बाहर कर आप भी बाहर आय शोभते भये ॥ २२ ॥

भगवंतं हरिं दृष्ट्वा गरुडो गतसाध्वसः ॥
पुलकांकितसर्वांगस्तुष्टाव विहितांजलिः ॥२३॥

भाषा—भगवान् श्रीनारायण जी को देख के जिसका भय जाता रहा सब अंगों विषें रोमांच से हर्षायमान चिन्ह विदित होने लगे। ऐसा गरुड़ स्तुति करने को अंजलि बांध तत्पर हुआ ॥ २३ ॥

एवं स्तुतस्ततः साक्षाद्गरुडेन महात्मना ॥
पूजार्थमाजुहावैनां गंगां त्रिपथगामिनीम् ॥२४॥

भाषा—इस प्रकार महात्मा गरुड़ ने श्रीनारायण जी की स्तुति की और भगवान् की पूजा के हेतु तीन पंथ से गमन करनेवाली गंगाजी को आवाहन किया ॥ २४ ॥

ततः पंचमुखी साक्षादाविरासीन्नगोपरि ॥
तेनोदकेन पादार्घं चकार विनतासुतः ॥२५॥

भाषा—तिनके उपरांत गंगा जी पर्वत के शिखर से पांच मुखी प्रगट हुई। गंगाजल से विनता का पुत्र महात्मा गरुड़ श्रीनारायण जी के चरणों को अर्घ देता भया ॥२५॥

व्रियतां वर इत्युक्तो गरुडो हरिणा ततः ॥
ततैकवाहनं श्रीमान् बलवीर्यपराक्रमैः ॥२६॥

भाषा—श्रीनारायण जी महात्मा गरुड़ से बोले तुम वर माँगो। गरुड़ ने कहा। बड़ी कान्तिवाला बल, तेज सहित मैं आपका वाहन होऊँ॥ २६ ॥

अजेयो देवदैत्यानां स्यामहं ते प्रसादतः ॥
इयं मन्नामविख्याता सर्वपापहरा शुभा ॥२७॥

भाषा—आपके प्रसाद से देवता और दैत्यों से अजीत होऊँ और यह गंगा सब पापों की नाश करनेवाली मेरे नाम से (गरुड़गंगा) विख्यात होवे ॥ २७ ॥

गङ्गायाःस्मरणात्पुंसां विषव्याधिर्न जायते ॥
यस्तां नमति भक्त्या वै तस्य पापक्षयो भवेत् ॥२८॥

भाषा—और गरुड़गंगा के स्मरण करनेवालों को सर्प के विष का भय न हो। जो पुरुष इस गंगा को नमस्कार करे उसके पाप नाश हों ॥ २८ ॥

एवमुक्त्वा ततस्तूष्णीं बभूव विनतासुतः ॥
ओमित्युक्त्वा ततो विष्णुरुवाचेदं वचो हितम् ॥२९॥

भाषा—ऐसा वर मांगकर महात्मा गरुड़ चुप होते भये। तब भगवान् बोले जैसा वर तुमने मांगा ऐसा ही होगा। पुनः यह बोले ॥ २९ ॥

बदरीं त्वं प्रयाहीति नारदेन निषेविताम ॥
स्नात्वा नारदतीर्थादा उपवासत्रयं शुचिः ॥
कृत्वा मद्दर्शनं तत्र सुलभं ते भविष्यति ॥३०॥

भाषा—तुम नारद के सेवन किये हुए बदरीक्षेत्र में जायके नारदादि तीर्थों विषे स्नान से शुद्ध हो तीन उपवास करके, तहां मेरा दर्शन तुमको सुलभ होगा ॥ ३० ॥

इत्युक्त्वांतर्दधे विष्णुर्विद्युत्सौदामिनी यथा ॥
गरुडस्तु ततः शीघ्रमाययौ बदरीं मुदा ॥ ३१ ॥

भाषा—इतना वचन कहके श्रीभगवान् बिजली के सदृश छिप गये तब प्रसन्न होकर गरुड़ शीघ्र बदरिकाश्रम को गया ॥ ३१ ॥

वह्नितीर्थं समासाद्य शिलामाश्रित्य तत्परः ॥
स्नात्वा बदरीतीर्थेषु व्रतत्रयमथाकरोत् ॥ ३२ ॥

भाषा—वहां अग्नितीर्थ * को पाय, एकाग्र हो, शिला का आश्रयकर बदरीक्षेत्र

* अग्नितीर्थ-तप्तकुण्ड ।

तीर्थों विषे स्नान करके तीन उपवास किये ॥ ६२ ॥

ततस्तु नारदे तीर्थे दृष्ट्वा भगवतः स्थितिम् ॥
नमस्कृत्य विधानेन तदाज्ञातः पुनर्ययौ ॥
ततः प्रभृति सा लोके गारुडीत शिलाच्यते ॥ ३३ ॥

भाषा—तिसके उपरांत नारद के तीर्थ विषे श्रीनारायण जी को स्थित देख विधान करके नमस्कार कर पुनः भगवान की आज्ञा से महातमा गरुड़ चले जाते भये उस स्थान पर जो शिला थी वही गरुडशिला कही जाती है ॥ ३३ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखण्डे श्रीशिवकार्तिकेयसंवादे बदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ॥ ५ ॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ बदरिकाश्रम त्यागने योग्य नहीं ॥

त्यजतु विविधधर्मं ब्रह्मबोधादिकं वा ।
नियममपि समस्तं न त्यजेदत्र वासम् ॥
कलियुगसमये न ह्यन्यथा सद्गतिः स्या- ।
दिति मम मतमुच्चैर्ज्ञायतां नारदैतत् ॥ १ ॥

भाषा—(श्रीसनत्कुमारजी ने नारदजी से कहा) हे नारदजी ! जो कोई पुरुष ब्रह्मज्ञान आदि लेकर नाना प्रकार के कर्म धर्म त्याग भी दे किन्तु श्री बदरीक्षेत्र का वास कदापि न त्यागे । कलियुग में अन्य प्रकार मुक्ति नहीं, यह मेरा मत है ॥१॥

॥ वाराहशिला ॥

स्कंद उवाच–वाराहया वद माहात्म्यं कीदृशं वा महेश्वर ॥
किं पुण्यं किं फलं चास्या अभिधानं तथा कथम् ॥ २ ॥

भाषा—स्वामीकार्तिकेय पूछते हैं। हे महेश्वर ! वाराह शिलाका माहात्म्य क्या है ? क्या पुण्य है और वाराहीशिला नाम इसका कैसे हुआ ? ॥२॥

श्रीशिव उवाच–रसातलात्समुद्धृत्य महीं दैवतवैरिणम् ॥
हिरण्याक्षं रणे हत्वा बदरीं समुपागतः ॥ ३ ॥

भाषा—श्रीशिवजी बोले। बाराह भगवान् पाताल से पृथ्वी को उद्धार करके तथा देवताओं के वैरी हिरण्याक्ष दानव को संग्राम में पराजित कर. बदरीक्षेत्र को आये ॥३॥

आकल्पान्ते महादेवो योगधारणमाश्रितः ॥
बदर्य्यासौष्ठवादेन विदधे स्तुतिमात्मनः ॥ ४ ॥

भाषा—कल्पान्त से योग के आश्रम करता श्रीबद्रीविशाल रूपी नारायण-जी की वाराह भगवान् ने स्तुति की ॥ ४ ॥

शिलारूपेण भगवान् स्थितिं तत्र चकार ह ॥
तत्र गत्वा तु मुनयः स्नात्वा गंगाजलेऽमले ॥ ५ ॥

भाषा—और श्रीबदरिका श्रमविषें भगवान वाराह, शिला के रूप से स्थित हुए शिला के निकट निर्मल अलकनन्दाजी के स्वच्छ जल में स्नान करके ॥ ५ ॥

दानं दत्त्वा स्वशक्त्या वै गंगांभः क्षांतमानसः ॥
अहोरात्रं स्थिरो भूत्वा जपेदेकाग्रमानसः ॥ ६ ॥

भाषा—सामर्थ्यानुसार दान दे, और मनको क्षमायुक्त कर एक दिन एक रात्रि पर्यंत एकाग्र जप करे ॥ ६ ॥

तस्य तत्सिद्ध्यति क्षिप्रं यद्यपि स्यात्सुदुष्करम् ॥
पुण्यं यशस्यमायुष्यं पुत्रदं धनधान्यदम् ॥ ७ ॥

भाषा—उस पुरुष की जो कठिन भी इच्छा हो वह भी सिताब सिद्ध होता है । यश से हित आयु बढ़ती है तथा पुत्र सम्पत्तिकी वृद्धि होती है ॥ ७ ॥

॥ नारसिंहशिला ॥

स्कंद उवाच–नारसिंहशिलायास्तु माहात्म्यं वद मे पितः ॥
त्वत्प्रसादान्महादेव दुर्लभं श्रुतवानहम् ॥ ८ ॥

भाषा—स्वामी कार्तिकेय बोले । हे पिताजी ! नरसिंहशिलाका माहात्म्य मेरे पास कहो । आप सभी देवतों के देवता हो । आपके प्रसाद से दुर्लभ भी मैंने श्रवण किया है ॥ ८ ॥

श्रीशिव उवाच–हिरण्यकशिपुं हत्वा नखाग्रेणैव लीलया ॥
क्रोधाग्निना प्रदीप्तांगः प्रलयानलसन्निभः ॥ ९ ॥

भाषा—जब भगवान नृसिंजीने लीला करके अपने नखोंसे हिरण्य-कश्यपको मार डाला था और क्रोध से उनके अंग प्रज्वलित थे मानो प्रलय-काल की अग्नि का ही रूप धारण किया था ॥ ९ ॥

तदा देवैः समागत्य स्थित्वा दूरे भयात्माभिः ॥
स्तुतोसौ भगवान् देवो लीलया कृतविग्रहः ॥ १० ॥

भाषा—देवतेगण यह देख वहां आये और भय से अलग खड़े होकर लीला करके विग्रहरूप धारण करने वाले भगवान नारायणजी की स्तुति करने लगे ॥ १० ॥

तदा प्रसन्नो हरिरुग्रविक्रमः स्वतेजसाक्रांतसुरा-
सुरोत्तमः ॥ उवाच मत्तो वरमावृणुध्वं गीर्वाण-
निर्वाणसुखैकहेतुम् ॥ ११ ॥

भाषा—तब भयानक पराक्रम करने वाले, अपने तेज से देवता और दानवों को उत्तम रूप से जिन्होंने दबा दिया है, ऐसे नृसिंह भगवान प्रसन्नता से बोले। सब देवताओं का निरन्तर सुखका मुख्य कारण जो हो उस वरको हमसे मांगो ॥ ११ ॥

तदा सुराणामधिपः स्वयंभूरुवाच वाक्यं स्मित-
शोभिताननः ॥ रूपं स्वमत्युग्रमशेषदेहिनां
भयावहं संहर नारसिंह ॥ १२ ॥

भाषा—उस समय सब देवतो का स्वामी ब्रह्मा मुसकराते हुए यह कहने लगे हे भगवन् आप इस अति भयानक सब प्राणियों को भय देने वाले रूप को शान्त कीजिये ॥१२॥

अनेकधैतद्विधिवद्विधाय निधाय शैलादिषु दि-
व्यमूर्तिः ॥ उवाच किं वः कथयंतु कृत्यं हरिः
प्रसन्नास्त्रिदशाः परं ततः ॥ १३ ॥

भाषा—पुनः विधिपूर्वक नाना प्रकार के शृङ्गार करके इस स्वरूपको कैलास के स्वच्छ स्थान में रख आये दिव्य देहधारी श्रीनृसिंह स्वामी देवतों से प्रसन्न हो बोले, तुम लोग (देवतागण) हमसे क्या सहायता मांगते हो ? हमसे कहो ॥ १३ ॥

ततोमरा ऊचुरलं तवैद्रूपेण संक्षोभितविश्वमूर्ते ॥
प्रशांतमंतःसुखहेतुमद्धा चतुर्भुजं त्वां वरमीप्सि-
तांगम् ॥ १४ ॥

भाषा—इसके उपरान्त देवता कहने लगे हे महाराज ! इस रूप करके आपने विश्व (सृष्टि) के प्राणियों को बड़ा त्रास दे दिया है । प्रशान्त चतुर्भुज मूर्ति धारण कीजिये हमारा यही मुख्य उपकार है ॥ १४ ॥

ततो हरिर्वीक्ष्य निरीक्षणेन दिष्टेन विश्वस्य ययौ विशालाम् ॥ गङ्गाजले क्रीडितवान् सुरेशः सुरासुरेन्द्रो भगवानुवास ॥ १५ ॥

भाषा—तब भगवान् नृसिंहजीने चारों ओर देखके संसार के श्रेष्ठ श्रीबदरिकाश्रम को शुभ जान वहा पहुँच श्रीअलकनन्दाजी जल विषे क्रीडा करने लगे। देव दानवों के स्वामी नृसिंह अवतार वहां निवास करते भये ॥ १५ ॥

ततोमराः शांतभया अथैनं निरीक्ष्य देवं जलमध्यसंस्थम् ॥ नत्वा परिक्रम्य तदाज्ञयाययुर्निरूढभावः स्वपुरं ततः क्रमात् ॥ १६ ॥

भाषा—तब देवताओं ने भगवान् को जल में शान्तचित्त देख उनको नमस्कार परिक्रमा करके भगवान् की आज्ञा पाकर अपने अपने लोक को चले गये ॥ १६ ॥

ततः समस्ता ऋषयस्तपोधनाः समाययुर्भक्ति-

भरावनम्राः ॥ नृसिंहमत्यद्भुतविक्रमं हरिं समी-
डिरे बद्धकरा वचोभि ॥ १७ ॥

भाषा—इससे उपरान्त तपस्याही जिनका धन है ऐसे सम्पूर्ण ऋषिजन भक्ति के भारसे नम्र होते हुए दर्शन को आये। अति आश्चर्य करने वाले जिनके पराक्रम हैं ऐसे भगवान् नृसिंहस्वामी को अंजुलि बांधकर श्रेष्ठ वाणियों से स्तुति करने लगे ॥ १७ ॥

ततः प्रसन्नो भगवान्नृसिंहः सिंहविक्रमः ॥
उवाच वचनं चारु वरं मे क्रियतामिति ॥ १८ ॥

भाषा—तिससे उपरान्त सिंह के समान पराक्रम करने वाले भगवान् नृसिंह प्रसन्न हो के सुन्दर वाणीसे ऋषियों को बोले। आप लोग हमसे वर मांगो ॥ १८ ॥

ऋषय ऊचुः—यदि प्रसन्नो भगवान्कृपया जगतां पतिः ॥
विशाला न परित्याज्या वरोस्माकमभीप्सितः ॥ १९ ॥

भाषा—सब ऋषि कहते भये। सब भुवनों के पति आप भगवान् यदि कृपा-पूर्वक हमारे ऊपर प्रसन्न हों तो, यही वर मांगते हैं कि अपने बदरीक्षेत्र को नहीं त्यागनो ॥१९॥

एवमस्तु ततः सर्वे स्वाश्रमं ऋषयो ययुः ॥
नृसिंहोपि शिलारूपी जलक्रीडापरोभवत् ॥ २० ॥

भाषा-ऐसा ही होगा। सुनकर समस्त ऋषिगण अपने २ आश्रमों को जाते भये। नृसिंह स्वामी भी शिला के रूप से जल-क्रीडा में तत्पर हुए ॥ २० ॥

॥ भगवान् नारायण जी का बदरिकाश्रमवास ॥

स्कंद उवाच-किमर्थं भगवान् तत्र वसति श्रद्धया युतः ॥
किं पुण्यं किं फलं तस्य दर्शनस्पर्शनादिभिः ॥ २१ ॥

भाषा-स्वामी कार्तिकेय पूछते हैं इस बदरिकाश्रम में किस प्रयोजन से श्रद्धायुक्त हो भगवान् वास करते हैं? उनके दर्शन स्पर्श स्मरण करने से क्या पुण्य और क्या फल प्राप्त होता है? ॥ २१ ॥

नैवेद्यभक्षणस्यापि विष्णुपूजाकृतस्तथा ॥
प्रदक्षिणस्य च फलं ब्रूहि मे कृपया पितः ॥ २२ ॥

भाषा-हे पिताजी! कृपा करके यह भी कहिये! भगवान् बद्रीनाथ जी की पूजा

प्रदक्षिणा करके नैवेद्य भक्षण किये से क्या फल प्राप्त होता है ॥ २२ ॥

शिव उवाच–पुराकृतयुगस्यादौ सर्वभूतहिताय च ॥
मूर्तिमान् भगवानत्र तपोयोगं समाश्रितः ॥ २३ ॥

भाषा–श्रीशिवजी कहते भये । पहिले सतयुग के आदि में समस्त प्राणियों के "हित" के निमित्त भगवान् नारायण इस बदरीक्षेत्र में तपस्या करने को आये ॥ २३ ॥

त्रेतायुगे ऋषिगणैर्योगाभ्यासैकतत्परः ॥
द्वापरे समनुप्राप्ते ध्याननिष्ठोतिदुर्लभः ॥ २४ ॥

भाषा–त्रेतायुग विषे ऋषियों के समूह के साथ योग के अभ्यास में श्रीनारायण जी तत्पर रहे । द्वापरयुग के प्राप्त होने में दुर्लभ ध्यान विषें स्थित रहे ॥ २४ ॥

ऋषीणां देवतानां च दुर्दर्शो भगवानभूत् ॥
ततो ऋषिगणा देवा अलभ्य भगवद्गतिम् ॥
स्वायंभुवं पदं याता विस्मयाकुलचेतसः ॥ २५ ॥

भाषा–तब भगवान् ऋषियों और देवतों के भी देखने में नहीं आये । वे लोग

श्रीनारायण जी की गति को नहीं समझे आश्चर्ययुक्त हो, चित्त जिनका व्याकुल है, ब्रह्मलोक को जाते भये ॥ २५ ॥

तत्र गत्वा नमस्कृत्य ऊचुर्लोकेश्वरं सुराः ॥
बृहस्पतिं पुरस्कृत्य ऋषयश्च तपोधनाः ॥ २६ ॥

भाषा-सत्यलोक में जाय बृहस्पति गुरु को आगे कर सब देवता और ऋषिश्वर तपस्या करनेवाले, लोकों (भुवनों) के स्वामी ब्रह्मा को नमस्कार कर कहते भये ॥२६॥

देवा ऊचुः-नमस्ते सर्वलोकानामाश्रयः शरणार्तिहा ॥
वृत्तिदः करुणापूर्णः पिता गुरुरधीश्वरः ॥ २७ ॥

भाषा-देवता और ऋषि बोले । सब लोकों (भुवनों) के आश्रय, शरणागतों की पीड़ा हरनेवाले, सबको आजीविका (आहार) देनेवाले, दया से पूर्ण पिता हो और शिक्षा करनेवाले गुरु हो ॥ २७ ॥

निवेदनीयो विपदं समुद्धर्तावितासि नः ॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य ब्रह्मणस्य महात्मनः ॥ २८ ॥

भाषा--इसलिये अपनी विपत्ति आपके सन्मुख कहनी योग्य है। विपत्ति से उद्धार और रक्षा करनेवाले भी आप ही हो ऐसे सुनकर महात्मा ब्रह्मा बोले ॥ २८ ॥

ब्रह्मोवाच–किमर्थमागता यूयं विस्मयाकुलमानसाः ॥
मिलिता ऋषिभिः साकं ब्रूतागमनकारणम् ॥ २९ ॥

भाषा–ब्रह्मा जी बोले। आश्चर्ययुक्त व्याकुल हैं चित्त जिनका ऐसे ऋषियों सहित तुम देवतेगण क्यों आये हो ? क्या प्रयोजन है ? ॥ २९ ॥

देवा ऊचुः–द्वापरे समनुप्राप्ते विशालायां विशालधीः ॥
भगवान् दृश्यते नैव तत्र किं कारणं वद ॥ ३० ॥

भाषा–देवतागण बोले। द्वापर युग के प्राप्त होने से विशाला क्षेत्र विषे विशालबुद्धि भगवान् का हम (देवते और ऋषीश्वर) दर्शन नहीं पाते हैं। इसका क्या कारण है ? कहो ॥ ३० ॥

विशाला किं परित्यक्ता ततो वाक्क गतः स्वयम्॥
अपराधस्ततोऽस्माकं कथं वासौ प्रसीदति ॥ ३१ ॥

भाषा–श्रीनारायण जी ने बदरीक्षेत्र क्यों त्यागा है ? और किस स्थान को चले गये हैं ? क्या कुछ हमसे अपराध बन पड़ा है ? हमको वह उपाय कहो जिसमें भगवान् प्रसन्न होवें ॥ ३१ ॥

ब्रह्मोवाच–नाहमेतद्विजानामि श्रुतवान् वो मुखादहम् ॥
को हेतुर्दृक्पथातीतो भगवान् भवतामुत ॥ ३२ ॥

भाषा–ब्रह्माजी बोले । यह रहस्य (आशय) मैं भी नहीं जानता आप ही के मुखारविन्दों से यह वार्ता सुन रहा हूँ । यह क्या कारण हुआ है जो भगवान् तुम्हारे दृष्टि के मार्ग से अलग हुए हैं ॥ ३२ ॥

आगच्छंतु वयं यामस्तीरं क्षीरपयोनिधेः ॥
इत्युक्तास्ते पुरोधाय ब्रह्माणं त्रिदिवौकसः ॥ ३३ ॥

भाषा–चलो, तुम हम मिलके क्षीरसमुद्र के तीर को चलें । ऐसा वचन सुनकर देवता और ऋषीगण तपोधन ब्रह्माजी सहित क्षीर (दुग्ध) समुद्र के तीर पर गये ॥ ३३ ॥

तत्र गत्वा जगन्नाथं देवदेवं वृषाकपिम् ॥

गीर्भिश्चित्रपदार्थाभिस्तुष्टुवुर्जगदीश्वरम् ॥ ३४ ॥

भाषा–तहाँ जायकर जगदीश्वर देवताओं के भी देवता लोकों विषें सर्व करने को समर्थ श्रीनारायण जी को नाना प्रकार के जिन के पद (उपाधि) हैं उनकी जिस रीति से स्तुति करना उचित था ऐसी वाणियों करके सब स्तुति करते भये ॥ ३४ ॥

ततः स्तुतो हरिः साक्षात्सिद्धैरुत्थाय चाब्रवीत् ॥
अलक्षितोमरैर्ब्रह्मा परं तद्वेद नापरः ॥ ३५ ॥

भाषा–तिसके उपरांत ऐसी स्तुति किये जाने से भगवान् नारायण अदृश्य हो प्रत्यक्ष बोले। उन वचनों को केवल ब्रह्मा ही ने जाना ॥ ३५ ॥

ब्रह्मा तदुपधार्य्याथ नत्वा तस्मै दिवौकसः ॥
बोधयामास सकलान् गिरा सूनृतया सुत ॥ ३६ ॥

भाषा–हे कार्तिकेय ! यह वचन सुनके ब्रह्मा श्रीनारायणजी को प्रणाम करके उपरांत सम्पूर्ण देवतों को सच्च मनोग्राहिणी वाणी करके उन (ऋषि और देवताओं) को समझाता भया ॥ ३६ ॥

यात यूयं निजं धाम ऋषयश्च तपोधनाः ॥
भगवान् बदरीनाथो बदर्य्यामेव तिष्ठति ॥ ३७ ॥

भाषा-तुम सब (देवता और ऋषि) अपने २ स्थान को गमन करो श्रीभगवान् बदरीनाथजी बदरिकाश्रम में विराजमान हैं ॥ ३७ ॥

एकान्तशाली समये दृष्टिमार्ग मुपेष्यति ॥
प्रसादितः प्रसन्नश्च प्राप्तं सम्प्रार्थितं फलम् ॥ ३८ ॥

भाषा-वे एकान्त रहना अच्छा मानते हैं समय में तुमको दर्शन देवेंगे । तुमको प्रसन्नता से मन इच्छा फल मिला है (ऐसा सुनकर सब चले गये) ॥ ३८ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखण्डे श्रीशिवकार्तिकेयसंवादे बदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठमोऽध्याय प्रारम्भः ॥

महाराज की वर्तनान मूर्ति

श्रीशिव उवाच–प्राप्ते कलियुगस्यादौ तीर्थे नारदसंज्ञके ॥
अंतर्हितोसौ भविता दृष्ट्वा लोकान् कुमेधसः ॥ १ ॥

भाषा–श्रीशिवजी कहते भये । कलियुग के प्रवेश होने में भी नारदमुनि के तीर्थ विषे श्रीनारायण (बदरीविशाल) दुष्ट बुद्धि के मनुष्यों को देखकर छिप जायेंगे (दर्शन नहीं मिलेंगे ॥ १ ॥

ततोहं यतिरूपेण तीर्थान्नारदसंज्ञितात् ॥
उद्धृत्य स्थापयिष्यामि मूर्तिं लोकहितेच्छया ॥ २ ॥

भाषा–तिससे उपरांत *मैं [शिव] दंडी का रूप लेके नारदमुनि के कुण्ड से बदरी-

* १ यह घटना अनुमान सातवीं शताब्दिमें शंकारस्वामीके समपर होगई है ।

विशाल की मूर्ति को निकालकर सबके हित के लिये स्थापन करूँगा ॥ २ ॥

यस्या दर्शनमात्रेण पातकानि महांत्यपि ॥
विलीयंते क्षणादेव सिंहं दृष्ट्वा मृगा इव ॥ ३ ॥

भाषा--उस मूर्ति को दर्शन किये ही से बड़े ही [वज्रलिप्त] पातक क्षणमात्र में ऐसे लोप होयँगे जैसे सिंह को देख मृग ॥ ३ ॥

सर्वधर्मोज्झिता देवं बदरीशं हरिं प्रभुम् ॥
तं दृष्ट्वा मुक्तिमायांति विनायासेन पुत्रक ॥ ४ ॥

भाषा--हे पुत्र ! सर्व धर्मों से पतित जन श्रीबदरीविशाल प्रभु के दर्शन करके अनायास ही मुक्ति लाभ करता है ॥ ४ ॥

त्यक्त्वा सर्वाणि तीर्थानि हारः साक्षात्कलौ युगे ॥
बदरीमनुसंप्राप्य साक्षादेवावतिष्ठते ॥ ५ ॥

भाषा--कलियुग विषे सब तीर्थों को छोड़ के आप (भगवान) बदरीक्षेत्र विषे स्थित रहते हैं ॥ ५ ॥

कलिकाले ह्यनुप्राप्ते मुक्तिर्येषां मनीषितम् ॥
द्रष्टव्या बदरी तैस्तु हित्वा तीर्थान्यनेकशः ॥ ६ ॥

भाषा—कलिकाल प्राप्त होने में जिन भाग्यवान मनुष्यों का मनोभिलाष "मुक्ति" पाने का हो उन पुरुषों ने अनेक दूसरे तीर्थों को छोड़कर भी बदरीक्षेत्र को अवश्य देखना उचित है ॥ ६ ॥

विना ज्ञानेन योगेन तीर्थाटनपरिश्रमैः ॥
एकेन जन्मना जंतुः कैवल्यं समवाश्नुते ॥ ७ ॥

भाषा—वहाँ विना ज्ञान, विना योग, विना तीर्थों विषे गमन करके भी प्राणी को एक जन्म में ही कैवल्यपद की प्राप्ति होती है ॥ ७ ॥

जन्मांतरसहस्रैस्तु सम्यगाराधितो हरिः ॥
यदीच्छेद्बदरीं द्रष्टुं यया जंतुर्न शोच्यते ॥ ८ ॥

भाषा--सहस्रों जन्मान्तरों में जिसने भगवान् नारायण जी का भले प्रकार पूजन किया हो तो तब, उसको एक वार श्रीबदरीनाथ महाराज के दर्शन की अभिलाषा

उत्पन्न होतीं है, जिसके उत्पन्न होने से प्राणी और कुछ न सोचकर सीधा बदरी को चला जाता है ॥ ८ ॥

बदरी बदरीत्युक्त्वा प्रसंगान्ममनुजोत्तमः ॥
संसारतिमिराबाधादीपमुज्ज्वालयत्यसौ ॥ ९ ॥

भाषा—किसी भी प्रसंग से मनुष्यों विषें जो उत्तम पाम "बदरी बदरी" उच्चारण होता है, तो वे मनुष्य संसार-रूपी अंधकार से बचने को दीपक बोलते हैं ॥ ६ ॥

यथा दीपावलौकेन तमोबाधा न जायते ॥
तथैव बदरीं दृष्ट्वा पुंसो मृत्युभयं कुतः ॥ १० ॥

भाषा—जैसे दीपक करके अंधकार का भय नहीं तैसे ही "बदरी" के दर्शन किये से किये से मृत्युरूपी महापातकों का भय कहां ॥ १० ॥

दर्शनाद्यस्य पापानि रुदंति व्याहतानि च ॥
मुक्तिमार्गमिवालक्ष्य तं वन्दे बदरीपतिम् ॥ ११ ॥

भाषा—जिस बदरीनाथ जी के दर्शन से पीड़ित होते हुए पातक रोदन करते हैं।

जिसकी कृपा से मुक्ति का कठिन मार्ग सुलभ होता है, उस बदरीविशाल को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ११ ॥

॥ महाराज की प्रदक्षिणा ॥

सशैलकानना भूमिदर्शधा दाक्षिणीकृता ॥
हरेः प्रदक्षिणात्पुंसां बदर्य्यां तत्पदे पदे ॥ १२ ॥

भाषा—पर्वत और वनों सहित पृथ्वी की दस वार परिक्रमा करने से जो फल होता वही फल "बदरी" की प्रदक्षिणा से मनुष्यों को पद पद में प्राप्त होता है ॥ १२ ॥

अतिकृच्छ्रैर्महाकृच्छ्रैर्द्वादशाब्दैः कृतं भवेत् ॥
हरेः प्रदक्षितपुंसां बदर्य्यां तत्पदे पदे ॥ १३ ॥

भाषा—बारह वर्ष तक अतिकृच्छ्र और महाकृच्छ्र नाम प्रायश्चित्त (चान्द्रायण) किये से जो फल मिलता है, वही फल बदरीविशाल की परिक्रमा करने से मनुष्यों को पैर पैर में प्राप्त होता है ॥ १३ ॥

॥ महाप्रसाद ॥

बदर्य्यां विष्णुनैवेद्यंसिक्थमात्रं षडानन ॥

अनेकान् शोधयेत्पापान् तुषाग्निरिव कांचनम् ॥ १४ ॥

भाषा—हे षडानन (जिसके छः मुख हैं) ! बदरी में नारायण का महाप्रसाद एक कुण का मात्र भी अनेक पापों को शुद्ध करता है । जैसे तुषे की अग्नि सुवर्ण को शुद्ध करती है ॥ १४ ॥

यदन्नं भगवानत्ति ऋषिभिर्नारदादिभिः ॥
तत्सद्भिः शुद्धिमिच्छद्भिर्भोक्तव्यमविचारयन् ॥ १५ ॥

भाषा—जिस अन्न को भगवान् नारायण नारदादि ऋषियों के साथ भोजन करते हैं वह अन्न सत्यस्वरूप से निर्मल करनेवाला सज्जनों को विना विचार किये पाना योग्य है ॥ १५ ॥

लक्ष्मीः पचति नैवेद्यं भवान्यत्र निवेदकः ॥
स्वीकरोति महाविष्णुर्दोषः कथमिहोच्यते ॥ १६ ॥

भाषा—श्रीलक्ष्मीजी नैवेद्य को पकाती हैं, नारद परोसते हैं, और महाविष्णु स्वीकार करते हैं । तो कहिये दोष कैसे दिया जावे ? ॥ १६ ॥

अमरा अपि जंतूनां नररूपपरिच्छदाः ॥
भोक्तुं बदरिकां विष्णोर्नैवेद्यं यांति तत्पराः ॥ १७ ॥

भाषा—देवतेगण भी इस महाप्रसाद पाने की इच्छा से मनुष्य रूप धारण करके "श्रीबदरीनारायण के महाप्रसाद" को पाते हैं ॥ १७ ॥

भोजनानन्तरं विष्णोः प्रच्छन्नयतिमूर्तयः ॥
प्रह्लादप्रमुखा भक्त्या प्रविशंति गृहे हरेः ॥ १८ ॥

भाषा—नारायणजी के भोजन करने के उपरान्त छिपे हुए परम हंसों की मूर्ति धारण किये प्रह्लाद आदि भक्त श्रीनारायण जी के मन्दिर में प्रवेश करते हैं ॥ १८ ॥

बाल्ययौवनवार्द्धक्यैर्यत्पापं जानता कृतम ॥
नैवेद्यभक्षणाद्विष्णोर्बदर्य्यां तद्विलीयते ॥ १९ ॥

भाषा—बाल्य, यौवन और वृद्धावस्थाओं में पुरुष ने जो पाप सुनकर कियें हों, वे सब बदरीनारायण जी के "महाप्रसाद" भक्षण करने से नष्ट हो जाते हैं ॥ १६ ॥

प्राणांतं यस्य पापस्य प्रायश्चितं प्रकीर्तितम् ॥

विष्णोर्निवेदितान्नेन बदर्य्यां तन्निवर्तते ॥ २० ॥

भाषा—मरण पर्यंत जिस पाप का प्रायश्चित्त कहा है वह पातक बद्रीपुरी में श्रीनारायण जी को चढ़ाये हुए अन्न को पाने से हट जाते हैं ॥ २० ॥

तीर्थान्तरेषु यत्नेन मुक्तिर्भवतिमानवाः ॥
नैवेद्यभक्षणाद्विष्णोः सालोक्यं लंभते नरः ॥ २१ ॥

भाषा—अन्य तीर्थों विषे यत्न करके जो मुक्ति प्राप्त हो वह बदरी में "महाप्रसाद भक्षण" किये से नारायणजी के लोक को प्राप्त होता है ॥ २१ ॥

हृदि रूपं मुखे नाम नैवेद्यमुदरे हरेः ॥
पादोदकं च निर्माल्यं मस्तके यस्य सोऽच्युतः ॥ २२ ॥

भाषा—जिस पुरुष के हृदय में "श्रीबदरीविशाल का रूप" मुख में नाम, पेट में महाप्रसाद और चरणामृत हो, तथा मस्तक में चन्दन पुष्प धारे होवे वह पुरुष आप ही नारायण है ॥ २२ ॥

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वंनागमः ॥
नैवेद्यभक्षाद्विष्णोर्बदर्य्यां याति संक्षयम् ॥ २३ ॥

भाषा—ब्रह्महत्या, मदिरापान, सुवर्णचोरी, गुरुपत्नी से गमन करना, यह चारों महापाप हैं, यह सब "महाप्रसाद भक्षण" करने से नष्ट हो जाते हैं ॥ २३ ॥

बदरीसदृशं क्षेत्रं नैवेद्यसदृशं वसु ॥
नारदीयसमं तीर्थं न भूतं न भविष्यति ॥ २४ ॥

भाषा—बदरी के समान क्षेत्र, नैवेद्य के समान रत्न और नारद कुण्ड के समान दूसरा तीर्थ न हुआ न होयगा ॥ २४ ॥

वैश्वदेवादिकं कार्य्यं निर्माल्येन हरेरिह ॥
श्राद्धमप्यत्र तेनैव कार्यं नैवास्ति संशयः ॥ २५ ॥

भाषा—वैश्वदेवादिक पितृकर्म भगवान् के निर्माल्य से करे और श्राद्ध कर्म भी इसी निर्माल्य (महाप्रसाद) से करे ॥ २५ ॥

स्वतंत्रपाकजाड्यं चेद्बदरीनाथदृष्टितः ॥
विश्वेदेवान्पितॄनन्यान्भावयेदंतरात्मना ॥ २६ ॥

भाषा-अच्छी तरह से न बना हो अथवा बिना चौके कर्म से बना हो या बासी हो कैसा भी हो भगवान् बदरी के दृष्टि मात्र से पवित्र है तब उस नैवेद्य से विश्वेदेवादि और पितृकार्य करे यदि महाप्रसाद का अभाव हो तो अन्य अन्न को अन्तरात्मा से अर्पण करके तब पिण्ड करे ॥ २६ ॥

बदरीं यत्नतो गत्वा भोक्तव्यं तन्निवेदितम् ॥
द्रष्टव्यो भगवान् वह्नितीर्थस्नानं सुदुर्लभम् ॥ २७ ॥

भाषा-यत्न से बदरी जाय के श्रीनारायण जी को चढ़ाया हुआ महाप्रसाद भोजन करना, भगवान् बदरीविशाल के मंगलकारक दर्शन करना, और तप्तकुण्ड में स्नान करना यह बड़ा दुर्लभ है ॥ २७ ॥

अनायासेन येषां वा इच्छा मुक्तिपथे नृणाम् ॥
कर्तव्यं तैः प्रयत्नेन विष्णोर्नैवेद्यभक्षणम् ॥ २८ ॥

जिन्होंने बदरीनारायण महाराज के चरणामृत विषे भक्ति नहीं की ॥ ३४ ॥

॥ तीर्थ पर इष्ट मंत्र का जप ॥

अष्टोत्तरशतावृत्त्या परिक्रम्य नमेद्धरिम् ॥
जपेच्च मन्दिरे तस्य स्वेष्टमंत्रं समाहितः ॥ ३५ ॥

भाषा-एक सौ आठ परिक्रमा करके भगवान् को नमस्कार करे. और सावधान होके नारायण जी के भीतर अपने इष्ट मंत्र का जप करे ॥ ३५ ॥

गङ्गातीरेऽथवा जप्याच्छिलानां मध्यतोपि वा ॥
वाराणस्यधिकादेशात्सत्यं शतगुणाधिकम् ॥ ३६ ॥

भाषा—गंगा के तीर अथवा पंचशिलान के भीतर जप करना योग्य है यहां काशी क्षेत्र से सौगुना अधिक फल होता है सत्य जानिये ॥ ३६ ॥

जपादीनां फलं यत्र नात्र कार्या विचारणा ॥
स्वाधिकारानुसारेण स्वाध्यायार्चाहुतादिकम् ॥ ३७ ॥

भाषा—अपने अधिकार के अनुसार विना विचारे अध्ययन, अर्चन, होम जो बन पड़े करे ॥ ३७ ॥

न विष्णुसदृशो देवो न विशालासमा पुरी ॥
न भिक्षुसदृशं पात्रं ऋषितीर्थसमं नहि ॥ ३८ ॥

भाषा—श्रीभगवान् विष्णु के समान दूसरा देवता नहीं, बदरीपुरी के समान पुरी नहीं, भिक्षु के समान पात्र नहीं, और नारदकुण्ड के समान दूसरा तीर्थ नहीं ॥ ३८ ॥

॥ पुरी में चातुर्मास्य वास ॥

चातुर्मास्ये प्रकुर्वंति ये नराः पुण्यभागिनः ॥
तेषां पुण्यफलं वक्तुं ब्रह्मणापि न शक्यते ॥ ३९ ॥

भाषा—पुण्यभागी पुरुष चातुर्मास में बदरी वास करते हैं उनके अतुल्य पुण्य की महिमा कहने को ब्रह्मा को भी शक्य नहीं ॥ ३९ ॥

॥ भगवान् बदरीनाथ जी के दर्शन ॥

भिक्षुकाणां फलाप्तिर्वै विशेषादिह वर्तते ॥

वेदांतश्रवणात्पुण्यं दशधा यत्प्रकीर्तितम् ॥ ४० ॥

भाषा–इस पुरी में यतियों को फल की प्राप्ति विशेष होती है, वेदान्त के श्रवण करने से परमहंसों को जो पुण्य होवें वही दशगुणा फल बदरी के दर्शन मात्र ही से उनको प्राप्त होता है ॥ ४० ॥

चातुर्मास्ये विशेषेण कैवल्यफलभागिनः ॥
न्यासिनो बदरीं स्नात्वा विनायासेन पुत्रक ॥ ४१ ॥

भाषा–हे पुत्र कार्तिकेय ! विशेष करके चौमासे विषे संन्यासी विना परिश्रम स्नान मात्र के करने ही से मोक्ष भोग करनेवाले होते हैं ॥ ४१ ॥

ये मूर्खा जड़तापन्ना दंडकाषायवाससः ॥
बदरीदर्शनात्तेषां मुक्तिः करतलेस्थिता ॥ ४२ ॥

भाषा–जो कोई धृष्ट बुद्धि के अज्ञान से भरे हुए दंड को धारनेवाले भगोया वस्त्र के ओढ़नेवाले होते हैं ऐसे पाखंडियों के भी बदरी दर्शन से मुक्ति हाथ में स्थित रहती है ॥ ४२ ॥

ज्ञानिनोऽज्ञानिनो वापि न्यासिनो नियतव्रताः
द्रष्टव्या बदरी तैस्तु फलावाप्तिमभीप्सुभिः ॥ ४३ ॥

भाषा—ज्ञानी, अज्ञानी, संन्यासी तथा नियम व्रत करनेवाले कोई भी इच्छित मुक्ति फल को सरलता से चाहनेवाले हों तो भगवान् बद्रीनाथजी के दर्शन करें ॥ ४३ ॥

बहुभिरिह पुत्र किं भाषितैर्विष्णुभक्ति- ।
प्रभवभुवि बदर्य्यां वासमेवाति भक्त्या ॥
विदधतु यदि भक्तिःप्रार्थ्यते पद्मनाभे ।
भगवति करुणाब्धौ तत्पदध्यानपूताः ॥ ४४ ॥

भाषा—हे पुत्र ! बहुत कहने से क्या प्रयोजन है । विष्णुभक्ति पैदा करनेवाली जो बदरिकाश्रम की मनोग्राहिणी भूमि है उसमें जिस विधि से हो वास करे जो पद्मनाभ भगवान् की आराधना भक्ति भाव से करते हैं वह पुरुष भगवान् के ध्यान करते हुए पवित्र होते हैं ॥ ४४ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां शिवकार्तिकेयसम्बादे
श्रीबदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां षष्ठोऽध्यायः समाप्तः ॥ ७ ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ श्रीब्रह्मकपालमाहात्म्य ॥

स्कंद उवाच–कराद्विगलितं यत्र कपालं ते महेश्वर ॥
तस्य तीर्थस्य माहात्म्यं कृपया वद मे पितः ॥ १ ॥

भाषा–स्वामी कार्तिकेय कहते हैं । हे पिताजी ! आप सबके ईश्वर हो जिस स्थान में आपके हाथ से ब्रह्मकपाल गिरा है उस तीर्थ माहात्म्य कृपा करके मेरे पास कहो ॥१॥

श्रीशिव उवाच–अतिगुह्यमिदं तीर्थं सुरासुरनमस्कृतम् ॥
ब्रह्महापि नरो यत्र स्नानमात्रेण शुद्ध्यति ॥ २ ॥

भाषा–श्रीशिवजी बोले । देव दानव जिसको नमस्कार करते ऐसा यह अत्यन्त गुप्त तीर्थ है, जिस तीर्थ विषे ब्राह्मण की हत्या करनेवाला भी स्नान मात्र ही से होता है ॥२॥

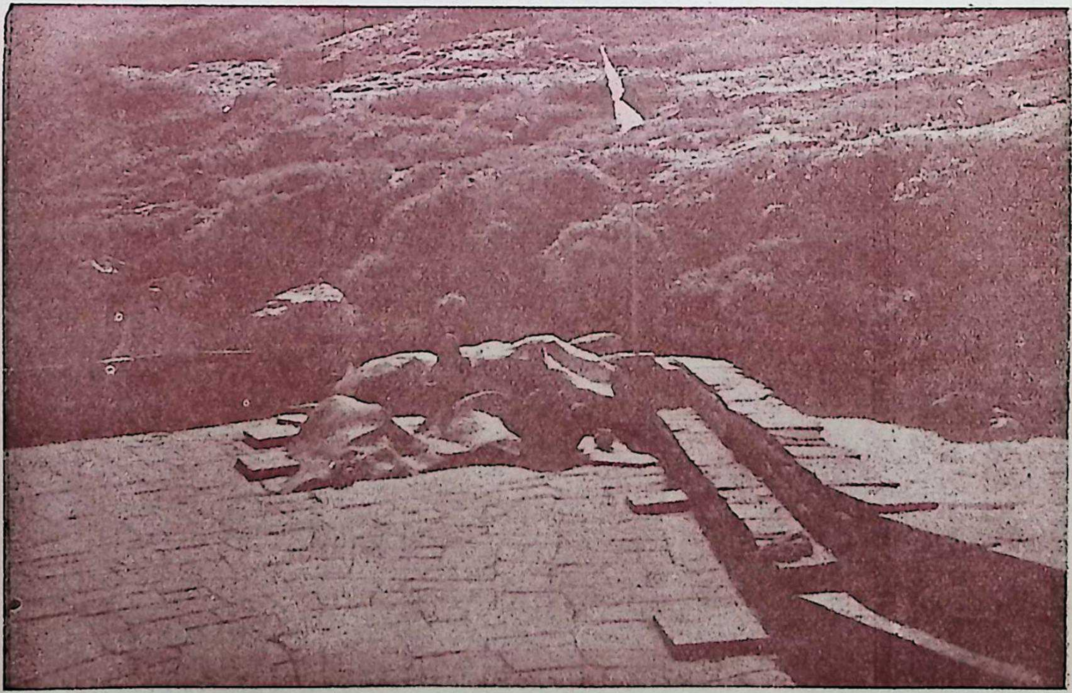

ब्रह्मकपाल

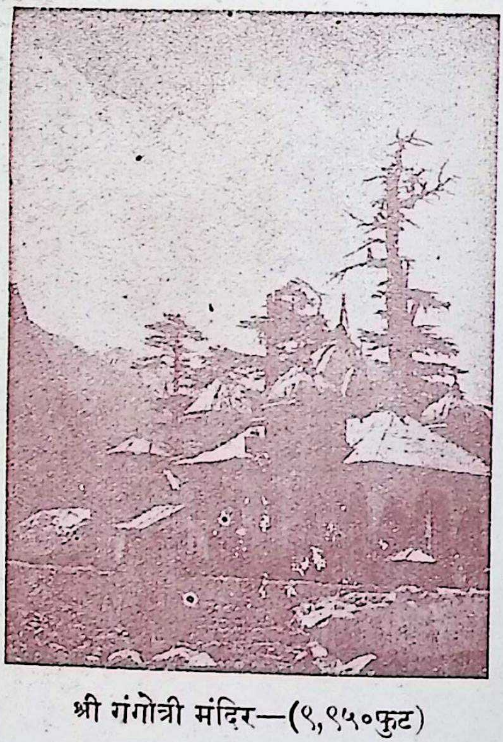

श्री गंगोत्री मंदिर—(९,९५०फुट)

पंच कुण्डानि तिष्ठंति कपाले पापनाशने ॥
स्नानं दानं तपो होमः सर्वमक्षयमिष्यते ॥ ३ ॥

भाषा—पापों के नाश करनेवाले ब्रह्मकपाल में पंचकुण्ड स्थित है तहाँ स्नान, दान, तप, और होंम करने से अक्षय फल होता है ॥ ३ ॥

पिंडं विधाय विधिवत्पातकात्त्रायते पितॄन् ॥
पितृतीर्थमिदं प्रोक्तं गयातोऽष्टगुणाधिकम् ॥ ४ ॥

भाषा—ब्रह्मकपाल में विधिपूर्वक पिण्डदान करनेवाले पुरुष के पितर पातकों से मुक्त हो जाते हैं। यह तीर्थ गया से आठगुणा फल विशेष देनेवाला है ॥ ४ ॥

पितृतर्पणतो यांति पितरः स्वर्गमुत्तमम् ॥
अहोरात्रं स्थितो भूत्वा जपंस्तिष्ठन्समाहितः ॥ ५ ॥

भाषा—पितरों को तर्पण, और एक रात्रि स्थिर होके एकाग्र चित्त जप करे तो उस उत्तम पुरुष के पितर स्वर्ग को प्राप्त होते हैं ॥ ५ ॥

समासेन हि कथ्यंते सर्वकामप्रदानि वै ॥
ब्रह्मकपाले पितरःप्रेक्षमाणाः स्ववंशजम् ॥ ६ ॥

भाषा—अब संक्षेप से इच्छा पूर्ण करनेवाले विषय कहे जाते हैं, ब्रह्मकपोल में पितर अपने वंशज को देखते हैं ॥ ६ ॥

तिष्ठंति तस्मात्पिंडानां प्रदानं मुनयोब्रुवन् ॥
अज्ञानाज्ज्ञानतो वापि भक्त्याभक्त्याथवा पुनः ॥ ७ ॥

भाषा—इसलिये मुनिजन यहाँ पिण्डदान करने को कहते हैं अज्ञान से या ज्ञान से, भक्ति से या अभक्ति से ॥ ७ ॥

यैरत्र पिंण्डवपनं कृतं जलसुतर्प्पणम् ॥
तारिताः पितरस्तेन दुर्गता अपि पापिनः ॥ ८ ॥

भाषा—जिन्होंने यहाँ पिण्डदान तथा जल से तर्पण किया है उन्होने अपने दुर्गंत और पापी पितर भी तार दिये ॥ ८ ॥

किं गयागमनात्पुत्र किमन्यत्तीर्थतर्प्पणैः ॥

येर्नरैर्ब्रह्मकपाले पितॄनुद्दिश्य षडानन ॥ ९ ॥

भाषा—हे पुत्र ! गया जाने से क्या तथा अन्य तीर्थों में तर्पण करने से भी क्या है ? जिन्होंने ब्रह्मकपाल में पितरों के उद्देश से कुछ भी न किया हो । ब्रह्मकपाल में जो किया जाय ॥ ९ ॥

कृतं तत्सर्वमेवाशुकोटिकोटिगुणं भवेत् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कुर्य्यादत्र सुतर्प्पणम् ॥
पिंडानां पातनं चैव पितरो मुक्तिमाप्नुयः ॥१०॥

भाषा—वह कोटी गुणा फल देनेवाला होंता है बहुत प्रयत्न से तर्पण और पिण्डदान करे इससे पितर मुक्ति को पाते हैं ॥ १० ॥

मातृवंश्याश्च ये केचित पितृवंश्यास्तथा परे ।
श्यालाः संबंधिनो वापि सखायश्चापि पुत्रक ॥
प्रिया वृक्षाः पक्षिणश्च तिर्यग्योनिगता अपि ॥११॥

भाषा—मातृवंश के पितृवंश के तथा साले, सम्बन्धी, मित्र, प्रिय वृक्ष, पक्षी तथा तिर्यग्योनि को प्राप्त हुए भी पितर ॥ ११ ॥

गच्छंति परमं स्थानं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥
यानुद्दिश्य च सलिलं पिण्डदानं तथैव च ॥१२॥

भाषा—विष्णु के परम पद को प्राप्त होते हैं, जिनके उद्देश्य से यहां जल दान तथा पिंडदान किया होवे ॥ १२ ॥

कृतं ते विष्णुलोकाय गच्छंति स्मरणादपि ॥
नित्यं जल्पंति पितरो मद्देशे कश्चिदुत्तमः ॥१३॥

भाषा—बिष्णुलोक को चले जाते हैं, पितर यही कहा करते हैं कि कोई उत्तम वंशज यहां विशाला मे आज ॥ १३ ॥

गमिष्यति विशालायां तारितास्तेन वै वयम् ॥
माहात्म्यं केन शक्येत वक्तुं वर्ष शतैरपि ॥१४॥

भाषा—और उससे हम तारे जायँगे ऐसा इसका माहात्म्य सैकड़ों वर्षों में भी किससे कहा जावेगा ? ॥ १४ ॥

पत्र ८७६

तत्रैव बदरीक्षेत्रे पिंडं दातुं प्रभुः पुमान् ॥
मोहाद्गयायां दद्याद्यः स पितॄन्पातयेत्स्वकान् ॥

भाषा—श्रीबद्रीक्षेत्र (ब्रह्मकपाल) में पितरों के अर्थ पिण्डदान करके जो मनुष्य फिर मोह से गया जी में पिण्डदान देते हैं वह अपने पितरों का अधःपतन करते हैं ॥

(सनत्कुमारसंहिता अध्या० १ श्लोक ३८)

पारलौकिककर्माणि सर्वाण्यव्याहतानि च ॥
कपालमोचने तीर्थेऽधिकं किंवा निगद्यते ॥१५॥

भाषा—कपालमोचन (ब्रह्मकपाल) तीर्थ विषे पारलौकिक कर्म किये जाने से अक्षय फल देनेवाले होते हैं । अब बहुत क्या कहा जावै ? ॥ १५ ॥

बहूनि संति तीर्थानि विशालायां षडानन ॥

कपालमोचनं तीर्थमधिकं पितृकर्मणि ॥१६॥

भाषा-हे कार्तिकेय ! बदरीक्षेत्र विषे बहुत तीर्थ हैं किन्तु पित्रों के उद्धार करनेवाला अधिक यही ब्रह्मकपाल है ॥ १६ ॥

सरस्वती गंगा

शिव उवाच—सरस्वतीजले स्थित्वा जंप कृत्वा सहस्रकम् ॥
मनसोऽस्य न विच्छेदः कदाचिदपि जायते ॥१७॥

भाषा-शिवजी बोले। श्रीसरस्वती गंगा जी में स्थित होके एक हजार बार उनका मंत्र जपे तो, कभी भी उनका मन सरस्वती से दूर नहीं होता ॥ १७ ॥

वेदव्यासोपि भागवान्यत्प्रसादादुदारधीः ॥
पुराण संहिता कर्ता बभूवात्र न संशयः ॥१८॥

भाषा-इसी गंगाजी के प्रसाद से वेदव्यास विचक्षण बुद्धि हुए थे जिन्होंने पुराण और संहिता रची हैं इसमें कुछ संशय नहीं ॥ १८ ॥

मंत्रसिद्धिर्विशेषेण सरस्वत्यास्तटे नृणाम् ॥
जपतामचिरेणैव जायते नात्र संशयः ॥१९॥

भाषा–सरस्वती के तीर जप करनेवाले मनुष्यों को थोड़े ही काल में मंत्रों की सिद्धि होती है इसमें संशय नहीं ॥ १६ ॥

बहुना किमिहोक्तेन वाणी वाग्विभवप्रदा ॥
जलरूपधरा नृणां दर्शयन्मुखमुज्ज्वलाम् ॥२०॥

भाषा–बहुत कहने से क्या होता है इस तीर्थ में सरस्वती जल के रूपसे स्थित हैं। मनुष्यों को उज्ज्वल बुद्धि को देकर ग्रन्थ बनाने की सामर्थ्य प्रदान करती हैं ॥ २० ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां शिवकार्तिकेयसम्वादे
श्रीबदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः समाप्तः ॥७॥

॥ अथ अष्टमोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ इन्द्रधारा ॥

ततो वा दक्षिणे भागे इन्द्रधारेति विश्रुता ॥
तीर्थमिंद्रपदं यत्र तपश्चक्रे पुरन्दरः ॥ १ ॥

भाषा—तिस सरस्वती से दाहिने ओर इन्द्रधारा नदी ख्यात है जहाँ इन्द्र ने तप किया था यह वही इन्द्रपद तीर्थ है ॥ १ ॥

तपो दानं जपो होमः संयमा नियमा यमाः ॥
तत्रानंतगुणं प्रोक्तं तत्तीर्थमतिदुर्लभम ॥ २ ॥

भाषा—तप, दान, जप, होम, संयम, नियम और यम, इतने कर्म किये हुए इन्द्रतीर्थ में अनन्तगुणा फल हैं। वह तीर्थ अति दुर्लभ है ॥ २ ॥

प्रतिमासं त्रयोदश्यां शुक्लायां हरिदर्शने ॥
स्नात्वा स्वतीर्थे सुत्रामा छन्नरूपो हि संगतः ॥ ३ ॥

भाषा—प्रतिमास शुक्लपक्ष की त्रयोदशी के दिन इन्द्र महाराज स्वरूप को बदलकर इस तीर्थ में स्नान को तथा श्रीनारायण जी के दर्शन करने नित्य नियम से आते हैं ॥३॥

उपवासद्वयं कृत्वा मंत्रमष्टाक्षरं जपन् ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः शक्रलोके महीयते ॥ ४ ॥

भाषा—दो उपवास सहित अष्टाक्षर मंत्रको जप करता हुआ पुरुष सब पापों से छूटकर अन्त को इन्द्रलोक को जाता है ॥ ४ ॥

मानसोद्भेद

ततो दिग् मानसोद्भेदः सर्वपापप्रणाशनः ॥
दुर्लभं सर्वजंतूनां यत्र तस्थुर्महर्षयः ॥ ५ ॥

भाषा—इन्द्रपद तीर्थ से उत्तर की ओर सब पापों के नाशकरनेवाला, सब प्राणियों को अति दुर्लभ, जहाँ समस्त ऋषिश्वर स्थित हैं ऐसा "मानसोद्भेद तीर्थ" है ॥ ५ ॥

मानसं चिदचिद्ग्रंथिमुद्ग्रंथयति सर्वतः ॥
मानसोद्भेद इत्याख्य ऋषिभिः परिगीयते ॥ ६ ॥

भाषा—सब ओर मन ही चैतन्य रूप से अचैतन्य रूप गांठ को खोल देता है इसी से ऋषियों ने मानसोद्भेद तीर्थ नाम रखा ॥ ६ ॥

भिनत्ति हृदयग्रंथिं छिनत्ति सर्वसंशयान् ॥
हरत्यघचयं तेन मानसोद्भेद इत्यभूत ॥ ७ ॥

भाषा—हृदय की गाँठ को भेद करता है, सब सन्देहों को काटता है, पापों के समूह को हरता है इस प्रकार से मानसोद्भेद नाम ख्यात हुआ ॥ ७ ॥

साधनानि बहून्येव कायक्लेशकराण्यहो ॥
सुलभं साधनं त्वेकं मानसोद्दर्शनम् ॥ ८ ॥

भाषा—शरीर को क्लेश देनेवाली बहुत सी साधनायें हैं किन्तु सिद्धि चाहनेवालों को सुलभ उपाय एक ही मानसोद्भेद तीर्थ के दर्शन हैं ॥ ८ ॥

त्रियुगीनारायण—ऊपर मंदिर व बस्ती दिखाई दे रही है यहाँ शिवपार्वती का विवाह हुआ था तब से यहाँ अखंड धुनि जलती रहती है।

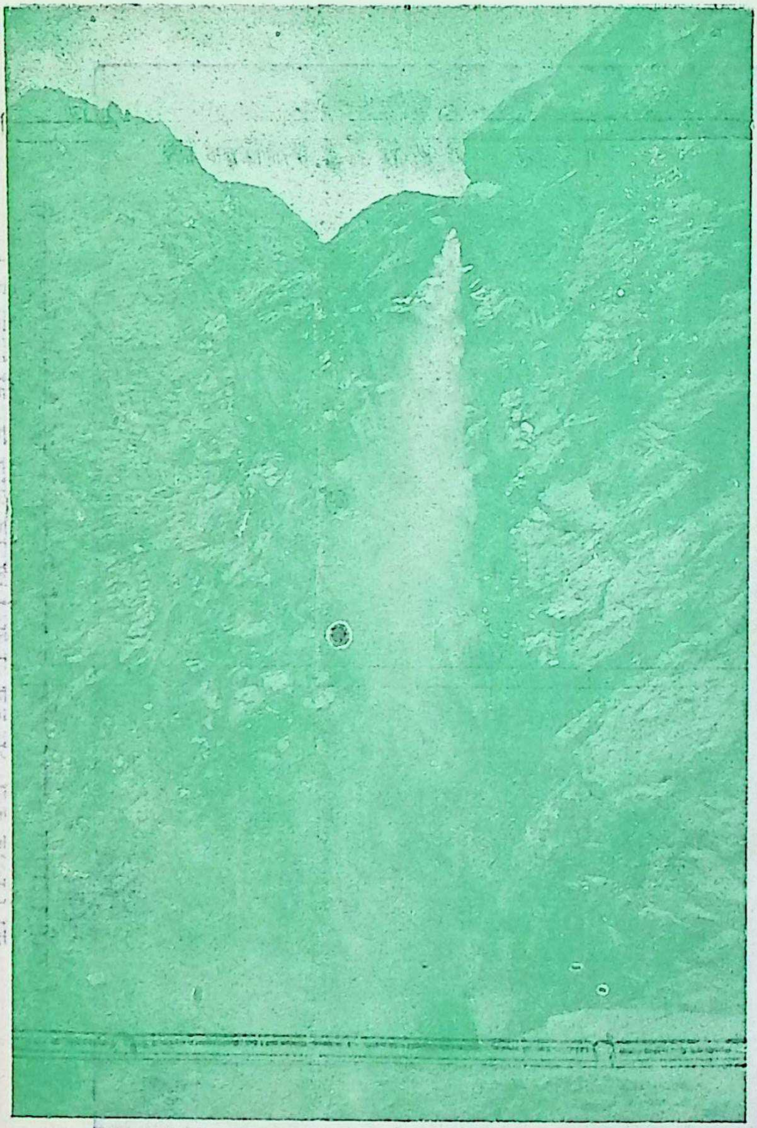

वसूधारा—यह प्रसिद्ध जलप्रपात ४०० फुट ऊँचा है और श्री बदरीनाथ पुरी से ५ मील दूर है।

॥ वसुधारा ॥

मानसोद्भेदनात्प्रत्यग्दिशि सर्वमनोहरम् ॥
वसुधारेति विख्यातं तीर्थं त्रैलोक्यदुर्लभम ॥ ९ ॥

भाषा-मानसोद्भेद तीर्थ से पश्चिम की ओर सबका मन हरनेवाला तीनों लोकों विषे दुर्लभ वसुधारा नाम तीर्थ विख्यात हैं ॥ ६ ॥

त्रिलोक्यां सर्वतीर्थेभ्यः श्रेष्ठं बदरिकाश्रमम् ॥
श्रुत्वा तन्नारदात्सर्वे वसवः समुपागमन ॥१०॥

भाषा-नारदजीसे तीनों लोक के तीर्थों में श्रीबदरिकाश्रम को श्रेष्ठ सुनके अष्ट वसुदेवते यहां आये थे ॥ १० ॥

त्रिंशद्वर्षसहस्त्राणि तपः परमदारुणम् ॥
दलांबुप्राशनात्सर्वे ततः सिद्धिमुपाययुः ॥११॥

भाषा—तीस सहस्र वर्ष पर्यन्त अत्यन्त भयानक तपस्या करके पत्ते और जल के भक्षण से समस्त वसुदेवते तिस तीर्थ विषे सिद्धि को प्राप्त हुए ॥ ११ ॥

भगवद्दर्शनामोदनिवृत्तविविधक्रमाः ॥
हृदयानन्दसंदोहप्रफुल्लितमुखांबुजाः ॥१२॥

भाषा—श्रीनारायणजी के दर्शन किये से जो हर्ष हुआ तिस से हट गये हैं नाना प्रकार के परिश्रम जिनके । हृदय के आनन्द के समूह से मुखारविन्द प्रसन्न हैं ॥ १२ ॥

स्तुत्वा नारायणं देवं वरं लब्ध्वा मनोहरम् ॥
हरिभक्तिपरैर्वर्य्यपदं प्राप्य दिवं ययुः ॥१३॥

भाषा—वसुदेवते श्रीभगवान् नारायणजी की स्तुति कर मन इच्छित वर पाय के, विष्णुभक्तिविषें तत्पर पुरुषों के पदसहित स्वर्ग को गमन कर गये ॥ १३ ॥

अत्र स्नात्वा जलं पीत्वा पूजयित्वा जनार्दनम् ॥
इह लोके सुखं भुक्त्वा यात्यंते परमांगतिम् ॥१४॥

भाषा—इस वसुधारा विषं स्नान कर जल पीके श्रीनारायणजी का पूजन करके इस लोक में सुख को भोग अन्तकाल पुरुष परमगति पाता है ॥ १४ ॥

अत्र पुण्यवतां ज्योतिर्दर्शनं जलमध्यतः ॥
यद्दृष्ट्वा न पुनर्मर्त्यो गर्भवासं प्रपद्यते ॥१५॥

भाषा—इस बसुधारा में पुण्य करनेवाले मनुष्यों को जल के बीच ज्योति का दर्शन होता है उसके दर्शन से मनुष्य पुनः गर्भ में नहीं आते ॥ १५ ॥

येऽशुद्धापितजाः पापाः पाखंडमतिवृत्तयः ॥
न तेषां शिरसि प्रायः पतंत्यापः कदाचन ॥१६॥

भाषा--जो जार से पैदा है, पाप करनेवाले हैं, पाखण्ड बुद्धिवाले हैं, पाखण्ड व्यापार जिनका है, उन मनुष्यों के शिर विषें कदाचित् भी जल नही पड़ता है ॥ १६ ॥

॥ सोमकुण्ड ॥

सोमकुंडमिति ख्यातं दृष्टप्रत्ययकारकम् ॥
सोमात्मकं महातीर्थं सर्वकामसमृद्धिदम् ॥१७॥

भाषा—वसुधारा से आगे सोमकुण्डनाथ करके ख्यात हैं। यह तीर्थ दर्शनमात्र से सम्पूर्ण मनोरथों को देनेवाला है, यही कुण्ड चन्द्रात्मक नाम से महातीर्थ कहावता है, सम्पूर्ण काम और समृद्धि का देनेवाला है ॥ १७ ॥

सोमेन सह वर्द्धते ह्रसते च महामुने ॥
तत्र दिव्यं तपस्तप्त्वा गतोऽवस्थामिमां विधुः ॥१८॥

भाषा—सोमकुण्ड का जल चन्द्रमा के साथ २ ही घटता तथा बढ़ता है। चन्द्रमा ने इस तीर्थपर तपस्या करके, हे महामुने! सोलह कलाओं सहित आकाशमार्ग पाया था ॥ १८ ॥

प्रसन्नो बदरीनाथः श्रैष्ठ्यं सर्वग्रहेष्वपि ॥
कुंडस्य सोमतां चादात् कामौघप्रदतामपि ॥१९॥

भाषा—श्रीबदरीनाथ जी बड़ी प्रसन्नता से चन्द्रमा को सर्व ग्रहों में श्रेष्ठ करते भये और सोमकुण्ड को कामौघ सोमता को देते भये ॥ १९ ॥

तत्तीर्थे स्नानजाप्यादि सर्वकामप्रदं नृणाम् ॥
शुक्ले पक्षे जपन्मंत्रं षण्मासात्सिद्धिमेष्यति ॥२०॥

भाषा—इस तीर्थ के विषे स्नानादि कर्म करनेवाले पुरुष सर्व कामनाओं को प्राप्त होते हैं और शुक्लपक्ष के जप आरम्भ कर छः महीने तक जो प्राणि जप करे तौ जप की सिद्धि होवे ॥ २० ॥

॥ सत्यपद ॥

अस्ति सत्यपदं नाम तीर्थं त्रैलोक्यदुर्लभम् ॥
तत्र स्नानेन सारूप्यं विष्णोर्यात्यधमः पुमान् ॥२१॥

भाषा—और सत्यपद नाम तीर्थ त्रैलोक्य में दुर्लभ है, यहां स्नान करने से अधम पुरुष भी विष्णु रूप हो जाता है ॥ २१ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखण्डे श्रीशिवकार्तिकसंवादे बदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां अष्टमोऽध्यायः समाप्तः

॥ अथ नवमोऽध्यायप्रारंभः ॥

॥ पञ्चधारा ॥

श्रीशिव उवाच-ततो नैर्ऋत्यदिग्भागे पंचधाराः पतंत्यधः ॥
प्रभासं पुष्करं चैव गया नैमिषमेव च ॥
कुरुक्षेत्रं विजानीहि द्रवरूपं षडानन ॥ १ ॥

भाषा—श्रीशिवजी कहते भये। हे षड़ानन! उसके नैऋत्य कोण में पांच जल की धारा पड़ती हैं। प्रभास १ पुष्कर २ गया ३ नैमिषारण्य ४ कुरुक्षेत्र ५ यह पांच तीर्थ जल रूप से तहाँ विराज रहे हैं ॥ १ ॥

पुरा ते ब्रह्मणः स्थानं गता मलिनरूपिणः ॥
पापिनां स्पर्शरूपण विनयाद्धृतबुद्धयः ॥ २ ॥

भाषा—पहले इस पवित्र स्थान में किसी अशुद्ध पापी जनने प्रवेश किया था जिसके स्पर्शमात्र ही से उनका रूप अशुद्ध हुआ। इससे यह पांचों तीर्थ ब्रह्मलोक को जाते भये ॥ २ ॥

तत्र गत्वा नमस्कृत्य ब्रह्माणं लोकभावनम् ॥
ऊचुः प्रांजलयः सर्वे निजागमनकारणम् ॥ ३ ॥

भाषा—सत्यलोक में जायके पांचों तीर्थ हाथ जोड़कर सृष्टिकर्ता ब्रह्मा से नमस्कार कर अपने आने का कारण कहने लगे ॥ ३ ॥

तच्छ्रुत्वा ध्यानमालंब्व प्रहस्य जगदीश्वरः ॥
उवाच वचनं चारु स्मृत्वा बदरिकाश्रमम् ॥ ४ ॥

भाषा—उन तीर्थों के वचन श्रवण करके जगत्कर्ता ब्रह्माजी ध्यान धर बदरिकाश्रम को देखने लगे और हँस करके सुन्दर वचनों सहित बोले ॥ ४ ॥

मा भैष्ट गच्छत इष्टं हरेर्बदरिकाश्रमम् ॥
यस्यां निवेशमात्रेण क्षीणपापा भविष्यथ ॥ ५ ॥

भाषा—आप भय न करो श्रीनारायण के पवित्र बदरिकाश्रम को गमन करो जिस बदरिकाश्रम में प्रवेशमात्र ही से तुम शुद्ध क्षीणपाप हो जाओगे ॥ ५ ॥

ततस्ते हर्षवेगेन नमस्कृत्य पितामहम् ॥
जग्मुरुत्फुल्लनयना विशालाममितप्रभाम् ॥ ६ ॥

भाषा—तिसके उपरान्त अति शीघ्र ब्रह्माजी को नमस्कार करके हर्ष के मारे अत्यंत फूले हैं नेत्र जिनके ऐसे वह पांचों तीर्थ विशाल कान्तिवाली श्रीबदरी पुरी को आये ॥६॥

यस्यां प्रवेशमात्रेण स्नपनाद्विगतैनसः ॥
ततो द्विरूपमास्थाय स्वस्थानं ययुरुत्सुकाः ॥
द्रवरूपेण चान्येन पंच तिष्ठंति निर्मलाः ॥ ७ ॥

भाषा—जिस पुरी में प्रवेश व स्नान करने ही से पाप जिनके दूर हो गये हैं ऐसे वह तीर्थ दो रूप धारण करके उत्कंठित हो अपने स्थान को जाते भये और दूसरे निज रूप से निर्मल पांचों तीर्थ बद्रीपुरी में स्थित हुए ॥ ७ ॥

तेषु स्नात्वा विधानेन कृत्वा नित्यक्रियाः शुचिः ॥
ततस्तीर्थफलं लब्ध्वा यांत्यंते परमां गतिम् ॥ ८ ॥

भाषा—उन पांचो तीर्थों में विधान से स्नान कर पवित्र हो संध्या तर्पणादि कर्म उन तीर्थों का फल पायके अंतकाल में वे पुरुष परमगति को प्राप्त होते हैं ॥ ८ ॥

॥ सोमकुण्डमाहात्म्य ॥

ततस्तु विमलं तीर्थं सोमकुंडाभिध शुचि ॥
तपश्चचार भगवान सोमो यत्र कलानिधिः ॥ ९ ॥

भाषा—सोमकुण्ड नाम निर्मल तीर्थ है जिस तीर्थ विषे सर्व कलाओं से विभूषित कलासमुद्र भगवान् चन्द्रमा तपस्या करते थे ॥ ९ ॥

श्रीशिव उवाच—पुराऽत्रितनयः श्रीमान्सोमस्तु प्राप्तयौवनः ॥
श्रुत्वा स्वर्वासिनां सौख्यं गंधर्वेभ्यः पुनः पुनः ॥
ततःस्वपितर प्रायात्स्वःसुखं लभ्यते कथम् ॥१०॥

भाषा—श्रीशिवजी कहते हैं। पहले अत्रिऋषिका पुत्र शोभायमान चन्द्रमा जब यौवनावस्था को प्राप्त हुआ। गंधर्वों के मुख से पुनः पुनः स्वर्गवासियों के अधिक सुख श्रवण करके अपने पिता अत्रि ऋषि को पूछता भया कि स्वर्ग लोक का सुख कैसे मिलता है ॥ १० ॥

ग्रहनक्षत्रताराणामितरेषां पतिः कथम् ॥
स्यामहं भगवन्नेतत्कृपया वद मे पितः ॥११॥

भाषा—और हे प्रभो! ग्रह नक्षत्र तारों का व दूसरों का भी मैं केसे स्वामी हो सक्ता हूँ। हे भगवन् पिताजी! यह कृपा करके मेरे पास कहो ॥ ११ ॥

अत्रिरुवाच—तपसाराध्य गोविन्दं यमैर्भक्तिं प्रकल्प्य च ॥
जपस्व परमं जाप्यं मंत्रमष्टाक्षरं हरेः ॥१२॥

भाषा—अत्रि ऋषि कहते हैं। तपस्या से नारायण जी को प्रसन्न करने को श्रेष्ठ जपने के अष्टाक्षर मंत्र का तुम जप करो ॥ १२ ॥

अष्टाशीतिसहस्त्राणि भगवद्दर्शनोत्सुकः ॥
तपस्तेपे स परमं सर्वलोकभयावहम् ॥१३॥

भाषा—तब चन्द्रमा श्रीनारायणजी के दर्शनों की अभिलाषा किये हुए बदरीक्षेत्र में अट्ठासी हजार वर्ष पर्यंत सब लोकों को त्रास देनेवाली अद्भुत तपस्या की ॥ १३ ॥

ततस्तुष्टो हरिः साक्षाच्छंखचक्रगदाधरः ॥
उवाच वचनं चारु सोमं शांतं तपोनिधिम ॥१४॥

भाषा—इसके उपरांत श्रीनारायणजी प्रसन्न होके शंख चक्र गदा पद्म धारण कर तपस्या के समुद्र शांतरूप चन्द्रमा से मधुर वचनों से कहते भये ॥ १४ ॥

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते वरं वरय सुव्रत ॥
तपसाराधितो नूनं त्वयाहं तपसां निधे ॥१५॥

भाषा—तुमने सुन्दर व्रत किया है। उठो उठो तुमारा कल्याण होवे! वर मांगो। तुम तपस्या के समुद्र हो। तुमनें निश्चय ही तपस्या से मुझको प्रसन्न किया है॥ १५ ॥

सोम उवाच—यदि तुष्टो भवान्मह्यं भगवान् वरदर्षभ ॥
ग्रहनक्षत्रताराणामाधिपत्यं प्रयच्छ मे ॥
तदौषधीनां विप्राणां यामिन्याश्च जगत्पते ॥१६॥

भाषा—चन्द्रमा कहते भये। आप वर देनेवालों में श्रेष्ठ हो; यदि मेरे ऊपर आप प्रसन्न हों तो हे जगत्पते ! ग्रह, नक्षत्र, तारा, औषधि रात्रि और ब्राह्मणों का प्रभुत्व प्रदान कीजिये ॥ १६ ॥

श्रीभगवानुवाच—दुर्लभं प्रार्थितं वत्स वितरामितथाप्यहम ॥
एवमस्तु ततः सर्वे समागत्य दिवौकसः ॥१७॥

भाषा-श्रीनारायणजी कहते भये। हे चन्द्रमा ! तुमने असंभव वर की इच्छा की है। हे वत्स ! तौभी मैं प्रसन्न होकर वरप्रदान करता हूँ ऐसा ही होगा। इसी समय देवतेगण आये ॥ १७ ॥

ततो विमालया युतो रथेन शुभ्रवर्चसा ॥
अभिष्टुतः सुरैरभूद्दिवं गतो निशाकरः ॥ १८ ॥

भाषा-तिससे उपरांत श्वेत तेजवाले रथ विषे चढ़ के दिव्य माला को धारण किये देवतागणों से स्तुति सुनते हुए चन्द्रमा आकाश को जाते भये ॥ १८ ॥

ततः प्रभृति तीर्थानां सोमकुंडोतिदुर्लभः ॥
यद्दृष्टिमात्रान्मनुजाः सुनिर्दोषा भवंति हि ॥
यदुपस्पर्शनाद्यांति सोमलोकमनिन्दिताः ॥ १९ ॥

भाषा-उस दिन से तीर्थों विषे चन्द्रकुण्ड अत्यन्त दुर्लभ हो गया जिस चन्द्रकुण्ड के देखने ही से मनुष्य सब पापों से रहित हो जाते हैं जिसके स्पर्शमात्र से शुद्ध होकर प्राणी सोमलोक को जाते हैं ॥ १६ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखण्डे श्रीशिवकार्तिकसंवादे बदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः समाप्तः

॥ अथ दशमोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ द्वादशादित्यतीर्थ ॥

ततस्तु द्वादशादित्यतीर्थं पापहरं परम ॥
यत्र तप्त्वा तपः कृच्छ्रं काश्यपाः सूर्य्यतां ययुः ॥ १ ॥

भाषा—चन्द्रकुण्ड से पापों को हरनेवाला बारह सूर्यों का उत्तम तीर्थ है जिस तीर्थ विषे कश्यप प्रजापति के पुत्र सूर्यस्वरूप को प्राप्त हुए ॥ १ ॥

महारोगाभिभूतस्तु स्नात्वा तत्र जले शुचिः ॥
रोगमुक्तोऽचिरादेव नात्र कार्या विचारणा ॥२॥

भाषा—जो मनुष्य बड़े २ रोगों से पीड़ित हो रहे हैं वह तीर्थ के जल से स्पर्श होते ही रोगों से छूटकर निर्मल हो जाते हैं इसके करने में कुछ विचार नहीं करना ॥ २ ॥

॥ पुरुषार्थ तीर्थ ॥

चतुःस्रोतः परमतीर्थं विलोचनमनोहरम् ॥
धर्मार्थकाममोक्षास्ते तिष्ठंति द्रवरूपिणः ॥३॥

भाषा—चार स्रोतों से प्रवाह होता हुआ श्रेष्ठ तीर्थ मन को मुग्ध करनेवाला है वह धर्मार्थ काम मोक्ष देने को जलरूप से प्रतिष्ठित है ॥ ३ ॥

हरेराज्ञानुसारेण क्षेत्रेऽस्मिन् वैष्णवे स्वयम् ॥
पुरुषार्था द्रवीभूतां भूतानां प्रीतिहेतवे ॥४॥

भाषा—श्रीबद्रीनारायण की आज्ञानुसार बद्रीक्षेत्र में चारों पदार्थ प्राणियों के हितार्थ जलरूप से बहते हैं ॥ ४ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे सपादलक्षसंहितायां शिवकार्तिकेयसम्वादे
श्रीबदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां दशमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १० ॥

॥ अथ अथैकोदशाऽध्यायप्रारंभः ॥

श्रीशिव उवाच—ततः सप्तपदं नाम तीर्थं सर्वमनोहरम् ॥
त्रिकोणाकारमेवैतत्कुंडं कल्मषनाशनम् ॥१॥

भाषा—शिवजी कहते हैं। उस तीर्थ से उपरांत सबके मन हरनेवाला सप्तपद नाम तीर्थ है। वह सब पापों का नाश करनेवाला त्रिकोणाकार कुण्ड है ॥ १ ॥

एकादश्यां हरिस्तत्र स्वयमायाति पावने ॥
तत्र व ऋषयः सर्वे मुनयश्च तपोधनाः ॥
स्नातुमायांति विधिवत्कुंडे सप्तपदाभिधे ॥२॥

भाषा—इस पवित्र तीर्थ पर एकादशी को श्रीनारायण और तपोधन सब ऋषि मुनि भी विधिपूर्वक स्नान करने आते हैं ॥ २ ॥

स्वशाखोक्तविधानेन स्नानं कृत्वा विचक्षणः ॥
सत्यलोकमवाप्नोति ततो नैःश्रेयसं पदम् ॥३॥

भाषा—अपनी वेदशाखाके कहे हुए विधान करके पंडित पुरुष स्नान करके सत्यलोक को प्राप्त होते हैं और उपरान्त मोक्षपद को पाते हैं ॥ ३ ॥

अहोरात्रं शुचिर्भूत्वा उपोष्य च जनार्दनम् ॥
पूजयित्वा विधानेन स जीवन्मुक्तिभाजनम् ॥४॥

भाषा—एक दिन रात्रितक जो पुरुष पवित्र होके उपवास सहित विधान से श्रीनारायणजी का पूजन करता है वह जीवन्मुक्त होता है ॥ ४ ॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च त्रिकोणस्थाः समाहिताः ॥
तपः कुर्वन्त्यविरतं सर्वलोकहितैषिणः ॥५॥

भाषा—ब्रह्मा बिष्णु और महादेव तीनों देवते निरंतर तप करते हैं। सब लोकों का हित चाहते हुए सप्तपद कुण्ड के त्रिकोण पर क्रम से स्थित हैं ॥ ५ ॥

॥ विमलतीर्थ ॥

ततोतिविमलं नाम नरनारायणाश्रितम् ॥
द्विविधं दृश्यते यत्र शैलः परमदुर्लभः ॥
उभाभ्यामुभयोः प्रीतिर्भवतीति सुनिश्चितम् ॥६॥

भाषा—इससे उपरान्त नर नारायणजी का आश्रय किया हुआ विमल नाम तीर्थ है, यहाँ से परम दुर्लभ नर नारायण पर्वत दो प्रकार का दीखता है, जिससे नरनारायण में प्रीति उत्पन्न होती है। यह निश्चय जानना ॥ ६ ॥

॥ उर्वशीकुण्ड ॥

ततो नारायणावासाशिखरे विमलाकृति ॥
तीर्थं पवित्रमुर्वश्या अभिव्यक्तिर्यतोऽभवत ॥७॥

भाषा—इस तीर्थ से उपरांत नारायण पर्वत के शृङ्गपर निर्मलाकार पवित्र तीर्थ है जिससे उर्वशी प्रकट हुई है ॥ ७ ॥

श्रीशिव उवाच-धर्मस्य पत्नी मूर्त्यासीत्तस्यां जातौ षडानन ॥
नरनारायणौ साक्षाद्भगवान् केवलं स्वयम् ॥८॥

भाषा—शिवजी कहते हैं। हे कार्तिकेय! धर्म देवता की स्त्री मूर्ति देवी से आप भगवान् नर नारायण नाम से पैदा हुए ॥ ८ ॥

पितुराज्ञामनुप्राप्य तपोर्थं कृतमानसौ ॥
उभयोर्निर्गयोस्तौ तु तपोमूर्ती इव स्थितौ ॥९॥

भाषा—अपने पिता से आज्ञा पाके तप के वास्ते मन किया है जिन दोनों भ्राताओं ने वह दोनों नर नारायण नाम करके तपोमूर्ति हो दोनों पर्वतों में स्थित होते भये ॥ ९॥

तौ दृष्ट्वा विस्मितः शक्रः प्रेषयामास मन्मथम् ॥
सगणं तपसो ध्वंसो यथा स्याद्गंधमादने ॥१०॥

भाषा—इन्द्र ने दोनों भाइयों को तप करते हुए देख के आश्चर्ययुक्त हो, उनके तप को ध्वंस करने के हेतु गंधमादन पर्वत में बसंतऋतु और अप्सराओं के सहित कामदेव को भेज दिया ॥ १० ॥

विक्रम्य विविधं ते तु नारायणबलोदयम् ॥
ज्ञात्वा हतमनस्कांस्तानुवाच जगतां प्रभुः ॥११॥

भाषा—नारायणजी के प्रभुत्व से नाना प्रकार के छल करके भी थकित कामदेव को देख जगत्प्रभु बोले ॥ ११ ॥

श्रीभगवानुवाच—किमर्थमागता यूयमातिथ्यं गृह्णीत हि मे ॥
इत्युक्त्वा फलमूलानि तेभ्यो मायोर्वशीं तदा ॥
दत्त्वांतर्द्धिमगाद्देवः पश्यतां विघ्नकारिणाम ॥१२॥

भाषा—श्रीनारायणजी कहते हैं । तुम यहां किस प्रयोजन से आये हो ? हमारा आतिथ्य सत्कार स्वीकार करो, इतना कहकर कन्द, मूल, फल देके श्रीनारायणजी अन्तर्ध्यान हो गये ॥ १२ ॥

ते तु गत्वा दिवं भीताः शक्रायोचुर्बलं हरेः ॥
शक्रस्तामुर्वशीं प्राप्य श्रुत्वाऽश्चर्यमितोऽभवत् ॥१३॥

भाषा--वह कामादि सैन्य डरती हुई स्वर्ग को जाके इन्द्र के पास श्रीनारायण के बल को कहने लगी, इन्द्रने उर्वशी अप्सरा से सर्व विस्तार श्रवण किया और आश्चर्ययुक्त होता भया ॥ १३ ॥

ततः प्रभृति तत्तीर्थमुर्वशीनामतः सुत ॥
प्रसिद्धं यत्र भगवान् स्वयमास्ते तपोमयः ॥१४॥

भाषा—हे कार्तिकेय! उस दिन से वह तीर्थ उर्वशी के नाम से प्रसिद्ध है। इस तीर्थ पर आप भगवान् तप की मूर्ति होकर विराजमान हैं ॥ १४ ॥

तत्र स्नात्वा विधानेन उपोष्य रजनीद्वयम ॥
पूजयित्वा हरिं भक्त्या नरो नारायणो भवेत् ॥१५॥

भाषा—इस तीर्थ में विधान से स्नान कर दो रात्रि उपवासी रहे, और भक्तियुक्त हो नारायण का पूजन करे तो नर से नारायण होवे ॥ १५ ॥

उर्वशीकुंडमासाद्य कामनावशतो नरः ॥
उर्वशीलोकमाप्नोति स्नानमात्रेण पुत्रक ॥१६॥

भाषा—उर्वशी कुण्ड को पाय के उसमें मनुष्य कामना करके स्नान करे तो हे पुत्र कार्तिकेय ! वह नर उर्वशी लोक को प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

सदैव भगवानत्र उर्वशीकुंडसान्निधौ ॥
भूतानां भावयन् भव्यं तपोमूर्तिरवस्थितः ॥१७॥

भाषा—इस उर्वशी कुण्ड के निकट श्रीभगवान्जी सदैव प्राणियों के कल्याण को चाहते हुए तपस्या को स्थित हैं ॥ १७ ॥

॥ आयुधतीर्थ ॥

उर्वश्या दक्षिण भागे आयुधानि जगत्पतेः ॥
विद्यंते दर्शनाद्येषां न शस्त्रभयभाग् भवेत् ॥१८॥

भाषा—उर्वशीकुण्ड के दाहिनी ओर श्रीनारायणजी के आयुध (शस्त्र) विराज रहे हैं जिनके दर्शन से मनुष्य को शस्त्रों का भय नहीं होता है ॥ १८ ॥

(केदारखडान्तर्गत)

॥ रुद्रतीर्थ ॥

रुद्रतीर्थे तथा स्नात्वा रुद्रलोके महीयते ॥
ब्रह्मतीर्थं तथा ख्यातं ब्रह्मलोकप्रदायकम् ॥१९॥

भाषा—रुद्रतीर्थ में स्नान करके मनुष्य रुद्रलोक को जाता है तथा ब्रह्मतीर्थ ब्रह्मलोक का देनेवाला यहीं ख्यात है ॥ १९ ॥

॥ मुचुकुन्दाश्रम ॥

मुचुकुन्दाश्रमो रम्यो देवदानवपूजितः ॥
कुंडं तत्र समाख्यातं मौचुकुंदेति संज्ञितम् ॥२०॥

भाषा—देव तथा दानवों से पूजित मुचुकुन्दाश्रम यहीं है, मुचुकुन्दानाम से वहाँ कुण्ड ख्यात है ॥ २० ॥

॥ व्यासतीर्थ ॥

यत्र स्नात्वा सकृदपि न भूयोऽभिजायते ॥
व्यासतीर्थं समाख्यातं व्यासदेवेन सेवितम् ॥२१॥

भाषा—जहाँ एक बार स्नान करने से भी मनुष्य फिर इस संसार में जन्म नहीं लेता। व्यासदेवजी से सेवन किया हुआ व्यासतीर्थ भी वहीं ख्यात है ॥ २१ ॥

अवगाह्य तथा दत्त्वा जप्त्वा ब्रह्म लभेन्नरः ॥
केशवप्रयागतीर्थं क्षेत्राणां परमं मतम् ॥२२॥

भाषा—वहां स्नान करके जप, दानादिक कर्म करने से मनुष्य को ब्रह्मकी प्राप्ति होती है। क्षेत्रों में परम क्षेत्र केशव प्रयाग भी वहीं है ॥ २२ ॥

॥ मणिभद्राश्रम ॥

मणिभद्राश्रमस्तत्र महाविष्णुश्च तत्र वै ॥
पुरा यत्र वरारोहे भीमसेनोऽजयाद्रिपून ॥२३॥

गंधर्वाख्यान्महाभागे मद्रभद्रपुरःसरान् ॥
तत्र पाण्डवतीर्थं हि पाण्डवा यत्र संस्थिताः ॥२४॥

भाषा—हे महाभाग! मणिभद्राश्रम भी वहीं है, तथा महाविष्णु भी वहीं हैं और वहीं पाण्डवतीर्थ है, जहाँ पाण्डवोंने स्थिति की थी। पहले जहाँ भीमसेन ने गन्धर्वाख्य तथा मद्रभद्रादिक शत्रुओं को जीता था॥ २३ ॥ २४॥

तदश्चक्रुर्महात्मानो धौम्यलोमशसंयुताः ॥
इति सर्वाणि मुख्यानि तीर्थानि कथितानि वै ॥२५॥

भाषा—और वे महात्मा धौम्य और लोमश के साथ तप करते हुए रहे। ये सब मुख्य तीर्थ आपके प्रति कहे॥ २५ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे संपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखंडे शिवकार्तिकेयसम्वादे श्रीबदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां एकादशोऽध्यायः समाप्तः॥ ११॥

॥ अथ द्वादशोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

॥ मेरुशिखर ॥

श्रीशिव उवाच—ब्रह्मकुंडाद्दक्षिणतो नरावासगिरिर्महान् ॥
मेरुर्भगवता यत्र स्थापितो लोकसुन्दरः ॥१॥

भाषा—श्रीशिवजी कहते भये। ब्रह्मकुण्ड से दक्षिण की ओर नरके रहने का उँचा शिखर है जिस नर पर्वत विषे भगवान् ने जगत् में सौन्दर्ययुक्त मेरु नाम पर्वत स्थापन किया है ॥ १ ॥

स्कंद उवाच-कथं भगवता मेरुः स्थापितो नरसन्निधौ ॥
महत्कौतूहलं तात कथ्यतां यदि रोचते ॥२॥

भाषा—स्वामी कार्तिकेय कहते हैं। हे महाराज! भगवान्ने नरके निकट मेरु कैसे

स्थापन किया ? मुझको बड़ा आश्चर्य मालूम होता है यदि आप की भी रुचि हो तो कहिये ॥ २ ॥

यदा भगवतो वासो विशालायां समागताः ॥
देवा महर्षयः सिद्धा सविद्याधरचारणाः ॥३॥

भाषा—श्रीशिवजी कहते हैं। जिस दिन से भगवान् का वास श्रीबदरीक्षेत्र में हुआ तब से देवता, ऋषीश्वर, सिद्ध, चारण इस क्षेत्रमें आते भये ॥ ३ ॥

विहाय मेरुशृंगाणि भगद्दर्शनोत्सुकाः ॥
भगवद्दर्शनाह्लादनिवृत्तेतरवासनाः ॥ ४ ॥

भाषा--सुमेरु पर्वत के शृंगों को छोड़कर नारायण के दर्शन करने से जो आहलाद हुआ तिससे जिनकी सब वासना मिट गई है ॥ ४ ॥

तदा तु भगवांस्तेषां सुखहेतोः षडानन ॥
उत्पाट्य मेरुशृंगाणि करेणैकेन लीलया ॥
स्थापयामास सर्वेषां भगवान् प्रीतिमावहन् ॥ ५ ॥

भाषा—हे कार्तिकेय! तिस समय श्रीनारायण उन देवताओं के कारण से एक हाथ करके बिना परिश्रम से मेरु पर्वत के शृंगों को उखाड़ के उनको पुनः स्थापन कर प्रेम सहित लीला दिखाते भए ॥ ५ ॥

ततः सर्वे समालोक्य गिरिं कांचननिर्मितम् ॥
प्रसंगात्तुष्टुवुर्देवा नारायणमनामयम् ॥ ६ ॥

भाषा—उपरान्त सुवर्ण का मेरु बना हुआ देख के सब देवते प्रसंग करते हुए आनन्दस्वरूप श्रीनारायण की स्तुति करते भये ॥ ६ ॥

ततस्तुष्टो हि भगवांस्तेषामास दिवौकसाम् ॥
वरं वृणुध्वमित्युक्तास्तेहोचुर्वरदर्षभम् ॥ ७ ॥

भाषा—श्रीभगवान् देवताओं के ऊपर प्रसन्न हो बोले कि तुम वर माँगो, देवतेगण वर देनेवालो में श्रेष्ठ श्रीभगवान् जी से बोलते भये ॥ ७ ॥

परितुष्टो भवान् साक्षाद्देवदेव जगत्पते ॥

बदरी न त्वया त्याज्या नच मेरुः कदाचन ॥ ८ ॥

भाषा—जो आप भगवान् देवतों के देवते जगत् के स्वामी हमारे ऊपर प्रसन्न हो तो बदरीक्षेत्र और मेरु पर्वत के शृंग को तुमने कभी त्याग नहीं करना ॥ ८ ॥

श्रीशिव उवाच–देवैस्तदा स इत्युक्तो भगवान् विष्णुरव्ययः ॥
एवमस्त्विति चाभाष्य तत्रैवांतर्हितो हरिः ॥ ९ ॥

भाषा—श्रीशिवजी कहते हैं। अविनाशी भगवान् विष्णु से देवतों ने विज्ञप्ति की, तब श्रीनारायण ने यह वर दिया ऐसा ही होयगा और भगवान् उसी जगह अन्तर्ध्यान हो गये ॥ ९ ॥

ततः प्रभृति ते सर्वे मेरुशृंगविहारिणः ॥
नरनारायणाभ्यां ते पाल्यमाना मुहुर्मुहुः ॥ १० ॥

भाषा—उस दिन से सब देवता मेरु पर्वत के शृंग में विहार करते हैं तथा नर नारायण दोनों भ्राता उनका पालन करते हैं ॥ १० ॥

कदाचिद्दिवि तिष्ठंति कदाचिन्मेरुमध्यतः ॥
निर्विशंका निरुद्वेगा ऋषयश्च तपोधनः ॥ ११ ॥

भाषा—किसी समय देवता ऋषीश्वर तप करनेवाले स्वर्ग में रहते हैं कभी निःसन्देह प्रसन्न होकर सुमेरु के बीच में रहने लगे ॥ ११ ॥

भगवानपि तत्रैव नररूपेण तिष्ठति ॥
धनुर्बाणधरः श्रीमांस्तपसा पावकोपमः ॥ १२ ॥

भाषा--श्रीभगवान् जी भी उसी मेरु के शृंग में नररूप करके धनुष बाण धारण किये हुए, शोभायमान, तप की दिव्य अग्नि से शोभित वहाँ ही रहने लगे ॥ १२ ॥

॥ लोकपाल ॥

ततस्त्वपरतस्तीर्थं लोकपालाभिधं परम् ॥
यत्र संस्थापयामास लोकपालान् हरिः स्वयम् ॥ १३ ॥

भाषा—वहां पश्चिम की ओर लोकपाल नाम तीर्थ है इस तीर्थ में श्रीनारायण लोकपालों को स्थापन करते भये ॥१३॥

श्रीशिवउवाच–एकदा मेरुमध्यस्थस्स्वाश्रमान् विहरन्हरिः ॥
देवानामृषिमुख्यानां चरितं द्रष्टुमुद्यतः ॥ १४ ॥

भाषा—श्रीशिवजी कहते हैं। एक समयमें मेरुके मध्य स्थित हो अपने आश्रमों में विहार करते हुए श्रीनारायणजी देवतों में मुख्य ऋषियों के चरित्र अवलोकन करने को उद्यत हुए हुए ॥१४॥

तं दृष्ट्वा सहसोत्थाय नमस्कृत्य पुनः पुनः ॥
ऊचुस्तेऽवनताः सर्वे प्रसीद भगवन्विभो ॥ १५ ॥

भाषा—श्रीनारायणजी को देखके ऋषिलोग शिताब उठकर बारंबार नमस्कार करते हुए नम्र हो बोले। हे भगवन ! आप प्रसन्न होवें ॥१५॥

ततः प्रहस्य भगवानुवाच मधुरं स्वरम् ॥
लोकपालान् समाभाष्य नात्र स्थेयं भवद्भिर्धैः ॥ १६ ॥

भाषा –उपरान्त श्रीभगवानूजी हँस करके मधुर वाणीसे बोले, हे लोकपालो ! तुम यहां वास नहीं कर सक्ते हो ॥१६॥

ऋषयस्तापसाः सिद्धाः सस्त्रीका निवसंत्विह ॥
भवद्विधानामास्थानं पुरैवाकल्पितं मया ॥ १७ ॥

भाषा—ऋषीश्वर, सिद्ध, तप करनेवाले, अपनी स्त्रियों सहित यहां वास करेंगे, तुम्हारे निवास करनेको हमने पहलेही स्थान ढूंढा है ॥१७॥

ततस्तत्पुरतो गत्वा रम्ये गिरिवरे हरिः ॥
लोकपालान्समाहूय स्थापयामास तान् गुह ॥ १८ ॥

भाषा—तब आप उनके आगेसे चले। रमणीय पर्वत विषे लोकपालों को बुलाय, हे कार्तिकेय! इनको स्थापन किया ॥१८॥

तत्र च स्वेन दंडेन भित्त्वाद्रिं जलमाहरत् ॥
क्रीडापुष्करिणीं तेषां निर्ममे स मनोहराम् ॥ १९ ॥

भाषा—तहां अपने दंड करके पर्वतोंको फोड़ श्रीनारायणजीने जल निकाल, मन हरनेवाला क्रीड़ा करने को एक पोखर निर्माण कर दिया ॥१९॥

सस्त्रीका यत्र गीर्वाणा विहरंति निजेच्छया ॥
गायंति ह्यनुमोदंति गंधर्वास्त्रिदिवौकसाम् ॥ २० ॥

भाषा—जहां स्त्रियों सहित देवता अपनी इच्छा करके विहार करते और गंधर्व देवतोंके आगे आनन्द गान करते हैं ॥२०॥

वनानि कुसुमामोदरम्याणि परितो यतः ॥
दिवसा यत्र गच्छंति क्षणप्रायास्तु देहिनाम् ॥ २१ ॥

भाषा—जहां चारों ओर पुष्पोंके नाना प्रकारकी सुगन्ध सहित रमणीय वन हैं जिन के अवलोकन से प्राणियोंके दिन मुहूर्तके समान व्यतीत होते हैं ॥२१॥

भगवानपि तत्रैव तेषामानंदमावहन् ॥
द्वादश्यां पौर्णमास्यां च स्वयमायाति मज्जने ॥ २२ ॥

भाषा—भगवान् भी तहां लोकपालोंके आनन्दको बढ़ानेके लिये द्वादशी पौर्णमासी को स्नान करने वहां आने लगे ॥२२॥

सर्वतीर्थावगाहेन यत्पुण्यं परकीर्तितम् ॥
तत्फलं तत्क्षणादेव दंडपुष्करिणीक्षणात् ॥ २३ ॥

भाषा—सब तीर्थों विषे स्नान करके जो फल होता है वही फल दंडपोखरके देखने से तत्क्षण प्राप्त होता है ॥२३॥

यत्र काम्यानि कर्माणि फलंत्याशु मनास्विनाम् ॥
यत्र पिंडप्रदानेन गयातोऽष्टगुणंफलम् ॥ २४ ॥

भाषा—जिस दंड पोखर विषे कामनाके कर्म बुद्धिमानोंके किये हुए शिताब फलते हैं वहां पिंडदान करनेसे गयाजीसे अष्टगुणा फल अधिक कहा है ॥२४॥

बदरीतीर्थमध्येषु गुप्तमेतत्सुरोत्तमैः ॥
न वाच्यं यत्र कुत्रापि तव प्रीत्या मयोदितम् ॥
दुर्लभं त्रिषु लोकेषु स्मरणाद्याति पातकम् ॥ २५ ॥

भाषा—बदरीक्षेत्रके तीर्थोंके बीचमें यह तीर्थ देवतोंने उत्तम समझके गुप्त स्थान पर

रचा है । किसीको नहीं कहना । हमने तुम्हारी प्रीतिसे कहा है । यह तीर्थ तीनों लोक विषे दुर्लभ है जिसके स्मरण मात्र ही से महापातकोंका नाश होता है ॥२५॥

अचिरेणैव कालेन मंत्राणां सिद्धिमिच्छताम् ॥
दंडपुष्करिणी रम्या द्रष्टव्या सिद्धिदायिनी ॥ २६ ॥

भाषा–थोड़े ही समयमें मंत्रोंकी सिद्धि चाहनेवाले पुरुषोंको सुन्दर सिद्धि देनेवाली दंडपुष्करिणी देखनी कही है ॥२६॥

॥ मानसोद्भेद ॥

श्रीशिव उवाच–गङ्गाभ्यां यत्र संयोगो मानसोद्भेदसंनिधौ ॥
तत्तीर्थं विमलं पुण्यं प्रयागादधिकं मतम् ॥ २७ ॥

भाषा–श्रीशिवजी कहते हैं । जहां मानसोद्भेद तीर्थके निकट दो गङ्गाओंका संगम है वह तीर्थ पुण्य देनेवाला शुद्ध गंगा यमुनाके संगम से अधिक कहा है ॥२७॥

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि वायुभक्षो जनो भवेत् ॥
तत्फलं स्नानमात्रेण गङ्गायाः संङ्गमे नृणाम् ॥ २८ ॥

भाषा—तीस सहस्र वर्ष तक मनुष्य वायु भक्षण करने से जो फल पाता है वही फल अलकनंदाजीके संगम विषे स्नान करनेसे होता है ॥२८॥

स्वभावादलकनंदाद्यादर्शनं हंति पातकम् ॥
किं पुनः संगमस्नानात्फलाधिक्यं प्रचक्षते ॥ २९ ॥

भाषा—अलकनंदा आद्य गंगाका दर्शन स्वभाव से ही पातकोंका नाश करता है तब पुनः संगम के स्नान से अधिक फल देनेवाली है ॥२६॥

दृष्टिमात्रेण गङ्गाया बदर्य्याश्चापि सन्निधौ ॥
कोटियज्ञफलं पुंसां जायते नात्र संशयः ॥ ३० ॥

भाषा—श्रीबदरिकाश्रमके निकट अलकनंदाजीको देखनेहीसे पुरुषोंको कोटि यज्ञ कियेका फल होता है इसमें सन्देह नहीं ॥३०॥

॥ धर्मक्षेत्र ॥

संगमात्पश्चिमे भागे धर्मक्षेत्रं प्रकीर्तितम् ॥
यत्र मूर्तावुभौ जातो नरनारायणावृषी ॥ ३१ ॥

भाषा–संगमसे पश्चिमकी ओर धर्मदेवता का क्षेत्र है जिस क्षेत्र में* मूर्ति देवीसे दोनों नर नारायण ऋषि उत्पन्न हुए हैं ॥३१॥

ततो दक्षिणादिग्भागे उर्वशीसंगमाधिकम् ॥
सर्वपापहरं पुण्यं स्नानमात्रेण देहिनाम् ॥ ३२ ॥

भाषा–तहांसे दक्षिण दिशा में उर्वशी संगम है वहाँ स्नान मात्रही से प्राणियोंके सब पापोंका नाश हो जाता है तथा पुण्यका देनेवाला है ॥३२॥

॥ कूर्मोद्धातीर्थ ॥

कूर्मोद्धारस्ततः साक्षाद्धरिभक्त्येकसाधनम् ॥
स्नानमात्रेण भूतानां सत्वशुद्धिः प्रजायते ॥ ३३ ॥

भाषा–उससे उपरान्त कूर्मोद्धार नामक तीर्थ साक्षात् नारायणकी भक्तिका एक साधन है जहां स्नान करनेहीसे प्राणियोंके सत्वकी निर्मलता होती है ॥३३॥

* मातामूर्ति स्थानपर वामन द्वादशीको अच्छा मेला होता है उस दिन साक्षात् बदरीविशाल की पालकी इस स्थानपर धूमधामसे जाती है।

संकल्प्य तर्पयित्वा च नत्वा गुर्वादिकांस्तथा ॥
ध्यात्वा नारायणं देवं निर्गच्छेदात्मनः स्थलात् ॥४॥

भाषा–प्रथम श्रीगणेशजीको नमस्कार कर संकल्प करके पितृनको तर्पण और गुरु ब्राह्मणादिकों को नमस्कार करके श्रीनारायणजी का ध्यान धर निज गृहसे प्रस्थान करे ॥३॥

पुण्याहं वाचयेत्तत्र बदरीनाथमानसः ॥
ततः संप्रार्थयेद्विप्रान्पूजितान् वसनादिभिः ॥ ४ ॥

भाषा–श्रीबदरीनाथजीका ध्यान कर पुण्याहवाचन करावे तथा वस्त्रादि देकर ब्राह्मणोंकी प्रार्थना करे ॥४॥

आज्ञापयध्वं भूदेवा मां वः शरणमागतम् ॥
भवतां कृपया देवा कृतयात्रो यथा पुनः ॥ ५ ॥

भाषा–हे भूदेव ब्राह्मणो ! मैं आपकी शरण आया हूँ मुझको आज्ञा दो आपकी कृपासे यात्रा करके फिर ॥५॥

आगच्छेयं सुखं गेहे लभेयं धर्ममुत्तमम् ॥
भवन्तो ब्राह्मणा पूर्वं निर्मिता धर्मदर्शकाः ॥ ६ ॥

भाषा—सुखपूर्वक घर लौट आऊं। तथा उत्तम धर्मको प्राप्त होऊं। आपको ब्रह्माजी ने पहलेही से धर्मका दर्शन करानेवाला बनाया है ॥ ६ ॥

अन्नं परस्य नो भुंजेद्यतो निष्फलता स्मृता ॥
यद्यत् कर्म महाभाग क्रियते वै यदन्तकैः ॥ ७ ॥

भाषा—पराया अन्न भोजन न करे इससे फलकी निष्फलता होती है हे महाभाग! उस पराये अन्नसे जो कर्म किया जाता है ॥७॥

स तस्य किल्बिषं भुंक्ते अन्नदातुश्च तत्फलम ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन परान्नं वर्जयेत्सुधीः ॥ ८ ॥

भाषा—वह उसका पाप खाता है. उसकी यात्राका फल अन्न देनेवालेको मिलता है। इस कारण बुद्धिमान् मनुष्य यत्नपूर्वक यात्रा में पराया अन्न न खावे ॥८॥

अध्यात्मचिन्तनं कुर्वन् शृण्वन् वै तीर्थवैभवम्
गच्छेन्नारायणं स्थानं सर्वदेवैरनुष्ठितम् ॥ ॥ ९ ॥

भाषा—अध्यात्मचिन्तन तथा तीर्थका वैभव (बद्रीमाहात्म्य) सुनता हुआ सब देवताओंसे अनुष्ठित श्रीबद्रीनारायणको गमन करे ॥९॥

गंगाद्वारे सामगत्य ह्यर्चयेन्नीलभैवरम् ॥
ततः संप्रार्थयेन्नाम्नो गंगायां कृतसत्क्रियः ॥१०॥

भाषा—फिर गंगाद्वार (हरिद्वार) में पहुँच नीलभैरव क्षेत्र पालका पूजन करे गंगाजी में स्नानादिक किया करे और नीलभैरवकी प्रार्थना करे ॥१०॥

ततः केदारभवनं गच्छेत्पापापनुत्तये ॥
केदारनाथं संपूज्य गृहीत्वाज्ञां ततः सुधीः ॥११॥

भाषा—फिर पापों से दूर होनेके निमित्त केदारनाथजीमें जाय तथा उनका पूजन करके आज्ञा ले तब ॥११॥

कार्यं बदरिकेशस्य दर्शनं शुभदायकम् ॥
अकृत्वा दर्शनं पुत्र केदारस्याघनाशिनः ॥१२॥

भाषा—शुभदायक श्रीबदरिकेश भगवान्‌के दर्शन करने चाहिये । बिना श्रीकेदारेश्वर के दर्शन किये ॥१२॥

यो गच्छेद्‌बदरीं तस्य यात्रा निष्फलतां व्रजेत ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पूर्वं केदारदर्शनम् ॥१३॥

भाषा-जो मनुष्य श्रीबदरीनारायण को जाता है उसकी यात्रा निष्फल होजाती है इस कारण पहले यत्नपूर्वक श्रीकेदारनाथजीके दर्शन करने चाहिये ॥१३॥

स्तेयं हिंसां मदाद्यं च परान्नादिप्रातिग्रहम् ॥
मुंचन्पथि समागच्छेद्‌बदरीं यत्नतो गृही ॥१४॥

भाषा—गृहस्थादि चोरी, हिंसा और मद ग्रहण न करे दूसरेका अन्न न पावे, और दान न लेवे, पथिक जन यत्न से मार्ग में नियम पूर्वक श्रीबदरीक्षेत्रको जावे ॥१४॥

अनिषिद्धान्नपानादिपुष्टोऽन्योपि समाव्रजेत् ॥

आगच्छन्मृत्युमाप्नोति क्षेत्रमृत्युफलं लभेत् ॥१५॥

भाषा—जो पुरुष अन्यके भरोसे पर भी उसीका अन्न जल खाय पुष्ट शरीर होय और भाग्य वश जिस क्षेत्रमें प्राण त्याग करे तो तौ भी उसको साक्षात् बदरिकाश्रमका फल प्राप्त होवे ॥१५॥

कण्वाश्रमादिमार्गस्थतीर्थेष्वपि समाप्लुतः ॥
ज्योतिर्धामगतं दिव्यं नृसिंहं भक्तितो नमेत ॥१६ ।

भाषा—कण्वाश्रम (नन्दप्रयाग) से आगे (श्रीबदरीक्षेत्र प्रवेश है) मार्ग में जितने तीर्थ मिलें उन सबमें स्नान और जोशीमठमें भगवान नृसिंहजीको भक्तिपूर्वक नमस्कार करे ॥१६॥

स्नात्वा बिष्णोःप्रयागेऽस्मिन्योगीश्वरमुपास्य च ॥
शेषं प्रणम्य सक्षेत्रपालं च सुसमाहितः ॥१७॥

भाषा—फिर विष्णुप्रयाग में स्नान करे और पंडुकेश्वर में पहुँच योगीश्वर योगध्यानी जी को पूजन तथा नमस्कार कर, शेषजी के क्षेत्र शेषधारा में जितेन्द्रिय हो साष्टांग दंडवत् करे ॥ १७ ॥

यात्रामुपोष्य वै होतृस्थाने वैखानसे पुनः ॥
प्रातः स्नात्वा महातीर्थे कौबेरीं तांशिलां व्रजेत ॥१८॥

भाषा—तहां से होमस्थान वैखानस तीर्थ अथवा हनुमान् चट्टी में एक रात्रि उपवास करे तिस पीछे प्रातः गंगा स्नान करके कुबेरशिला के पास जावे ॥ १८ ॥

तत्र दत्त्वा धनं शक्त्या ब्राह्मणेभ्यो मुदान्वितः ॥
परिक्रम्य शिलां गच्छेद्गंगामृष्यभिधामपि ॥ १९ ॥

भाषा—कुबेरशिला में यथाशक्ति ब्राह्मणों का हर्षयुक्त धन दान करे तिस पीछे शिला की परिक्रमा कर ऋषिगंगा पर पहुँचे ॥ १९ ॥

तत्र स्नात्वा नवीने द्वे वस्त्रे धृत्वा शुचिर्भवेत् ॥
दद्यात्पुरातने वस्त्रे याचकेभ्यो मुदान्वितः ॥२०॥

भाषा—ऋषिगंगा में स्नान करके शुद्ध नवीन वस्त्र धारण और पुराने वस्त्र याचकों को दे देवे ॥ २० ॥

ततस्तु बदरीनाथभवनं प्रणमन्व्रजेत् ॥

आचम्य कूर्मधारायां भक्त्या परमया पुनः ॥२१॥

भाषा—तत्पश्चात् श्रीभगवान् बदरीनाथ जी के मन्दिर को नमस्कार करता हुआ आगे बढ़े मार्ग में कूर्मधारा तीर्थ के जल को भक्ति-पूर्वक आचमन करे ॥ २१ ॥

नत्वा जयं च विजयं प्रविशेद्देवमन्दिरम् ॥
नारायण दयासिंधो प्रसीदेति मुहुर्वदन् ॥२२॥

भाषा—जय और विजय द्वारपालों को नमस्कार कर मन्दिर में प्रवेश करता हुआ वारंवार श्रीनारायण जी से प्रार्थना करे कि हे दयासिंधो ! मुझ किंकर के ऊपर प्रसन्न होवो ॥ २२ ॥

परिक्रम्य प्रणम्याथ दद्यादस्मै ह्युपायनम् ॥
नारायणं नरं दृष्ट्वा कुबेरं कमलामपि ॥२३॥

भाषा—परिक्रमा करके साष्टांग दण्डवत् और नमस्कार कर यथाशक्ति भेट पत्र पुष्प जो बन आवे सो करे निर्मल झाँकी से उपरान्त कुबेर जी और श्री लक्ष्मीजी का दर्शन करे ॥ २३ ॥

देवतान्तरमानम्य वन्हितीर्थे समाप्लुतः ॥
कारयेच्च बहिः क्षौरं[1] शिलाभ्यो मौनमाश्रितः ॥२४॥

भाषा--गणेशादि देवतों को नमस्कार कर वन्हितीर्थ (तप्तकुण्ड) में स्नान करे। यदि चौर करना आवश्यक होय तो पंच शिलान के बाहिर मौन होकर चौर करवावे ॥ २४ ॥

स्नायादलकनन्दायां बौधायनविधानतः ॥
उपवासं ततः कुर्याद्भजमानो जनार्दनम् ॥२५॥

भाषा—तब विधान से पतित पावनी श्रीअलकनन्दाजी में स्नान करके उपवास करे और नारायण नाम महामंत्र का जप करे ॥ २५ ॥

प्रातरावश्यकं कृत्वा दृष्ट्वा नारायणं प्रभुम् ॥
प्रतर्प्य पितृदेवादीन श्राद्धं विधिवदाचरेत् ॥२६॥

भाषा—तत्पश्चात् दूसरी प्रातःकाल को उठकर अपने नित्य कर्म करके भगवान्

१ क्योंकि यात्रीजन हरिद्वार ही में चौर कर लेते हैं तत्पश्चात् पुनः कहीं चौर नहीं करना होता है।

बदरीविशाल का दर्शन करे फिर वेदविधि से पितृ देवता ऋषियन को तर्पण करके ब्रह्म-कपाल में श्राद्ध करे ॥ २६ ॥

दद्याद्ब्रह्मकपाले ऽस्मिन् पिंडं पुत्रोथवा परः ॥
नाम्ना यस्य स वै ब्रह्मलोकं याति न संशयः ॥२७॥

भाषा—ब्रह्मकपाल पर पिण्डदान करने वाला पुत्र स्त्री व अन्य भी कोई जात विरादर जिस संबंधी के हेतु पितृकर्म करे वह प्राणी अवश्यमेव ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ २७ ॥

दद्याच्च बदरीवासिजनायैव स्वशक्तितः ॥
वस्त्रधान्यधनादीनि भुंजीताथ तदुक्तितः ॥२८॥

भाषा—श्रीपुरी के निवासी जनों को अपनी वित्तानुसार धनधान्य वस्त्राभूषण दे उनसे आज्ञा लेकर भोजन करे ॥ २८ ॥

तीर्थान्तराणि चान्येषु दिवसेषु समाहितः ॥
उपासीत समर्थश्चेन्नोचेत्तत्तीर्थमाश्रयेत ॥२९॥

भाषा—तदुपरान्त (वसुधारा, सत्यपथ, शेषनेत्र, चरण पादुका, कल्पग्राम, माता-मूर्ति और लोकपाल इत्यादि) आवश्यकीय तीर्थों के दर्शन को कर स्नान दान करे और यदि सामर्थ्य न हो तो नारदकुण्ड नारदशिला ही को आश्रय लेवे ॥ २९ ॥

नारदीयसमं तीर्थं त्रैलोक्ये न मयेक्षितम् ॥
तत्र स्नातो भवेद्यस्मात्सर्वतीर्थसमाप्लुतः ॥३०॥

भाषा—हमने नारदकुण्ड के समान त्रैलोक्य में दूसरा तीर्थ नहीं देखा जिस महा-पुरुष ने नारदकुण्ड में स्नान कर लिया वह मानो समस्त तीर्थन में स्नानादि कर्म कर चुका ॥ ३० ॥

अनन्यचेतसा यश्च नारायणमनामयम् ॥
भजते भजनीयं किं ह्यपरं तस्य विद्यते ॥३१॥

भाषा—जिन पुरुषों का दूसरे देवतों में चित्त नहीं केवल एकमात्र नारायण (बदरी-विशाल) को भजते हैं उनको अन्य देवतों के भजन से क्या प्रयोजन है ॥ ३१ ॥

एवं यः कुरुते यात्रां न स भूयोऽभिजायते ॥
अश्वमेधादियज्ञानां फलं पदे पदे लभेत ॥३२॥

भाषा—इस प्रकार जो श्रीबद्रीनारायण को यात्रा को करता है वह फिर इस संसार में जन्म नहीं लेता अश्वमेधादि यज्ञों का फल पग २ पर मिलता है ॥ ३२ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे संपादलक्षसंहितायां सह्याद्रिखंडे शिवकार्तिकेयसम्वादे श्रीबदरीमाहात्म्ये भाषाटीकायां त्रयोदशोऽध्यायः समाप्तः ॥ ११ ॥

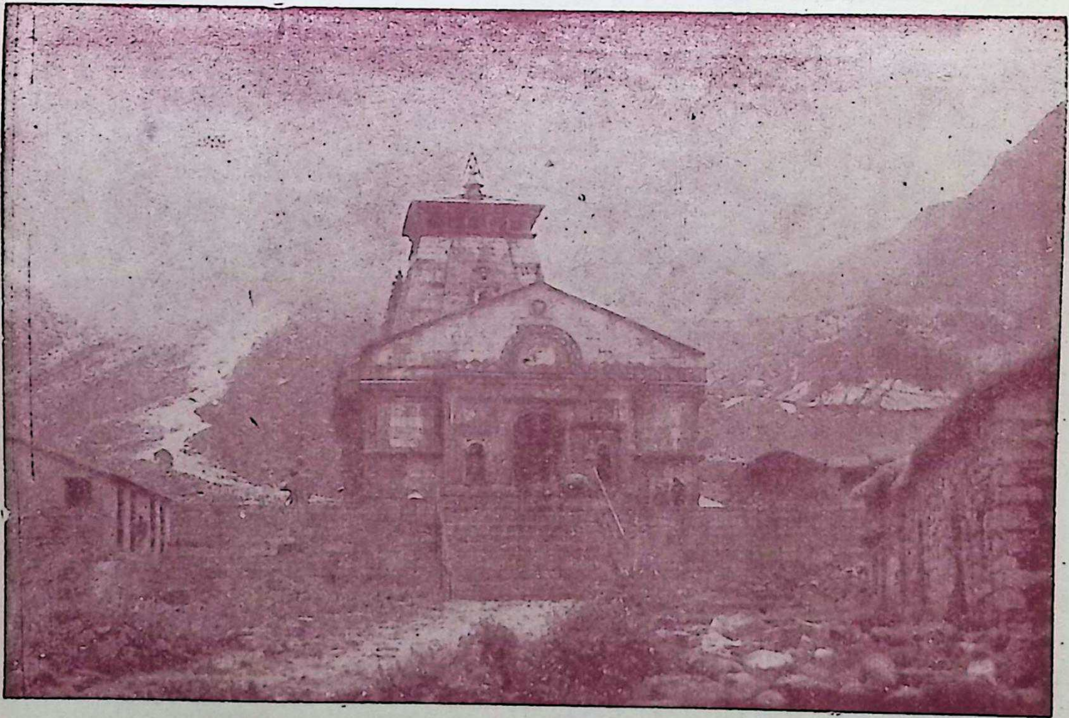

श्री केदारनाथ मंदिर

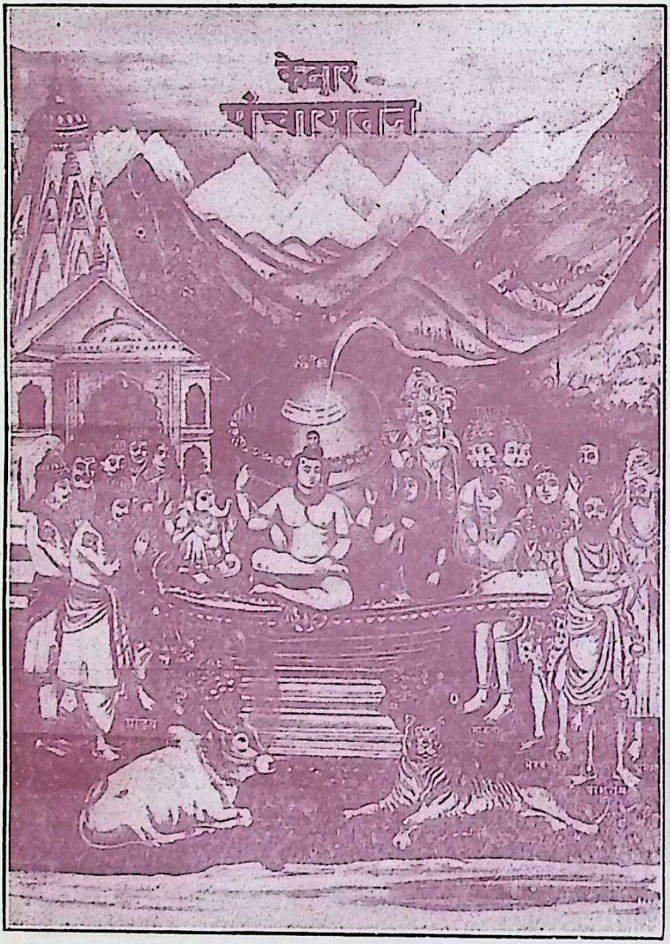
केदार
पंचायतन

॥ अथ प्रथमोऽध्याय प्रारंभः ॥

श्री केदारमाहात्म्यम्

पार्वत्युवाच

कथयस्व महादेव विस्तरान्मम क्षेत्रकम् ॥
केदार नाम यत्प्रोक्त स्वर्गमोक्षप्रदायकम् ॥ १ ॥

दोहा—नीलकण्ठ लावण्यनिधि, निज जन पूरण काम ।
शंकर शंकर जगतके भजिये नित सुखधाम ॥ १ ॥

भाषा—पार्वती बोली, हे महादेव ! विस्तार से मेरे तईं केदार नाम क्षेत्र का वर्णन करो जो कि स्वर्ग और मोक्ष का देनेवाला है ॥ १ ॥

कानि कानि च तीर्थानि वर्त्तन्ते तत्र नायक ॥
किं पुण्यं किं फलं चात्र स्नानैर्दानैर्महेश्वर ॥ २ ॥

भाषा—हे स्वामिन् ! उसमें कौन कौन से तीर्थ हैं ? हे महेश्वर ! यह सब अपनी प्रिया से कथन कीजिये ॥ २ ॥

कथमेतन्महज्जातं तीर्थानामुत्तमोत्तमम् ॥
एतत्सर्वं महादेव प्रियायै कथय प्रभो ॥ ३ ॥

भाषा—यह किस प्रकार सब तीर्थों में उत्तम है। हे महादेव ! यह सब अपनी प्रिया से कथन कीजिये ॥ ३ ॥

ईश्वर उवाच

इदं क्षेत्रं तु यत्प्रोक्तं मया देवि त्वयाधुना ॥
न त्यजामि कदाचिद्वै त्वत्तः प्रियतरं प्रिये ॥ ४ ॥

भाषा—ईश्वर बोले, हे देवि ! यह जो क्षेत्र का माहात्म्य मैं तुमसे कहता हूँ इसको मैं कभी त्याग नहीं करता हूँ और यह तुमसे भी अधिक मुझको प्रिय है ॥ ४ ॥

पुरातनो यथाहं वै तथा स्थानमिदं किल ॥
यदा सृष्टिक्रियायां च मया वै ब्रह्ममूर्तिना ॥५॥

भाषा-जैसे मैं पुरातन हूँ उसी प्रकार यह स्थान भी पुरातन है, जिस समय ब्रह्ममूर्तियों की सृष्टि की थी ॥ ५ ॥

स्थितमत्रैव सततं परब्रह्मजिगीषया ॥
तदादिकमिदं स्थानं देवानामपि दुर्लभम् ॥६॥

भाषा-उस समय मैं यहीं स्थित हुआ था । उस दिन से यह स्थान देवताओं को भी दुर्लभ है ॥ ६ ॥

नंदिभृंग्यादयः सर्वे द्वारदेशे प्रतिष्ठिताः ॥
ब्रह्माद्यास्त्रिदशाः सर्वे न जानन्ति मम स्थलम् ॥७॥

भाषा-नन्दीभृंग्यादि सब द्वारदेश में ही प्रतिष्ठित हैं, ब्रह्मादिक भी इस हमारे स्थान को नहीं जानते हैं ॥ ७ ॥

यथा त्वया तत्र देशे क्रीडितं विस्मृतं त्वया ॥
इदमेव महत्स्थानं सुगोप्यं सर्वजन्तुषु ॥८॥

भाषा-तुमने इस स्थान में क्रीडा की है सो क्या तुमको इस बात की सुधि नहीं है। यह संपूर्ण जन्तुओं को दुर्लभ स्थान है ॥ ८ ॥

मृतो यत्र महादेवि शिव एव न संशयः ॥
धन्यास्ते पुरुषा लोके पुण्यात्मानो महेश्वरि ॥९॥

भाषा-हे महादेवि ! जहाँ मृत्यु को प्राप्त होकर प्राणी शिवरूप हो जाता है इसमें संदेह नहीं। हे महेश्वरि ! वह लोक धन्य और पुण्यात्मा है ॥ ९ ॥

ये वदन्त्यपि केदारं गमिष्यामि इति क्वचित् ॥
पितरस्तस्य देवेशि त्रिशतं कुलसंयुताः ॥१०॥

भाषा—जो कहा करते हैं कि हम कभी केदार में जायँगे। हे देवि ! उसके पितर तीन सौ कुल के सहित ॥ १० ॥

गच्छन्ति शिवलोके तु सत्यं सत्यं न संशयः ॥
तथा सतीनां त्वं चैव देवानां च यथा हरिः ॥११॥

भाषा—शिवलोक में चले जाते यह सत्य है सत्य है. इसमें सन्देह नहीं। जैसे सतियों में तुम और देवताओं में श्रेष्ठ हैं ॥ ११ ॥

सरसां सागरो यद्वत् सरितां जाह्नवी यथा ॥
पर्वतानां यथायं वै योगिनां याज्ञवल्क्यकः ॥१२॥

भाषा - सरोवरों में जैसे सागर, नदियों में जैसे गंगा हैं, पर्वतों में यह पर्वत और योगियों में जैसे याज्ञवल्क्य हैं ॥ १२ ॥

भक्तानां च यथा देवि नारदो भक्त ईरितः ॥
शिलानां च यथा शालग्रामशिलातुवैष्णवी ॥१३॥

भाषा—देवि ! जैसे भक्तों में नारद और शिलाओं में जैसे शालग्राम शिला ॥ १३ ॥

अरण्यानां यथा प्रोक्तं बदर्यारण्यसंज्ञितम् ॥
धेनूनां च यथा कामधेनुर्वै परिकीर्तिता ॥१४॥

भाषा–वनों में जैसे बदरीवन, धेनुओं में जैसे कामधेनु कही है ॥ १४ ॥

मनुष्याणां यथा विप्रो विप्राणां ज्ञानदो यथा ॥
स्त्रीणां पतिव्रता यद्वत्प्रियाणां पुत्र एवच ॥१५॥

मनुष्यों में जैसे ब्राह्मण ब्राह्मणों में ज्ञान का देनेवाला, स्त्रियों में जैसे पतिव्रता, प्रियजनों में जैसे पुत्र ॥ १५ ॥

पदार्थानां यथा स्वर्ण मुनीनां च यथा शुकः ॥
सर्वज्ञानां यथा व्यासो देशानामयमेव च ॥१६॥

भाषा–पदार्थों में जैसे सोना, मुनियों में जैसे शुक, सर्वज्ञों में जैसे व्यास, देशों में जैसे यह देश ॥ १६ ॥

नराणां च यथा राजा सुराणां वासवस्तथा ॥
वसूनां धनदो यद्वत्पुरीणां मामकी यथा ॥१७॥

भाषा–नरों में जैसे राजा, देवताओं में जैसे इन्द्र, वसुओं में जैसे कुबेर, पुरियों में जैसे मेरी पुरी ॥ १७ ॥

रम्भा चाप्सरसां यद्वद्गंधर्वाणां च तुम्बुरुः ॥
क्षेत्राणां च यथा प्रोक्तं क्षेत्रं केदारसंज्ञितम् ॥१८॥

अप्सराओं में जैसे अप्सरा रंभा, गंधर्वों में जैसे तुम्बुरु, इसी प्रकार क्षेत्रों में उत्तम केदारक्षेत्र है ॥ १८ ॥

अयि देवि पुरावृत्त व्याधस्यैणस्य तच्छृणु ॥
मृगहंताऽवसद्व्याधो ग्रामान्ते विकरालकः ॥१९॥

भाषा—हे देवि ! एक व्याधे का एक पुरातन इतिहास कहते हैं। सुनो ग्राम के बाहर एक विकराल व्याधा निवास करता था ॥ १९ ॥

मृगमांसाशनो नित्यं विक्रेता सर्ववस्तुनः ॥
एकदा स महान् व्याधो मृगं हन्तुं गतो वने ॥२०॥

भाषा—नित्य मृगा का मांस खाता और सब वस्तुओं का विक्रय करता था। एक समय वह व्याधा मृग के मारने को वन में गया ॥ २० ॥

हतास्तत्र महादेवि मृगाश्च बहवस्तथा ॥
एवं हनन्मृगान् व्याधो ययौ केदारतीर्थके ॥२१॥

भाषा-हे देवि! वहाँ उसने बहुत से मृगों का वध किया। इस प्रकार मृगों को मारता हुआ केदार तीर्थ पर गया ॥ २१ ॥

गच्छतस्तस्य देवेशि वने मुनिगणान्विते ॥
व्यदृश्यत मुनिश्रेष्ठो नारदो रणयन् गिरम् ॥२२॥

हे देवि! वहाँ जाते हुए मुनिगणों के मध्य में वीणावादन करते हुए नारदजी को देखा नारदजी का स्वर्णमय वर्ण था ॥ २२ ॥

एतस्मिन्नन्तरे सोऽपि व्याधो वै हृष्टमानसः ॥
योऽयंगच्छातिस्वर्णात्मादिव्यरूपधरोमृगः ॥२३॥

भाषा-तब उस समय वह व्याधा भी प्रसन्न होकर विचारने लगा कि जो यह स्वर्ण की समान स्वर्णरूपधारी मृग गमन करता है ॥ २३ ॥

एनं हत्वा स्वर्णमृगमहं स्वर्णमयो भवे ॥
अस्मिन् वै चिन्तयित्वा तु व्याधः परमविस्मितः ॥२४॥

भाषा—इस स्वर्णरूपी मृग को मारकर मैं स्वर्णमय हो जाऊँगा यह विचार व्याधा परम विस्मित होकर ॥ २४ ॥

धनुः सज्जं चकाराशु वाणं संधाय कार्मुके ॥
यावन्निहन्ति तमृषिं तावदन्तर्दधे मुनिः ॥२५॥

भाषा—धनुष पर बाण चढ़ाता हुआ जब तक उन ऋषि के बाण मारे कि तब तक मुनि अन्तर्धान हो गये ॥ २५ ॥

इति तत्परमाश्चर्यं दृष्ट्वा व्याधोऽतिविस्मितः ॥
यावद्गच्छति चाग्रे तु ददर्श दर्दुरं बिले ॥२६॥

भाषा—यह परम आश्चर्य देख व्याधा बड़ा विस्मित हुआ जब तक आगे चला कि, बिल में एक मेंढक को देखा ॥ २६ ॥

सर्पेण ग्रस्यमानं वै महाकायेन सत्वरम् ॥
यावद्ग्रसति मंडूकं सर्पःकालात्मको ह्ययम् ॥२७॥

भाषा—उसको एक बड़ी कायावाला सर्प ग्रास करता है। जब तक यह कालात्मा सर्प मंडूक को भक्षण करे ॥ २७ ॥

तावद्बभूव मंडूको नागयज्ञोपवीतकः ॥
अर्धचन्द्रधरः शीर्षे जटाटव्या विराजितः ॥२८॥

भाषा—तब तक वह मेंढक नाग यज्ञोपवीती हो गया, शिर पर अर्धचन्द्रधारी जटाजूट से विराजमान ॥ २८ ॥

कैलासाद्रिसमाभासो नृत्यं गुणविराजितः ॥
त्रिशूली नीलकंठो वै हस्तिचर्माम्बरो विभुः ॥२९॥

भाषा—कैलास पर्वत की समान श्वेत कांति, नृत्य करते हुए, गणों से शोभायमान, त्रिशूलधारी, नीलकंठ, हस्ति का चर्म धारण किये विभु व्यापक ॥ २९ ॥

इति तत्परमाश्चर्यं दृष्ट्वा वै व्याधपूरुषः ॥

किमेतद्वै कथं जातो मंडूकः सर्पवेष्टितः ॥३०॥

भाषा—रूप देखकर व्याधे को परम आश्चर्य हुआ और कहा सर्प से वेष्टित यह मंडूक ऐसे रूप में कैसे हो गया ॥ ३० ॥

रूपं कस्य त्विदं जातो मंडूकस्यान्यदेहकः ॥
किं वा स्वप्नमहं मन्यो जाग्रतो मे कथंभवेत् ॥३१॥

भाषा—यह मंडूक किस देही के रूप को प्राप्त हो गया। क्या यह मैं स्वप्न देखता हूँ परन्तु जागते में स्वप्न नहीं हो सकता ॥ ३१ ॥

भ्रमो मे हि कथं जातः स्वप्नस्थोऽस्मि च एव हि ॥
अथ चेदं कथंचिद्वै भूतोपद्रवकं किमु ॥३२॥

भाषा—जब कि मैं स्वस्थ हूँ तो मुझे भ्रम किस प्रकार हो सकता है, अथवा यह कोई भूत का उपद्रव है ॥ ३२ ॥

सन्निकर्षस्मृतिर्मेऽद्य वर्त्तते विकृतिर्यतः ॥
किं करोमि क्व गच्छामि वनेऽस्मिन्भूतसेविते ॥३३॥

भाषा—अथवा इस भ्रान्ति से मृत्यु समीप है, क्या इस भूतसेवी वन में से अब मैं कहाँ जाऊँ क्या करूँ ? ॥ ३३ ॥

को मे रक्षामिदानीं हि करिष्यति महावने ॥
पश्यतो मे हि मंडूको विकृतिं वै कथं गतः ॥३४॥

भाषा—इस महावन में इस समय मेरी कौन रक्षा करेगा मेरे देखते २ यह मंडूक कैसे विकार को प्राप्त हुआ ॥ ३४ ॥

इति चिंतासमाविष्टमना व्याधो हि तत्क्षणात् ॥
पलायनपरो जातो महेशि वनतो यदा ॥३५॥

भाषा—यह व्याध मन में चिन्ता करता था कि, उसी समय भयसे भागने लगा ॥३५॥

तावद्ददर्श व्याघ्रेण हन्यमानं मृगं किल ॥
पुष्टांगं सुन्दरांगं च महाव्याधो भयातुरः ॥३६॥

भाषा—आगे जाकर एक व्याघ्र को मृग का बध करते देखा, जिसका पुष्ट और सुन्दर अंग था तब व्याधा बहुत डरा ॥ ३६ ॥

तमेव हन्यमानं च मृगं वै शिवरूपिणम् ॥
पंचवक्त्रं त्रिनेत्रं च व्यालयज्ञोपवीतिनम् ॥३७॥

भाषा–उस मरे हुए मृग को भी शिवस्वरूप, पांच मुख, तीन नेत्र, नागयज्ञोपवीतधारी देखा ॥ ३७ ॥

हन्ता यो देवदेवेशि मृगराट् सत्वरं हतः ॥
व्याधेनानेन केनापि बलीवर्दो बभूव ह ॥३८॥

भाषा–हे देवि ! यह मारनेवाला व्याघ्र उसी समय बलीवर्दरूप हो गया ॥ ३८ ॥

आरुरोह वृषे तस्मिन्स वै पूर्वहतो मृगः ॥
शिवरूपधरः साक्षात् पश्यतस्तस्य सुन्दरि ॥३९॥

भाषा–और वह पहला मृतक हुआ मृग इस वृष के ऊपर चढ़ा । हे सुन्दरि ! इसके देखते २ वह शिवरूपधारी हो गया ॥ ३६ ॥

इति तत्र पराश्चर्यं दृष्ट्वा व्याधोऽतिविस्मितः ॥
चिन्तयामास बहुशः किमिदं किमिदं त्वहो ॥४०॥

भाषा—यह परम आश्चर्य रूप देखकर व्याधा बहुत विस्मित हुआ और बारंबार सोचने लगा कि यह क्या है ? ॥ ४० ॥

पुलकांकितसर्वांगो विस्मयाविष्टमानसः ॥
पुनर्ददर्श देवेशि तमेव नारदं मुनिम् ॥४१॥

भाषा-सब शरीर पुलकित हो गया और विस्मय से व्याप्त हो गया । हे देवेशि ! फिर उसने नारदमुनि का दर्शन किया ॥ ४१ ॥

तं दृष्ट्वा मनुजाकारं वने तस्मिन्भयावहे ॥
श्रुत्वा तु तन्मुखाद्वृत्तं तत्रत्वं मम वल्लभे ॥४२॥

भाषा-उस भयानक वन में उस मनुष्याकार को देखकर और उसके मुख से मेरे वन का वृत्तान्त सुनकर नारदजी बोले ॥ ४२ ॥

व्याधः साधुरसाधुश्च वनं साधुरहो परः ॥
इतिश्रुत्वा तु स व्याधो बभाषे नारदं मुनिम् ॥४३॥

भाषा—व्याधा साधु और असाधु है यह वन भी साधु है तब व्याधा उनके वचन सुन नारदजी से बोला ॥ ४३ ॥

कथं साधुरहं ब्रह्मन्नसाधुश्च कथं वनम् ॥
साधु साध्विति यत्प्रोक्तं त्वया किं तद्वदस्व मे ॥४४॥

भाषा—हे ब्रह्मन्! मैं किस प्रकार साधु असाधु हूँ और यह वन कैसे साधु है ? आपने जो साधु कहा सो इसका भेद कहो ॥ ४४ ॥

व्याधेरितं तु तच्छ्रुत्वा विहस्य नारदोऽब्रवीत् ॥
धन्योऽसि लुब्धकश्रेष्ठ यत्त्वया तीर्थमुत्तमम् ॥४५॥

भाषा—व्याधे का वचन सुनकर नारदजी हँसकर बोले कि, हे श्रेष्ठ लुब्धक ! तुम धन्य हो । जो तुमने इस उत्तम तीर्थ में ॥ ४५ ॥

आगतं तादृशं चैव दृष्टं वै शुभदर्शनम् ॥
तस्मादुक्तं च मे साधुस्त्वमसाधुश्च तच्छृणु ॥४६॥

भाषा—आकर इसका माहात्म्य देखा और सुना, इससे मैंने साधु कहा और असाधु का वृत्तान्त सुनो ॥ ४६ ॥

तस्मादिदं त्वया व्याध ज्ञानं नेति शुभं परम् ॥
यस्य माहात्म्यतः शीघ्रं तिर्यग्योनिगतो ध्रुवम् ॥४७॥

भाषा—हे व्याध ! जिस कारण कि, तुझको ज्ञान नहीं हैं जिसके माहात्म्य से तिर्यक् योनि को प्राप्त हुए भी शीघ्र ॥ ४७ ॥

अवाप शिवतां चैव पश्यतस्ते क्षणं तथा ॥
इति तत्परमाश्चर्यं रूपं तद्वचनं प्रिये ॥४८॥

भाषा—शिवता को प्राप्त होकर तेरे सन्मुख दीखे. यही परम आश्चर्य है कि, तैंने कुछ न जाना ॥ ४८ ॥

श्रुत्वा व्याधो महाभागः प्रणनाम भुवि क्षणात् ॥
धन्योऽस्मि कृतकृत्योऽस्मि मुने त्वद्दर्शनादहम् ॥४९॥

भाषा—यह उनके वचन सुनकर महाभाग व्याधे ने भूमि में पड़कर प्रणाम किया

और कहा हे मुनिराज ! मैं आज आपके दर्शन से धन्य और कृतकार्य हुआ ॥ ४९ ॥

योऽहं तव मुखांभोजनिःसृतं सुकथामृतम् ॥
पिबामि मुनिशार्दूल त्राहि मां भवसागरात् ॥५०॥

भाषा—जो मैं तुम्हारे मुखकमल से निकले हुए कथारूपी अमृत का पान करता हूँ। हे मुनिश्रेष्ठ ! संसार सागर से मेरी रक्षा करो ॥ ५० ॥

पापोऽहं मुनिहन्ताऽहं हिंसकोऽहं दुरासदः ॥
तारयेह महाभाग कथमेतादृशी गतिः ॥५१॥

भाषा—मैं पापात्मा मुनिघाती हिंसक दुष्ट हूँ। हे भगवन् ! इस प्रकार कुगति से कैसे तरूंगा ॥ ५१ ॥

भवेन्मे मुनिशार्दूल तद्वदस्व कृपान्वितः ॥
उवाच नारदस्तं वै ह्यत्रैव निवसत्विति ॥५२॥

भाषा—हे मुनिराज ! मेरी ऐसी गति कैसे होगी सो आप कृपा कर कहिये ! नारद जी ने उससे कहा तुम यहीं निवास करो ॥ ५२ ॥

इत्युक्त्वाऽन्तर्दधे देवि पश्यतस्तस्य वै प्रिये ॥
व्याधोऽपि निवसंस्तत्र ययौ वै परमां गतिम् ॥५३॥

भाषा—हे प्रिये ! ऐसा कहकर उसके देखते ही नारदजी अन्तर्धान हुए । व्याधा भी वहाँ निवास कर परमगति को प्राप्त हुआ ॥ ५३ ॥

इति तत् क्षेत्रमाहात्म्यं नाहं वर्षशतैरपि ॥
न क्षमोऽस्मि प्रिये वक्तुं शृण्वतोऽपि परां गतिम् ॥५४॥

भाषा—इस प्रकार इस क्षेत्र का माहात्म्य तो सैकड़ों वर्षों में भी मैं नहीं कह सकता । इसके सुनने से ही परमगति होती है ॥ ५४ ॥

तीर्थानि शृणु देवेशि गुह्यानि सुतरां प्रिये ॥५५॥

भाषा—हे प्रिये ! अब इसके गुह्य (छिपे हुये) तीर्थ सुनो मैं तुमसे कहता हूँ ॥५५॥

इति श्रीकेदारमाहात्म्ये भाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥

॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः प्रारम्भः ॥

ईश्वर उवाच ।

दक्षिणस्यां शिवे देवि रेतःकुण्डमिति श्रुतम् ॥
यत्पयःपानमात्रेण शिव एव न संशयः ॥ १ ॥

भाषा-शिवजी बोले, हे पार्वति ! दक्षिण की ओर रेतःकुण्ड है । जिसके जलपानमात्र से प्राणी निःसंदेह शिवरूप होता है ॥ १ ॥

येन चिह्नेन तत्तीर्थं जायते शिवदायकम् ॥
पारदं दृश्यते तत्र तज्जलं बुद्बुदायते ॥ २ ॥

भाषा-जिस चिह्न से वह तीर्थ शिवदायक होता है, उस जल में देखने से बुद्बुदे उठने लगते हैं ॥ २ ॥

तस्य दर्शनमात्रेण नरो याति परां गतिम् ॥
किं पुनर्देवदेवेशि तत्पाने नितरां शिवे ॥ ३ ॥

भाषा—उसके दर्शनमात्र से मनुष्य परमगति को प्राप्त होता है। हे पार्वति ! फिर उसके पान करने से क्या कहैं ॥ ३ ॥

मन्दाकिन्यास्तु सुतटे तीर्थानि शृणु पार्वति ॥
तस्मादेव महातीर्थादधोदेशे शुभप्रदम् ॥ ४ ॥

भाषा—मन्दाकिनी के किनारे के तीर्थों को हे पार्वति ! सुनो। उस महातीर्थ के निम्न-भाग में भी अनेक तीर्थ हैं ॥ ४ ॥

शिवकुण्डमितिख्यातं शिवलोकप्रदायकम् ॥
यत्रोपोष्य सप्तरात्रं प्राणान्वै संत्यजेद्बुधः ॥ ५ ॥

भाषा—वहाँ शिवकुण्ड शिवलोक का देनेवाला है, जहाँ सात रात्रि व्रत करके जो कोई प्राणों का त्याग न करे ॥ ५ ॥

शिवसायुज्यतामेति यतो धारा विनिःसृता ॥
तदर्धं भृगुतुंगं वै पापिनामपि मुक्तिदम् ॥६॥

भाषा-वह शिवलोक को जाता है, जहाँ से धारा निकलती है वहाँ से आधा फल भृगुतुंग में भी है, पापियों को मुक्ति देनेवाला है ॥ ६ ॥

गोघ्नः कृतघ्नो विप्रघ्नो योऽपि विश्वासघातकः ॥
श्रीशिलायां पतेद्यस्तु भृगुतुंगान्महोन्नतात् ॥७॥

भाषा-गोघाती, कृतघ्न, विश्वासघाती, पवित्र होते हैं । श्रीशिला में भृगुतुंग महोन्नत है ॥ ७ ॥

प्राणांस्त्यजति देवेशि स परब्रह्मतामियात् ॥
तस्मात्तीर्थादूर्ध्वभागे योजनद्वयसंमिते ॥८॥

भाषा-जो यहाँ प्राण त्यागन करता है वह परब्रह्मता को प्राप्त होता है। उस तीर्थ के ऊपर दो योजन पर ॥ ८ ॥

रक्तवर्णं जलं तत्र बुद्बुदाकारनिःसृतम ॥
इदं जलं परं गोप्यं न वदेद्दुष्टजन्तुषु ॥९॥

भाषा—लाल वर्ण का जल बुद्बुद् के आकार का निकलता है यह जल परम गुप्त है, पर दुष्टप्राणियों को प्रकाश करने योग्य नहीं है ॥ ९ ॥

यस्य स्पर्शेन सर्वेऽपि धातवः स्वर्णतां प्रिये ॥
यान्ति लोहादयो देवि सत्यं सत्यं न संशयः ॥१०॥

भाषा—जिसके स्पर्श से सब धातु सुवर्ण हो जाती हैं। लोहादि सुवर्ण हो जाते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ १० ॥

इदं हिरण्यगर्भाख्यं तीर्थं परमदुर्लभम् ॥
यस्य दर्शनमात्रेण नरो नारायणो भवेत् ॥११॥

भाषा—वह परमदुर्लभ हिरण्यगर्भ नामक तीर्थ है, जिसके दर्शन से नर नारायण होता है ॥ ११ ॥

तस्मादुत्तरतो देवि स्फाटिकं लिङ्गमुत्तमम् ॥
यस्य वै पूजनात्सद्यः शिव एव न संशयः ॥१२॥

भाषा—हे देवि ! उसके उत्तर में स्फटिक का लिंग है जिसके पूजन से मनुष्य तत्काल शिव होता है इसमें संदेह नहीं ॥ १२ ॥

तस्मात्सर्वपदे पूर्वं वह्नितीर्थमिति स्मृतम् ॥
तस्य चिह्नं प्रवक्ष्यामि गदतो मे शृणु प्रिये ॥१३॥

भाषा—उसके पूर्व वह्नितीर्थ है। हे प्रिये ! सुनो, उसका चिह्न कहता हूँ ॥ १३ ॥

हिमान्तर्गलिते तद्धि जलं वह्निमयं प्रिये ॥
पूजनं तस्य कर्तव्यं घृताक्ताहुतिभिस्तथा ॥१४॥

भाषा—जो वह्निमय जल हिम के अन्तर्गलित होता है वहाँ घृत की आहुति से उसका पूजन करना चाहिये ॥ १४ ॥

संतृप्तो जायते वह्निर्वरमिष्ट प्रयच्छति ॥
तत्र उत्तरतो देवि आश्चर्यं परमं शिवे ॥१५॥

भाषा—इससे अग्नि तृप्त होकर इष्ट वर देता है। हे शिवे! उसके उत्तर में परम आश्चर्य है ॥ १५ ॥

शैलाग्रशिखरात्तत्र जलं पतति भूतले ॥
तज्जलस्य कणा देवि सद्यो मुक्ता भवन्ति हि ॥१६॥

भाषा—वहाँ शैल के अग्रभाग से जल पतित होता है, उस जल के कणमात्र से मोती होते हैं ॥ १६ ॥

तत्रैव भीमसेनेन पूजितोहं च मौक्तिकैः ॥
मुक्ताविद्रुमजालानां हर्म्याणां च परंपरा ॥१७॥

भाषा—वहाँ भीमसेन ने मोतियों से मेरा पूजन किया था। वहाँ मोती मूँगों के स्थानों की परम्परा है ॥ १७ ॥

तेषु हर्म्येषु देवेशि गंधर्वाप्सरसस्ताथा ॥
गायन्ति परमीशानं हर्षेण परिपूरिताः ॥१८॥

भाषा—हे देवि ! वहाँ गंधर्व अप्सरा प्रसन्न हो शिवजी को प्रसन्न करते जाते हैं और गीत, स्तोत्र गाते हैं ॥ १८ ॥

तत्र यान्ति महादेवि पुण्यात्मानो महाधियः ॥
ततः परं महापन्था यत्र गत्वा न शोचति ॥१९॥

भाषा—हे देवि ! वहाँ पुण्यात्मा ही गमन करते हैं, उसके उपरान्त महापन्थ है जहाँ जाकर मनुष्य सोच नहीं करता है ॥ १६ ॥

तस्मिन्महापथे देवि घृतपायसकर्दमाः ॥
स्वर्णभूमी रत्नमयी स्वर्णपक्ष्युपशोभिता ॥२०॥

भाषा—हे देवि ! वहाँ घृत दूध की कर्दम होती है, बड़ी रत्नों की जड़ी स्वर्ण की भूमि सोने के पक्षियों से शोभित है ॥ २० ॥

वृक्षाः स्वर्णमयास्तत्र प्रवाललतिकावृताः ॥
अनेके च महागृध्राः पन्नगाशनतेजसः ॥२१॥

भाषा—यहाँ सोने के वृक्ष मूँगों की बेल से युक्त हैं। अनेक महागृध्र गरुड़ की समान तेजस्वी हैं ॥ २१ ॥

योजनायामविस्तारा महाव्यालाश्च सर्वशः ॥
सप्तप्राकारसंयुक्ते मम धाम्नि महेश्वरि ॥२२॥

भाषा-एक योजन के विस्तार वाले महाव्याल हैं। हे महेश्वरि! सात प्रकार से संयुक्त मेरे धाम में हैं ॥ २२ ॥

यत्र ब्रह्मादयो देवि मां हि सेवन्ति नित्यशः ॥
महाभैरवहस्तस्थदण्डेन कृतशासनाः ॥२३॥

भाषा-हे देवि! जहाँ ब्रह्मादिक मेरा नित्य सेवन करते हैं, वहाँ दण्डधारी महाभैरव शासन करते हैं ॥ २३ ॥

भूतवेतालप्रेताश्च कूष्माण्डा जृम्भकास्तथा ॥
नन्दिभृग्यादयश्चैव क्रीडन्ति सुखसंवृताः ॥२४॥

भाषा-भूत, वेताल, प्रेत, कूष्मांड, जृम्भक, नन्दी, भृङ्गी आदि आनन्द से क्रीडा करते हैं ॥ २४ ॥

अहं महापथे नित्यं संस्थितो मम वल्लभे ॥
अस्मात्स्थानान्नात्प्रियतरं नास्ति देवेशि मे क्वचित् ॥२५॥

भाषा-हे प्रिये ! मैं भी उस महापथ में क्रीड़ा करता हूँ। उस स्थान से अधिक मुझे और कोई प्रिय नहीं है ॥ २५ ॥

यः कश्चिन्मानवो भक्त्या एवं वदति नित्यशः ॥
महापथं गमिष्यामि प्राणांस्त्यक्ष्यामि तत्र वै ॥२६॥

भाषा-जो कोई मनुष्य भक्ति से ऐसा नित्य कहता है मैं महापथ जाकर वहाँ प्राण त्यागूंगा ॥ २६ ॥

सोऽपि मे देवदेवेशि प्रियात्प्रियतरोऽस्ति वै ॥
किं पुनर्मानवो लोके सर्वसंगविवर्जितः ॥२७॥

भाषा-हे देवि ! वह भी मुझे नित्य प्यारा है और संगरहित मनुष्य की तो कौन कहै ॥ २७ ॥

मान्यस्य हृदि च स्वीये गच्छेद्वै मम मन्दिर ॥
स्वर्गारोहगिरेर्मूर्ध्नि स्थानं मे परमं महत् ॥२८॥

भाषा—जो हृदय में भी मेरे मंदिर में आता है वह प्रसन्न होता है। वर्गारोह स्पर्वत के ऊपर मेरा परमस्थान है ॥ २८ ॥

अयं तीर्थमयः शैलो यत्राहं संस्थितः सदा ॥
दर्शनादेव पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ॥ २९ ॥

भाषा—यह तीर्थमय शैल है जहाँ सदा निवास करता हूँ। इसके दर्शन मात्र से ब्रह्महत्यादि पाप दूर होते हैं ॥ २९ ॥

नश्यन्ते किमु देवेशि पूजनात्स्पर्शनात्तथा ॥
क्षीरगंगा तु या धारा मंदाकिन्यास्तु संगमे ॥ ३० ॥

भाषा—फिर पूजन स्पर्श की बात कौन कहे। जो क्षीरगंगा की धारा से मन्दाकिनी का संगम हुआ है ॥ ३० ॥

शिवप्रदं महातीर्थं क्रौंचहर्तुः प्रकीर्तितम् ॥
यत्र स्नात्वा वरारोहे कैलासनिलये वसेत् ॥ ३१ ॥

भाषा—वहाँ महातीर्थ कार्तिकेय का किया परमोत्तम है हे सुमुखि ! जहां स्नान से यह प्राणी कैलास को जाता है ॥ ३१ ॥

क्षीरगंगा तु या धारा मंदाकिन्या सुसंगता ॥
ब्राह्मं वै परमं तीर्थं यत्र स्नात्वा गणो भवेत् ॥ ३२ ॥

भाषा—जो क्षीरगंगा की धारा मंदाकिनी में मिली है। वह श्रेष्ठ ब्रह्मतीर्थ है, जहां स्नान कर मेरा गण होता है ॥ ३२ ॥

तस्माद्दक्षिणतो देवि यज्जलं बुद्बुदायते ॥
सामुद्रं तज्जलं प्रोक्तं स्पर्शनाच्छिवदायकम् ॥ ३३ ॥

भापा-हे देवि ! उसके दक्षिण जो जल बुद्बुद् के आकार है वह समुद्र का जल स्पर्श से ही सुखदायक है ॥ ३३ ॥

मत्तो यो वामभागेऽस्ति शैलः परमसुन्दरः ॥
पौरंदरः समाख्यातो यत्र मामिन्द्र ईश्वरि ॥ ३४ ॥

भाषा—हमारे बाईं ओर जो परमश्रेष्ठ पर्वत है उसका नाम पौरंदर पर्वत है । हे ईश्वरि ! जहाँ इन्द्र ने ॥ ३४ ॥

समाराध पूर्वं वै स्वस्य च स्थितिहेतवे ॥
तत्रैव मे परं लिंगं दर्शनान्मुक्तिदायकम् ॥ ३५ ॥

भाषा—अपनी स्थिति के निमित्त मेरा आराधन किया था । वहाँ मेरे लिंग के दर्शन से ही मुक्ति होती है ॥ ३५ ॥

मदालयाद्दण्डदशके हंसकुण्डमिति स्मृतम् ॥
यत्र ब्रह्मा महादेवि हंसो भूत्वा समाययौ ॥ ३६ ॥

भाषा—मेरे स्थान से दश दण्ड पर हंसकुण्ड है । हे देवि ' जहाँ ब्रह्माजी हंस का रूप धारण कर आये थे ॥ ३६ ॥

रेतःपानं तु कृतवान् गणैः संधर्षितस्तथा ॥
तद्धंसकुंडमाख्यातं पितॄणां मुक्तिदायकम् ॥ ३७ ॥

भाषा—वहाँ का जलपान किया और गणों से हर्षित हुए वह पितरों की मुक्ति का देने वाला हंसकुण्ड है ॥ ३७ ॥

पितॄणां श्राद्धकर्तारो गच्छेयुः परमं पदम् ॥
नरकस्थापि पितरो जन्मजन्मसमुद्भवः ॥ ३८ ॥

भाषा—पितरों का श्राद्ध करनेवाले परम पद को पा जाते हैं। जो जन्म जन्म के नरक में स्थित पितर हैं ॥ ३८ ॥

त्रिशूलिनो महादेवाश्चन्द्रार्धकृतशेखराः ॥
वृषस्कंधस्थिताः सर्वे व्यालयज्ञोपवीतकाः ॥ ३९ ॥

भाषा—वे त्रिशूलधारी महादेव, अर्धचन्द्रधारी, वृष पर चढ़े व्याल का उपवीत धारण किये ॥ ३९ ॥

भस्मांगरागसहिताः क्रीडेयुर्वै मया सह ॥
इति तद्धंसकुंडस्य माहात्म्यं वरवर्णिनि ॥ ४० ॥

भाषा—शरीर में भस्म लगाये मेरे साथ क्रीड़ा करते हैं। हे प्रिये ! यह हंसकुण्ड का माहात्म्य है ॥ ४० ॥

यस्माज्जलमयी भूमिः पदान्याससुकम्पिता ॥
केदारक्षेत्रमाख्यातं तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ॥ ४१ ॥

भाषा—जहां की जलमय भूमि पादन्यास से कम्पित होती है। केदारक्षेत्र तीर्थों में उत्तम तीर्थ है ॥ ४१ ॥

दृष्ट्वा केदारनाथं मां पीत्वा रेतोजलं मम ॥
शिवलिंगं प्रजायेत हृदि तस्य महेश्वरि ॥ ४२ ॥

भाषा—मुझे केदारनाथ का दर्शन कर और जलपान करने से हे महेश्वरि ! उसके हृदय में शिवलिंग की प्राप्ति होती है ॥ ४२ ॥

यस्मिन्कस्मिन्नपि शिवे काले वै यत्र कुत्र वै ॥
मृतः शिवपुरे याति पापी चापि शुभस्तथा ॥ ४३ ॥

भाषा–तो जिस किसी समय जहां कहीं भी मृतक हो शिवपुर में गमन करता है, पापी वा शुभकारी कोई हो ॥ ४३ ॥

यत्र देशे तु यो मर्त्यः केदारेश्वरदर्शने ॥
इत्युद्दिश्य मृतो देवि शिवो भवति मानवः ॥ ४४ ॥

भाषा—जिस देश में मनुष्य केदारेश्वर का दर्शन करेगा, ऐसे उद्देश्य से मृत्यु को प्राप्त होता है तो शिव होता है ॥ ४४ ॥

शिवस्थानमिदं प्रोक्तं विष्णुस्थानमतः शुभम् ॥
भीमसेनाशिला देवि पर्यंकं मम कीर्तितम् ॥ ४५ ॥

भाषा–यह शिवस्थान विष्णुस्थान से भी श्रेष्ठ कहा है। हे देवि ! भीमसेन की शिला मेरा पर्य्यंक है ॥ ४५ ॥

त्रिगव्यूतौ मम स्थानाद्दक्षिणो शृणु तीर्थकम् ॥
गौरीतीर्थमिदं ख्यातं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥ ४६ ॥

भाषा–मेरे स्थान से छः कोस जो तीर्थ है सो सुनो यह गौरीतीर्थ सब सिद्धि देता है ॥ ४६ ॥

यत्र त्वया महेशानि मंदाकिन्यास्तटे पुरा ॥
ऋतुस्नानं कृतं तद्वै गौरीतीर्थमिति स्मृतम् ॥ ४७ ॥

हे प्रिये ! जहाँ तुमने मन्दाकिनी के किनारे पहले ऋतु-स्नान किया था वही यह गौरीतीर्थ कहाता है ॥ ४७ ॥

महासेनस्य उत्पत्त्यै विस्मृतं किं त्वयानघे ॥
तस्माच्चिह्नं प्रवक्ष्यामि येन तज्ज्ञायते शुभम् ॥४८॥

महासेन कार्तिकेय की इच्छा करती हुई सो क्या स्मरण नहीं है ? उसके जानने का चिह्न कहता हूँ ॥ ४८ ॥

कटूष्णं तु जलं तत्र सिन्दूराभा तु मृत्तिका ॥
तत्स्थानं देवदेवेशि न त्यजामि कदाचन ॥४९॥

भाषा-वहाँ का जल कटूष्ण है, मृत्तिका सिन्दूर वर्ण की है, मैं उस स्थान को कभी नही छोड़ता हूँ ॥ ४९ ॥

तत्र गौरीश्वरत्वेन ख्यातोऽहं शिवलोकदः ॥
स्नानं करोति यस्तत्र मृत्तिकां शिरसा वहेत् ॥५०॥

भाषा-वहां मैं गौरीश्वर नाम से विख्यात हूँ, जो यहाँ स्नान कर शिर पर मृत्तिका धारण करता है ॥ ५० ॥

स वै मम प्रियतरो यथा त्वं मम वल्लभा ॥
यत्र यद्वै कृतं कर्म तद्वै कोटिगुणं भवेत् ॥५१॥

भाष—सो मुझे तुम्हारी समान प्यारा होता है। वहां जो कर्म किया जाय वह कोटिगुणा होता है ॥ ५१ ॥

तस्माद्दक्षिणतो देवि गोरक्षा श्रमरक्षकम् ॥
यत्र सिद्धो महादेवि गोरक्षो वसतेऽनिशम् ॥५२॥

भाषा–हे देवि ! उसके दक्षिण में गोरक्षाश्रम है। हे देवि ! जहां सिद्ध गोरक्षक रहता है ॥ ५२ ॥

तल्लिंगं तु प्रवक्ष्यामि शृणु पुण्यतमं स्थलम् ॥
महातप्तजलं तत्र वर्त्तते सर्वदैव हि ॥ ५३ ॥

भाषा–उस पवित्र स्थान का चिह्न कहता हूँ। वहां सदा महातप्त जल रहता है ॥५३॥

तत्र स्थित्वा सप्तरात्रं तपन्वै शिवमुत्तमम् ॥
सिद्धो भवति देवेशि यथा गोरक्ष उत्तमः ॥५४॥

भाषा–वहां सात रात्रि रहकर शिव का तप करने से हे देवेशि ! वह गोरक्षकी समान होता है ॥ ५४ ॥

तस्मिन्नेव महाशैले चतस्रो निम्नगाः स्मृता ॥
देविका भद्रिका शुभ्रा मातंगीति समाहृताः ॥ ५५ ॥

भाषा—उस स्थान में चार नदी हैं। देविका, भद्रिका, शुभा और मातंगी ॥५५॥

देविकायां नरः सप्तरात्रं मिथ्यादिवर्जितः ॥
जपन् षडक्षरं देवि पश्यते स्पर्शमौक्तिकम् ॥ ५६ ॥

भाषा—हे देवि ! जो देविका नदी में मिथ्यादोष-रहित होकर षडक्षर मंत्र का जप करता हैं स्पर्शं मौक्तिक को देखता है ॥ ५६ ॥

यस्य स्पर्शाद्धातवस्तु स्वर्णतां यान्त्यसंशयम् ॥
तथान्यां तु महादेवि स्नात्वा सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ ५७ ॥

भाषा—जिसके स्पर्श से लोहादि धातु स्वर्ण हो जाती हैं हे महादेवि ! तथा प्राणी स्नान कर अन्य सिद्धि को प्राप्त होते हैं ॥ ५७ ॥

गौरीतीर्थादूर्ध्वभागे पर्वते सौम्यदिक्स्थिते ॥
चीरवासा भैरवस्तु क्षेत्रं रक्षति मामकम् ॥ ५८ ॥

भाषा—गौरीतीर्थ से ऊर्ध्व भाग में सौम्य दिशा की ओर चीरवासा भैरव मेरे क्षेत्र की रक्षा करते हैं ॥ ५८ ॥

तस्मै चीरादिकं दत्त्वा सर्वं पुण्यं लभेन्नरः ॥
अन्यथा तत्फलं सर्वं हरते भैरवः शिवः ॥ ५९ ॥

भाषा—उनको चीरादि देकर मनुष्य सब पुण्य प्राप्त करता है। नहीं देने से भैरव उसका पुण्यफल हरण कर लेते हैं ॥ ५६ ॥

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संपूज्य भैरवं विशेत् ॥
तस्मिन्नेव महाशैले काली वसति दुःखहा ॥ ६० ॥

भाषा-इस कारण सब यत्न से भैरव का पूजन करना चाहिये। उसी पर्वत में सब दुःखहारिणी काली निवास करती है ॥ ६० ॥

तां नमस्कृत्य गच्छेत पर्यंके नामके शिवे ॥
गौरीतीर्थापरे भागे क्रोशे परमदुर्लभम् ॥ ६१ ॥

भाषा-हे शिव ! उनको प्रणाम करके मेरे पर्यंक नामक स्थान में जाय जो दुर्लभ

स्थान एक कोश गौरीतीर्थ के पर भाग में स्थित है ॥ ६१ ॥

वैनायकं तथा द्वारं संस्थित्य संस्थितः शिवे ॥
गणेशस्तावकः पुत्र अंगरागेण यः कृतः ॥ ६२ ॥

भाषा-वहाँ वैनायक नाम द्वार है वहाँ गणेश तुम्हारे पुत्र जो अंगराग से उत्पन्न किया है ॥ ६२ ॥

स्थापितो द्वारि देवेशि त्वया च स्नाप्यमानया ॥
मया यस्य शिरश्छिन्नं पतितं शिवक्षेत्रके ॥ ६३ ॥

भाषा—जिसकों स्नान की इच्छा से तुमने द्वार पर स्थापन किया था जिसका मैंने शिर छेदन कर शिवक्षेत्र में गिरा दिया था ॥ ६३ ॥

प्रसन्नेन मया देवि पुनः करिवरं शिरः ॥
संयोजितं तदंगे तु ततो गजमुखोऽभवत् ॥ ६४ ॥

भाषा-और फिर प्रसन्न होकर मैंने हाथी का शिर उनके अंग में लगा दिया जिससे वह गजवदन हुए ॥ ६४ ॥

संपूज्य तं गणेशं वै नानानैवेद्यद्रव्यकैः ॥
गच्छेन्मम महास्थाने यत्र गत्वा शिवो भवेत् ॥ ६५ ॥

भाषा—उन गणेशजी का अनेक नैवेद्य द्रव्यों से पूजन कर मेरे स्थान को जाता है। जहाँ जाकर शिवरूप होता है ॥ ६५ ॥

कालिकेति समाख्याता नदी गंगांगसंभवा ॥
वासुकिप्रमुखा नागा यां हि सेवन्ति नित्यशः ॥ ६६ ॥

भाषा—वहाँ गंगा से मिलनेवाली कालिका नदी है, जिसको वासुकि आदि नाग सदा सेवन करते हैं ॥ ६६ ॥

शेषेश्वरो महादेवो यत्रास्ति हि सरोवरे ॥
उच्छलन्तिमहानागाभस्मीकुर्वन्तिततस्थलम् ॥ ६७ ॥

भाषा—जहाँ के सरोवर में शेषेश्वर शिव नित्य निवास करते हैं। महानाग उच्छलित होकर उस स्थल को भस्म करते हैं ॥ ६७ ॥

क्रुध्यन्ति तु यदा देवि नान्यथा ते महाविषः ॥

कालिकातालुमूलेऽस्ति कथ्यते तेन कालिका ॥ ६८ ॥

भाषा—हे महादेवि ! जब वे क्रुद्ध होते हैं, तभी महाविष होते हैं और उनके तालु-मूल में कालिका देवी हैं। इससे वे कालिका कहाते हैं ॥ ६८ ॥

मंदाकिन्यास्त्रिविक्रन्याः संगमोऽतीव पुण्यदः ॥

यत्र तिष्ठामि कालीशनाम्ना स्वस्थानदो ह्यलम् ॥ ६९ ॥

भाषा-त्रिविक्रमी मंदाकिनी का संगम पवित्र पुण्यदायक स्थान है मैं जिस स्थान में कालीश्वर नाम से स्थित हूँ ॥ ६६ ॥

इति ते कथितं देवि केदारेश्वरक्षेत्रकम् ॥

श्लोकार्द्धं श्लोकमेकं वा श्रुत्वोक्त्वा च लभेच्छिवम् ॥ ७० ॥

भाषा—हे देवि ! यह तुमसे केदारेश्वर चेत्र का वर्णन किया। मनुष्य इसका एक वा आधा श्लोक सुन वा कहकर मुक्त होता है ॥ ७० ॥

तुंगनाथ माहात्म्य

मांधातृ क्षेत्रतो याम्मे योजन द्वयविस्तृतम् ॥
द्वियोजन समायातं सर्व काम फलप्रदम् ॥

भाषा—मान्धाता के क्षेत्र से दक्षिण की ओर दो योजन चौड़ा और दो योजन लम्बा, सम्पूर्ण कामनाओं का पूर्ण करनेवाला।

तुंगनाथ शुभ क्षेत्रे पापघ्नं सर्व कामदम् ॥
तद्दृष्ट्वा सर्व पापेभ्यो विमुक्तो लभते शिवम् ॥

भाषा—तुंगनाथ नाम का एक शुभ क्षेत्र है, यह क्षेत्र सम्पूर्ण पापों का नाशक और अखिल कामनाओं का पूर्ण करनेवाला है। अतएव उसके दर्शन करके प्राणी समस्त पापों से मुक्त हो कल्याण को प्राप्त होता है।

यत्र ब्रह्मादयो देवाः संबद्धाजलयः सदा ॥
सस्तुवंति महात्मानं देवदेवं महेश्वरम् ॥

भाषा—वहाँ ब्रह्मा आदि देवता अंजली बाँध देवाधिदेव महात्मा महादेव की स्तुति करते रहते हैं।

तुङ्गनाथ—(१२०७२फीट)—यह उत्तराखण्ड में सबसे ऊँचा मन्दिर है। यह ऊखीमठ से चमोली जाने के मार्ग में मिलता है

ऊखीमठ मन्दिर

त्रियुगीनारायण माहात्म्यम्

विवाह स्थान मेतद्धै गौरीशंकर योः शुभम् ॥
तत आरम्भ वसते नित्यमत्र धनंजयः ॥

भाषा- गौरी और शंकर के विवाह का यह शुभ स्थान है। उसी दिन से उस क्षेत्र में अग्निदेव नित्य निवास करते हैं।

तस्मिन्ननग्नौ तु ये मर्त्या एकामप्याहुति दद्दुः ॥
ते सर्वे मुक्ति मा पन्नाः पुनरावृत्ति दुर्ल्लभाः ॥

भाषा-उस अग्नि में जो मनुष्य एक भी आहुति प्रदान करते हैं उन्हें पुनराग-मनहित मुक्ति का लाभ होता है।

हवनं कारयेत्तत्र नारायण सुमंत्रतः ॥
धन्योभवति लोकेषु नरः पापाविवर्जितः ॥

भाषा-जो मनुष्य नारायण मंत्र से वहाँ हवन करता है वह पापरहित हो सौभाग्य-शाली होता है।

मध्यमेश्वर माहात्म्य ।

केदारं मध्यमं तुंगं तथा रुद्रालंय प्रियम् ॥
कल्पकं च महादेवि सर्व पाप प्रणाशनम् ॥

भाषा—हे महादेवि ! केदार. मध्यम, तुंग तथा प्रिय रुद्रालय और कल्पकतीर्थ भी सब पापों का नाश करनेवाला है ।

कथितं ते मया यतु केदार भवनं प्रिये ॥
तस्माद्दाक्षिणादिग्भागे योजनत्रयसमिते ॥

भाषा—हे प्रिये ! जो केदारेश्वर के भवन के तीर्थ वा क्षेत्र हैं सो मैंने कहे, उससे दक्षिण दिशा के भाग में तीन योजन की दूरी पर ।

मध्यमेश्वर क्षेत्रं हि गोपितं भुवनत्रये ॥
तस्य वै दर्शनान्मर्त्यो नागपृष्टे वसेद्विभुः ॥

भाषा—त्रिलोकी में छिपा हुआ मध्यमेश्वर क्षेत्र है, उसके दर्शनमात्र से मनुष्य विभु होकर स्वर्ग में वास करता है ।

श्री कल्पेश्वर माहात्म्य

ईश्वर उवाच—शृणु देवि प्रवक्ष्यामि पंचमं वै ममालयम् ॥
कल्पस्थल मिति ख्यातं सर्व पाप प्रणाशनम् ॥

भाषा—ईश्वर बोले, हे देवि! अब मेरे पंचम स्थान को सुनो। यह सब पापों को दूर करनेवाला कल्पस्थल नाम से विख्यात है।

यत्राहं देवदेवेन ह्यर्चितः पर्वतात्मजे ॥
मूढो दुर्वाससा शप्तो नष्ट लक्ष्मी ह्रेत प्रभः ॥

भाषा—हे पर्वतात्मजे! जहाँ मैं देव देवरूप से पूजा जाता हूँ, नष्ट लक्ष्मी और नष्ट प्रभा (कान्ति) वाले इन्द्र ने दुर्वासा के शाप से मूढ़ होकर।

आराध्य मां त्वया युक्तं प्राप्तवान्कल्पपादपम् ॥
अहं च देवदेवेशि कल्पेशत्वं समागतः ॥

भाषा—हे पार्वति! तुम्हारे सहित मेरी आराधना करके कल्पवृक्ष को प्राप्त किया और मैं भी कल्पेशत्व को प्राप्त हुआ अर्थात मेरा नाम कल्पेश्वर हुआ।

रुद्रनाथ माहात्म्य

ईश्वर उवाच—शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तृतीयं वै ममालयम् ॥
रुद्रालय मिति ख्यातं तीर्थानां तीर्थमुत्तमम् ॥

भाषा-ईश्वर बोले, हे देवि ! तीसरे अपने स्थान का वर्णन करता हूँ सुनो । वह तीर्थों में उत्तम रुद्रालय नाम से विख्यात है ।

यच्छुत्वा सर्व पापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥
रुद्रालयं महापुण्यं नाना तीर्थ विभूषितम् ॥

भाषा-महापवित्र रुद्रालय तीर्थ अनेक तीर्थों से विभूषित है जिसके सुनने से मनुष्य सब पापों से छूट जाता है इसमें सन्देह नहीं ।

केदारेश इति ख्यातास्त्रिषु लोकेषु मुक्तिदः ॥
अधो मार्गेण देवेशि मन्मुखं तु महालये ॥

भाषा-त्रिलोकी में मुक्ति का देनेवाला वह केदारेश नाम से विख्यात है, हे देवि ! अधोमार्ग से मेरा मुख यहाँ महालय में स्थित है ।

कर्णप्रयाग माहात्म्य ।

गंगा पिंडार कांसगे शिवक्षेत्रे सुरालये ॥
कर्णो नाम महाराजो महादीक्षां समाश्रितः ॥

भाषा—गंगा पिंडारक के संगम में देवमन्दिर शिवक्षेत्र में राजा कर्ण ने महादीक्षा का आश्रय लेकर ।

ततः कतिपया हैस्तु वरं प्रादान्महात्मने ॥
कवचं च तथाभेद्यं तूणीरं च तथाक्षयम् ॥

भाषा—इसके अनन्तर कुछ दिनों के पीछे सूर्य ने उस महात्मा को वरप्रदान किया, अभेद्य कवच तथा अक्षय तूणीर (तर्कश) ।

अजेयत्वं महावीरैः क्षेत्रनाम तथा ददौ ॥
कर्नप्रयाग नाम्ना वै क्षेत्रं तदवधि स्मृतम् ॥

भाषा—और उसे अजेयत्व प्रदान किया, उसी दिन से उस क्षेत्र का कर्णक्षेत्र नाम हुआ ।

रुद्रप्रयाग माहात्म्य ।

तत्र स्नात्वा नारदोपि रुद्रतीर्थे महामतिः ॥
गंगा मन्दाकिनी संगे परां सिद्धिमतो गतः ॥

भाषा—वहाँ गंगा जी और मन्दाकिनी के संगम में रुद्रतीर्थ में स्नान करके नारदजी महाराज को परमसिद्धि का लाभ हुआ ।

अतः पृथिव्यां तच्छ्रेष्ठं रुद्रतीर्थं वरानने ॥
यत्र ब्रह्मादयो देवा नागानंतादयः परे ॥

भाषा–अतएव हे सुमुखी ! भूमि के ऊपर रुद्रतीर्थ सबसे श्रेष्ठ है । उसी में ब्रह्मा आदि देवताओं तथा अनन्त आदि नागों को सिद्धि का लाभ हुआ था । अतएव पुरुषों को उसका आश्रय करना कर्तव्य है ।

देवप्रयाग माहात्म्य ।

पुरा कृतयुगे देवि बभूव मुनिसत्तमः ॥
देव शर्मेति विख्यातः सुहृत्सज्जनवत्सलः ॥

भाषा—हे देवि ! सतयुग में अपने मित्रवर्ग और सज्जनों के ऊपर दया करनेवाला देव शर्मा नाम का एक ऋषि हुआ था ।

एवं द्वादश वर्षेषु कृतवान्स महामतिः ॥
ततो दशसहस्राणि वर्षाणां सुखंदिते ॥

भाषा—उस महामति ने बारह वर्ष पर्यन्त इस विधि से भक्ति करी, इसके अनन्तर हे देवपूजिते ! दश सहस्र वर्ष पर्यन्त उस योगी ने केवल पत्तों ही का भोजन किया और वह विशेष नियम सम्पन्न रहा ।

सहस्रमेकं वर्षाणां पादेन कृतवांस्ततः ॥
ततो ददर्श गोविंदं शंख चक्र गदाधरम् ॥

भाषा—इसके अनन्तर उसने एक सहस्र वर्ष पर्यन्त एक चरण ही से खड़े रहकर तप किया, तब शंख चक्र गदाधारी गोविंद भगवान के दर्शन उन्हें हुए।

देवशर्म्मोवाच—देव देव विभो विष्णो गोविंद करुणानिधे ॥
आत्मीय चरणां भोजनिवासं देहि देहि मे ॥

भाषा—देवशर्मा बोला, हे देवाधिदेव! सर्वव्यापक! हे विष्णो! हे करुणानिधान गोविन्द! मुझे अपने चरणकमलों में निवास दीजिये।

इदं पुण्यतमं क्षेत्रं तीर्थाना मुत्तमोत्तम् ॥
भविष्ये तु कलौ देव सर्वाघवनदातकम् ॥

भाषा—और यह पवित्र क्षेत्र सब तीर्थों में उत्तम माना जाय, एवं हे देव! कलियुग में सम्पूर्ण पापों के वन को भस्म करनेवाला हो।

भक्तिर्मे सततं विष्णो त्वय्येवास्तु जनार्दन ॥
अस्मिन्नेव महाक्षेत्रे निवास कुरु सर्वदा ॥

भाषा-हे जनार्दन विष्णु भगवान ! मेरी भक्ति सदैव आपके प्रति रहे, और आप भी इस महाक्षेत्र में सदैव निवास करिये ।

अस्मिन्क्षेत्रे तु ये मर्त्या विष्णु पूजनकारका: ॥
संगमे स्नान कर्त्तारस्तेऽपि यांतु परांगतिम् ॥

भाषा—एवं चाहे नाथ ! इस क्षेत्र में जो मनुष्य विष्णु भगवान की पूजा करे तथा संगम में स्नान करे, उन्हें भी परमगति (सद्गति) का लाभ होना चाहिए ।

श्री भगवानुवाच–देवशर्म्मन् द्विजश्रेष्ट त्वया निगदितं हि यत् ॥
तत्तथैव करिष्यामि लोकानां हितकाम्यया ॥

भाषा—श्री भगवान ने कहा, हे द्विजराज देवशर्मा ! तुमने जो कुछ भी कहा, संसार की हितकामना से वह सब उसी प्रकार करूँगा ।

अत्र दत्तं तपस्तप्तं सर्वं भवति चाक्षयम् ॥

भाषा-यहाँ जो कुछ दान अथवा तप किया जाता है वह सब अक्षय हो जाता है ।

विरञ्चिप्रमुखा देवा नित्यमायांति तत्र वै ॥

सेवनाय ससीतं वै रामं लक्ष्मण पूर्वजम् ॥
सुग्रीवादि महाभक्तैर्युतं मुनिगणैस्तथा ॥

भाषा--सीता और लक्ष्मण सहित एवं सुग्रीव आदि भक्तों और महर्षियों सहित विराजमान हुए श्री रामचन्द्र जी की सेवा करने के लिए ब्रह्मा आदि देवता वहाँ नित्य ही आते हैं।

हरिद्वार माहात्म्य।

गंगाद्वारे कुशावर्त्ते विल्वके नीलपर्वते ॥
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते ॥

भाषा–गंगाद्वार (हरिद्वार), कुशावर्त्त, नीलपर्वत में विल्व केदार में और कनखल में स्नान करने के अनन्तर फिर जन्म नहीं होता।

सर्वे: देवा सगंधर्वा यक्षकिन्नर तापसः ॥
तिष्ठन्ति यत्र तीर्थ हि सर्वे ते मुक्तिलालसाः ॥

भाषा—उक्त तीर्थों में मुक्ति की अभिलाषा करके सब देवता गन्धर्व यक्ष किन्नर तपस्वी निवास करते हैं।

अन्यत्र पृथिवी प्रोक्ता गंगाद्वारोत्तरं विना ॥
इदमेव महाभाग स्वर्गद्वारस्मृतं बुधैः ॥

भाषा—गंगाद्वार अर्थात् हरिद्वार से नीचे की भूमि को पृथ्वी कही है और ऊपर की अर्थात् बदरीकेदार (उत्तराखण्ड) की ओर की भूमि को स्वर्गद्वार कहा है।

श्री गंगोत्री यमुनोत्री माहात्म्य।

भगीरथ उवाच—पितरो मे महाभाग कपिलाग्नि समीरिताः ॥
ते गच्छं तु स्वर्गगतिं प्रसादेन तव प्रभो ॥

भाषा—भगीरथ ने कहा, हे महाभाग ! हमारे पितर कपिल जी महाराज की कोपाग्नि से भस्म हो गए हैं, सो हे प्रभो ! आपकी कृपा से उन्हें स्वर्ग प्राप्त होना चाहिए।

गंगाख्यं परमं ब्रह्म वर्त्तते शिखरे तव ॥
तन्मे देहि पितॄणां हि समुद्धाराय भो प्रभो ॥

भाषा—हे प्रभो ! आपके शिखर के ऊपर गंगानाम महातेज-पुञ्ज बिराजमान हैं मेरे पितरों का उद्धार करने के तईं उसे आप मुझे प्रदान करें ।

विनिर्दग्धास्तु गच्छेयुः पितरो गति मुत्तमाम् ॥
अन्ये कलियुगे घोरे नरा पुण्य विवर्जिता ॥
दृष्ट्वा लोकान हि गच्छंतु पुनरावृति दुर्लभान ॥

भाषा—जिससे कि भस्मीभूत हुए हमारे पितरों को उत्तम गति का लाभ हो । कलियुग में और भी बहुत से मनुष्य पुण्यहीन होंगे, उसका दर्शन करके उन्हें भी ऐसे उत्तम लोकों का लाभ होगा कि जहाँ जाकर पुनर्जन्म होना कठिन है ।

पीत्वामृतमयं वारि मुक्ति मैश्वर्य माप्नुयुः ॥
इति श्रुत्वेरितं तस्य राजानं पुनरब्रुवम् ॥

भाषा–अमृत रूप गंगाजल को पानकर इस लोक में ऐश्वर्य और परलोक में मुक्ति का लाभ होगा। राजा के यह वाक्य सुनकर मैंने फिर उससे कहा।

इदं परमयं राजन्वरमेतद्धि याचितम् ॥
तद्ददामि तवेदानीं सर्व पाप भयापहम् ॥

भाषा–हे राजन्! तुमने यह परमोत्तम बर माँगा। सो समस्त भय और पापों का नाश करनेवाला गंगाजल मैं आपको देता हूँ।

सर्वेषां हित कामाय त्वयोक्तं परमं वचः ॥
स्फुर दिन्दु कला भास्वज्जटाटव्यां विराजिनीम् ॥

भाषा—सबकी हिताभिलाषा से तुमने यह उत्तम बचन कहा है, सो प्रकाशमान चन्द्रमा की कला के समान श्वेत और जटाजूट में विराजमान।

धारां त्रैलोक्य पापघ्नीं गृहाण पितृमुक्तये ॥
यस्या दर्शन मात्रेण सर्वे यांति शुभांगतिम् ॥

भाषा—त्रिलोकी के पापों का विनाश करनेवाली गंगा जी की धारा को अपने

पितरों की मुक्ति के निमित्त ग्रहण करो। इस धारा के दर्शन करने से सबको शुभगति का लाभ होगा।

यां दधार पुरा ब्रह्मा व्यापार कलशे विभुः ॥
पुत्री गमनजं पापं धौतं तेनैव वारिणा ॥

भाषा—जिसको प्रथम ब्रह्मा जी ने धारण किया था और जो अपार हैं, हे राजन्! पितरों के पाप को उसी जल से प्रक्षालन करो।

सप्तर्षयो महाभाग धृत्वा यां शिरसा नृप ॥
कृतकृत्या बभूवुस्ते यत्प्रसादान्नराधिप ॥

भाषा—हे महाभाग राजा! हमारे सिर के ऊपर धारण की हुई जिस धारा का दर्शन करके सप्तर्षि भी कृतकृत्य हुए थे।

सैव धारा स्वर्ण गिरावागता नंद नांतिके ॥
ततश्चतुर्द्धा संजाता चतुर्दिक्ष प्रगामिनी ॥

भाषा—वो ही गंगाजी की धारा नन्दन के निकट सुमेरु पर्वत के ऊपर आकर प्राप्त

हुई और वहाँ से चार भागों में विभक्त हो चारों दिशाओं में गई ।

सीता चालकनंदा च चक्षुर्भद्रेति नामभिः ॥
अलकायां समायाता या धारा शिरसा धृता ॥

भाषा—सीता अलकनन्दा चक्षुष्मती और भद्रा ये उसके नाम हुए, और जो धारा शिर के ऊपर उपस्थित है यह अलका में उपस्थित हुई ।

सर्वं पाव यितुं विश्वं त्वं गृहाण जनेश्वर ॥
रथमार्गेण ते भूप गंगेयं सरिदुत्तमा ॥
आयास्यति नृलोके तु प्रसादेन मम प्रभो ॥

भाषा—हे नरेश्वर ! समस्त विश्व को पवित्र करने के लिए तू उसी को ग्रहणकर, हे भूप ! तुम्हारे रथ के मार्ग से यह उत्तम गंगा नदी हमारी कृपा से मनुष्य-लोक में जावेगी ।

इति देवि मया प्रोक्तं राज्ञे तस्मै महात्मने ॥
प्रादां जटासमूहात्त धारां त्रैलोक्य पाविनीम ॥

हे देवि ! मैंने इस प्रकार उस महात्मा राजा से कहा और फिर अपने जटाजूट में से त्रिलोकी को पवित्र करनेवाली गंगा को मैंने दे दिया।

तस्मिन्नेव क्षणे रम्ये नानादिग्भ्यः समागताः ॥
यक्षा विद्याधरा देवास्तथा गंधर्व किन्नराः ॥

भाषा—उसी सुरम्य क्षण में सब दिशाओं से यक्ष विद्याधर देवता गन्धर्व और किन्नर आय-आय-कर, प्राप्त हुए।

इन्द्रोपि लोकपालैश्च गंगाया दर्शनाय वै ॥
गायंत्योप्सरसां श्रेष्ठास्तथा गंधर्व सत्तमाः ॥

भाषा—इन्द्र भी लोकपालों को साथ ले गंगा जी के दर्शन करने को आये, एवं च श्रेष्ठ अप्सरायें और गन्धर्व गान करते आये।

नेदुः सर्वाणि वाद्यानि भेरीझांकार कानि च ॥
शंखानां च मृदंगानां गोमुखानां तथैव च ॥

भाषा—भेरी आदि विविध प्रकार के वाद्यों के नाद होने लगे, शंख मृदंग तथा गोमुख बाजे बजने लगे।

बभूवुः सर्वतो दिग्भ्यो जय राजन्भगीरथ ॥
राजन जयेति सततं ऋषयः सिद्ध चारणाः ॥

भाषा—हे राजन् भगीरथ! तुम्हारी जय हो, इस प्रकार चारों ओर से शब्द होने लगा, एवं सिद्ध चारण और ऋषिगण भी इसी शब्द का उच्चारण करने लगे कि हे राजन्! तुम्हारी जय हो।

इति संस्मृत्य संस्मृत्य जहर्षुस्त्रिदिवौकसः ॥
मया मुक्तापि सा धारा पतिता श्री मुखे गिरौ ॥

भाषा—इसी वृतान्त का स्मरण कर-कर के देवतागण आनन्दित होते थे, और जब मैंने गंगा जी की धारा को छोड़ा तब वह श्रीमुख पर्वत के ऊपर गिरी।

तस्याः प्रवाह वेगेन खंडिता बहवोद्रयः ॥
तस्या दर्शन मात्रेण जग्मुः स्वर्गं पिशाचकाः ॥

भापा-गंगाजी के प्रवाह के वेग से बहुत से पर्वत मग्न हो गए और उनका केवल दर्शनमात्र ही करके पिशाच भी स्वर्ग को प्राप्त हुए।

त्रिधा वै पतिता मर्त्त्यें ब्रह्महत्यौ घनाशिनी ॥
भगीरथोपि संप्राप्य गंगा परम दुर्लभाम् ॥
मेने कृतार्थमात्मानं प्रणनाम पुनः पुनः ॥

भाषा—ब्रह्महत्या आदि पापों का नाश करनेवाली गंगाजी तीन प्रकार से मर्त्यलोक में निपतित हुई, जब परम दुर्लभ गंगा ज़ी राजा भगीरथ को उपलब्ध हो गई तब उन्होंने अपने आपको कृतार्थ मानकर वारंवार प्रणाम किया ।

इति ते कथिता देवि गंगोत्पत्तिर्मया शुभा ॥
श्रुत्वा यां स्वर्गमाप्नोति मनुजो नात्र संशयः ॥

भाषा—हे देवि ! इस प्रकार गंगाजी की शुभ उत्पत्ति हमने तुम्हारे प्रति वर्णन करी, जिसका श्रवण करने से मनुष्य निःसन्देह स्वर्ग का लाभ करते हैं ।

सापि गंगा त्रिधा जाता नामतः शृणु पार्वति ॥
ज्येष्ठा धारा रथ स्यातु राज्ञो भागीरथी मता ॥

भाषा—महादेवजी बोले-हे पार्वति ! उक्त गंगा के तीन विभाग हुए, सो उनके नाम सुनो, बड़ी धारा जो राजा के रथ के पीछे-पीछे चली थी उसका नाम भागीरथी हुआ।

श्री मुख स्योत्तरे पार्श्वे गता सा मुक्तिदायिनी ॥
अलकेभ्यो महेशान्यलकनंदा पुनः स्मृता ॥

भाषा-वह मुक्तिदायिनी श्रीमुख पर्वत के उत्तर के भाग में गई, हे महेश्वरि ! अलक में जाने से अलकनन्दा उसका नाम हुआ।

बदरी विपिन सा वै नारायण पदांबुजे ॥
यत्र ब्रह्मादयो देवा मेरु शृंगं समाश्रिताः ॥

भाषा-और वह बदरीबन में गई जहाँ सुमेरु पर्वत के शिखर के ऊपर ब्रह्मा आदि देवता नारायण के चरण कमल का भजन करते थे।

निवसंति स्थले रम्ये नाना मुनि गणान्विते ॥
तृतीया कुरुवर्षे तु नाम्ना कुमुद्वती मता ॥

भाषा-उस रमणीक स्थल में अन्य बहुत से मुनिगण निवास करते थे। तीसरी जो कुरुवर्ष में गई उसका कुमुद्वती नाम हुआ।

एक चक्ररथो राजा प्रहृष्टमनसा ययौ ॥
नेमि मार्गेण गंगापि नाम्ना भागीरथी मता ॥

भाषा–राजा अपने मन में आनन्दित हो एकचक्र (अर्थात् सीधे) रथ से विचरे, और उनकी चक्रधारा के मार्ग से गंगाजी भी पीछे-पीछे चली गईं। इसी से उनका भागीरथी नाम हुआ।

पार्वत्युवाच—कथं गंगा समायाता सुखेन जगतीतले ॥
ब्रह्मणोक्तं हि विघ्नानि भविष्यंति पथि प्रभो ॥

भाषा–पार्वती बोली, हे प्रभो ! ब्रह्मा जी ने तो यों कहा था कि मार्ग में अनेक विघ्न होंगे तो फिर सुखपूर्वक कैसे गंगा जी भूतल के ऊपर आ गईं।

कथं विघ्नानि जातानि मार्गे तस्य महात्मनः ॥
मुक्तिं प्राप्ताश्च के मार्गे तद्वदस्व मम प्रभो ॥

भाषा–अथवा उस महात्मा भगीरथ को मार्ग में विघ्न किस प्रकार उपस्थित हुए और मार्ग में किन-किन को मुक्ति का लाभ हुआ ? हे प्रभो, यह सब मेरे आगे वर्णन करो।

ईश्वर उवाच-श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि गच्छतोग्रे महीपतेः ॥
शैले चंद्रपुरे रम्ये गन्धर्वाणां भगीरथः ॥

भाषा—महादेवी बोले, सुनो पार्वति ! राजा के अगाड़ी जाने का वृतान्त मैं वर्णन करता हूँ। राजा भगीरथ गंगाजी को साथ लिए परमरमणीय गन्धर्वों के चन्द्रपुर नाम पर्वत के ऊपर पहुँचे और हे पार्वती ! उनके चक्र से गन्धर्वों को कंप की प्राप्त हुई

गंगा मादाय सहसा ह्यागतो गिरि नंदिनि ॥
तस्य चक्रेण तेषां च कंपोभून्नृपतेः शिवे ॥
युद्धं कर्त्तुं समारब्धा गंधर्वा वरवर्णिनि ॥
कोयं गच्छति दुष्टात्मा धारां हृत्वा परात्मनः ॥

भाषा—हे सुन्दरि ! वे गन्धर्व युद्ध करने को उद्यत हो गये और कहने लगे कि परमेश्वर की धारा को अपहरण करके कौन जा रहा है।

धृष्टो न वेत्ति चास्मान्वै अवज्ञाय चलत्यसौ ॥

एनं सर्वे समागत्य मारयध्वं महौजसः ॥

भाषा--यह कैसा निडर है अथवा हमें नहीं जानता, जिससे हमारा निरादर करके जा रहा है, सब पराक्रमी इकट्ठे होकर इसे मारो।

इति ते संमतिं कृत्वा कृतकार्मुक तूणकाः ॥
सन्नद्ध कवचा वीरास्तिष्ठ तिष्ठेति चाब्रुवन् ॥

भाषा—वे इस प्रकार सम्मति कर धनुषबाण और कवच धारण करके आए तथा कहने लगे कि खड़े रहो।

इति श्रुत्वा वचस्तेषां गंधर्वाणां भगीरथः ॥
विस्मयाविष्ट हृदयो धनुर्धृत्वा महात्मवान् ॥

भाषा—जब राजा भगीरथ ने उन गन्धर्वों के यह वाक्य सुने तब उन्होंने आश्चर्यान्वित हो धनुष को ग्रहण किया।

तेषां तस्य च देवेशि संग्रामः समपद्यत ॥
महास्त्रै विविधैः खड्ग चर्मतो मरसायकैः ॥

भाषा—हे देवेश्वरि ! राजा का और उन गन्धर्वों का विविध प्रकार के महाअस्त्रों, ढाल,तलवार और बाणों से खूब युद्ध हुआ।

एत स्मिन्पथि तेनापि राज्ञा निस्त्रिंश पाणिनाम् ॥
हताः केचिद्रुताः केचिज्जग्मुः स्वर्ग पुरे ततः ॥

भाषा—इसी समय उस राज़ा ने भी खड्ग हाथ में लेके बहुतों को भगा दिया और बहुतों को मारा तथा वे स्वर्ग में गए।

जित्वा तान्सागरो राजा गंगांमादाय सत्वरम् ॥
आययौ वायुवेगेन स्वच्छोदं नाम वै सरः ॥

भाषा—राजा भगीरथ उनको विजय करके और गंगा जी को लेकर पवन के समान वेग से वहाँ आए जहाँ स्वच्छोद नामक सरोवर था।

ईश्वर उवाच—प्राप्य गंगा पुनाराजा ययौ भूमिं हिरण्मयीम् ॥
रम्यां करतल प्रख्यां त्रिशतायाम विस्तृताम् ॥

भाषा- महादेव जी बोले, फिर गंगाजी को लेकर राजा सुवर्ण भूमि में गए जो अत्यन्त रम्य और विस्तृत थी।

नाना जन पदाढ्यां च सिद्ध चारण सेविताम् ॥
यत्र संति महावृक्षाः मधुद्रोण फलाः प्रिये ॥

भाषा-अनेक जनपद वहाँ निवास करते और अनेक सिद्ध चारण उसकी सेवा करते थे। एवं वहाँ के ऐसे वृक्ष थे जिनके ऊपर शहद के पूर की समान मधुर फल लगते थे।

नद्यः क्षीर वहाः सर्वाः शिवलिंगै र्विभूषिताः ॥
सरांसि यत्र राजंते मंहाति स्वर्ण कुक्कटैः ॥

भाषा-नदियों में मानों दूध ही बहता था, सर्वत्र शिवलिंग विराजमान थे। सुवर्ण निर्मित सीढ़ियों से सरोवर की शोभा होती थी।

राज हंसै स्तथा न्यैश्चवन्यैः स्वैणैस्तथा मृगैः ॥

तस्मिन्देशे महादेवि स्वंणभूमौ महाप्रिये ॥

भाषा—हे महादेवि ! उस स्थान में राजहंस, कृष्णमृग, मृग तथा वन्यजीव सुशोभित हो रहे थे।

गंगा सरि द्धरा तत्र रौप्य रेखे व सुंन्दरी ॥

भाषा—उस सुवर्ण की भूमि में गंगाजी की सुन्दर धारा चाँदी की रेखा की समान प्रतीत होने लगी।

भगीरथो महातेजाः सूर्यवंश विवर्द्धनः ॥

पश्यन्वनानि चित्राणि सुगंधीनि सरांसि च ॥

भाषा—सूर्यवंश की वृद्धि करनेवाले महातेजस्वी राजा भगीरथ सुगन्धित विचित्र वन की श्रेणी और सरोवरों का अवलोकन करते २।

सोम कूट गिरौ राजा आययौ क्रमशस्ततः ॥

अग्रे दृष्ट्वा समाधिस्थं जह्नुं राजर्षि सत्तमम् ॥

भाषा—क्रमशः सोमकूट पर्वत के ऊपर आए, अगाध समाधि में स्थित हुए राजर्षियों में श्रेष्ठ राजा जन्हु को भगीरथ ने देखा।

प्रणनाम न हे देवि राजा वेग समन्वितः ॥
गंगापि सहसागत्य ववाह कुशकंडिकाम् ॥

भाषा—क्योंकि राजा बड़े वेग से जा रहे थे अतएव उन्होंने प्रणाम नहीं किया. और गंगाजी ने सहसा आकर राजा जन्हु की कुंशकण्डिका को बहा दिया।

दृष्ट्वा तत्कर्म्म गंगाया जुह्नु राजर्षि सत्तमः ॥
चुकोप परमक्रुद्धो निर्जग्राह करांबुजे ॥

भाषा—गंगाजी का यह कर्तव्य देख राजर्षि श्रेष्ठ राजा जन्हु को बड़ा क्रोध आया अतएव दोनों हाथों से।

कृत्वा चमनवत्तत्र गंगा त्रैलोक्य पाविनीम ॥
स्थितः पुनः समाधौ च जह्नु राजर्षि सत्तमः ॥

भाषा—त्रिलोकी को पवित्र करने वाली गंगाजी का आचमन कर राजर्षि जन्हु फिर समाधि में स्थित हो गए ।

तद्दृष्ट्वा महदाश्चर्य्यं तदा राजा भगीरथः ॥
मुखेन शुष्यता तत्र तस्थौ वाष्पसमाकुलः ॥

भाषा—यह देख राजा भगीरथ को महान आश्चर्य हुआ अतएव उनका मुख सूख गया और नेत्रों में आँसू भर आये एवं क्षण भर तो वे वहाँ ही ठहरे रहे ।

हा हा कृतः क यास्यामि किं कृतं मे हि कर्म्मणा ॥
ययौ तत्रैव राजा तु जह्नोरा श्रम मंडले ॥

भाषा—हाहाकार करके कहने लगे, मैं कहाँ जाऊँ ? मेरे कर्मों ने यह क्या किया ? फिर जन्हु के आश्रम में गये ।

दृष्ट्वा जह्नं महाराजं द्योतयंतं दिशस्ततः
दंड वत्पतितो भूमौ पुनः पुनरु[illegible]रधीः ॥

भाषा— तदनन्तर महाराज जन्हु को दिशाओं को प्रदीप्त करते देख उदार बुद्धिमान

राजा भगीरथ ने भूमि के ऊपर निपतित हो बारंबार दण्डवत प्रणाम किया।

एक पादेन च पुनस्तास्थिवांश्च ॰ ॰ीरथः ॥
इति तस्य च राजर्षेः स्थित मग्रे स्थितस्य हि ॥

भाषा—फिर राजा भगीरथ समाधि में स्थित हुए राजर्षि जन्हु के निकट एक चरण से खड़े हो गए।

एकदा स मुनिर्भूपं समाध्यंते ददर्शतम् ॥
पुनः पुनः प्रणामांश्च कुर्वंतं तु भगीरथम् ॥

भाषा—एक समय राजर्षि ने ध्यान के अन्त में यह देखा कि राजा भगीरथ बारंबार प्रणाम कर रहा है।

उवाच भक्ति संपन्नं प्रणमंतं पुनः पुनः ॥

भाषा—और भक्ति सम्पन्न हो बारम्बार प्रणाम करते भगीरथ से यों कहा।

जह्नुरुवाच—कस्त्वं पुरुष शार्दूल सिंह व्याघ्र निषेविते ॥
वने झिल्ली गणाह्लादे नाना धातु विचित्रिते ॥

भाषा—जन्हु बोले, सिंह और व्याघ्रों से व्याप्त हुए अनेक प्रकार की धातुओं से चित्र विचित्र ऐसे वन में जिसमें झींगर झनकार रहे हैं तुम कौन हो ?

ईश्वर उवाच—इति तस्य वचः श्रुत्वा वेपमानः कृतांजलिः ॥
उवाच सहसा त्रस्तो जह्नुं चैव तपोधनम् ॥

भाषा—महादेव जी बोले, उनके यह वचन सुन राजा कंपायमान हो गया और त्रस्त हो हाथ जोड़ तपोधन जह्नु से यों कहने लगा ।

भगीरथ उवाच-अहं भगीरथो नाम सगर स्यात्मसंभवः ॥
सगरो नाम मे पूर्व पिता महपिता स्थितः ॥

भाषा—भगीरथ बोला, मैं सगर के पुत्रों का आत्मज हूँ और भगीरथ मेरा नाम है, पहले सगर नामं के मेरे पितामह थे ॥

अश्वमेधस्य कर्ता यो विख्यात बल विक्रमः ॥
श्रुतो भवेत्कदाचित्त त्वया भगवत्ता क्वचित् ॥

भाषा—उन्होंने अनेक अश्वमेध यज्ञ किये थे, उनका बल और विक्रम संसार में विख्यात है। कदाचित् आप भगवान् ने भी उन्हें सुना होगा।

द्वाभ्यां तद्धर्मपत्नीभ्यां जाता एकोत्तर सुताः
षष्टिश्चैव सहस्राणि महाबल पराक्रमाः ॥

भाषा-उनकी दो धर्मपत्नियों ने महाबलशाली और पराक्रमी साठसहस्र और एक पुत्र जने।

एकस्मिन्नश्वमेधे तु हयो यज्ञहविः श्रुतः ॥
चोरितो वासवेनाशु स्थापितः कपिलाश्रमे ॥

भाषा—एक समय अश्वमेध यज्ञ के हय को इन्द्र ने चुरा लिया और ले जाकर कपिल जी के आश्रम में रख दिया।

अन्वेषमाणा यज्ञीयं ययुस्ते वरुणालये ॥
खातयित्वा च तां भूमिं पाताले कपिलाश्रमे ॥

भाषा-वे साठ सहस्र राजकुमार यज्ञ के अश्व का अन्वेषण करते २ वरुण लोक में

गए, और भूमि का खनन करते २ पाताललोक में कपिल जी के आश्रम में पहुँचे।

मेनिरे तं हयं दृष्ट्वा पृष्ठस्थं कपिलं तदा ॥
चौरोय वध्यतां शीघ्र वब्रुस्ते दुष्टबुद्धय: ॥

भाषा–कपिल जी के पीछे अश्व को बांधा देख उन दुष्ट बुद्धियों ने यह जाना कि ये ही चोर हैं अतएव यों कहा कि इसे मार डालो।

दृष्ट्वैव ते न मुनिना भस्म नीताः पितामहाः ॥
नप्ता राज्ञो बाहुजस्य अंशुमान दृढ़ विक्रमः ॥

भाषा–मुनि ने उन्हें देखते ही भस्म कर दिया, फिर राजा सगर का पौत्र अंशुमान नाम बड़ा पराक्रमी था।

विनयाविष्ट हृदयो ववंदे चरणौ मुनेः ॥
तेषां गतिं याचितवान पितृ व्यानां दुरात्मनाम् ॥

भाषा–उसने विनया वनत हो मुनि (कपिल जी) के चरणों में बन्दना कर महर्षि से उन दुरात्माओं की सद्गति की प्रार्थना करी।

प्रसन्न श्चाभवत्सोपि कपिलो भगवान्मुनिः ॥
यदा वः कुलसंजातो गंगा मत्रानयिष्यति ॥
तदा मच्छा पनिर्दग्धा यास्यंति परमां गतिम् ॥

भाषा–तब तो मननशील भगवान कपिल जी प्रसन्न हो यों बोले कि जब तुम्हारे कुल में उत्पन्न हुआ कोई व्यक्ति भूमि के ऊपर गंगाजी को लावेगा, तब मेरे शाप से भस्मीभूत हुए यह राजकुमार परम गति को लाभ करेंगे।

एवं परंपरा प्राप्तं श्रुतमेतन्मया विभो ॥
भवादृशानां कृपया नीता सा पितृ मुक्तये ॥

भाषा–हे विभो ! इस प्रकार क्रमागत यह वृतान्त मैंने श्रवण कर रक्खा है, और आप जैसे महात्माओं की कृपा से पितरों की मुक्ति के लिए गंगा जी को मैं लाया हूँ।

सा त्वया भगवन्नीता हृदय पावनी परा ॥
किं कर्तव्यं मयेदानीं क्व गच्छामि करोमि किम् ॥

भाषा—सो उस परम पावनी को आपने अपने हृदय में धर लिया, मुझे जब क्या कर्तव्य है ? हाय मैं कहां जाऊँ, क्या करूँ ।

कथं मे मरणं नाथ भविष्यति वद प्रभो ॥
ममाभाग्यान्मया प्राप्तं दुःखमेतन्मुनीश्वर ॥

भाषा—हे प्रभो ! मेरा मरण किस प्रकार होगा । हे नाथ ! यह बताइये, हे मुनीश्वर ! मेरे अभाग्यवशात यह महान् कष्ट उपस्थित हुआ है, हाय ! मैं तो मारा गया बिना उसे लिये घर कदापि न जाऊँगा ।

हा हतोस्मि न गच्छामि तां विना स्वगृहं मुने ॥
ईश्वर उवाच—निशम्येदं वचो राज्ञो जह्नुर्वै मुनिपुंगवः ॥
कृपा विष्टमना देवि प्रोवाच वचनं नृपम् ॥

भाषा—महादेवजी बोले, हे देवि ! जब जह्नु राजा के यह वचन सुने तब कृपालु हो राजा से यों कहा ।

जह्नुरुवाच—शृणु राजन समाधौ मे विघ्नं वै अनया कृतम् ॥

उपचारादिकं सर्वं तस्मान्मेवहितं नृप ॥

भाषा—जह्नु बोले, सुनो महाराज! इसने मेरी समाधि में विघ्न किया, और मेरी सब सामग्री बहादी, इसी से मैंने इसे ग्रहण कर लिया।

धन्योसि नृप शार्दूल यस्य ते मतिरीदृशी ॥
पितृ भक्ति रतो दांतो देवतानां च पूजकः ॥

भाषा-राजन्, तुम्हें धन्य है जो तुम्हारी ऐसी मति है, तुम पितरों की भक्ति में निरत, इन्द्रिय दमन कर्त्ता और देवताओं के पूजक हो।

प्रसन्नोस्मि दमेन त्वत्प्रश्रयेण नयेन च ॥
पुनरेता दृशं कर्म न विधेयं क्वचित्वया ॥

भाषा—मैं तुम्हारे मनोनिग्रह और इन्द्रिय दमन, नम्र स्वभाव और नीति के आचरण से प्रसन्न हूँ. परन्तु अब तुम्हें ऐमा कर्म कहीं भी कदापि न करना चाहिए।

अप्रमत्तेन गंतव्यं गंगामानीयं सत्वरम् ॥
अतः परं महाराज मन्नाम्नीयं भविष्यति ॥

भाषा—गंगाजी को लेकर अब तुम्हें सावधानी से यात्रा करनी चाहिए, अब से यह मेरे नाम से भी प्रसिद्ध होगी।

मुंचामि जानुना देवीं विनयेन तवाधुना ॥
यस्या दर्शन मात्रेण सर्व पापं विनश्यति ॥

भाषा—तुम्हारी विनय के वशीभूत हो अब मैं अपने जानु प्रदेश से इस भगवती का परित्याग करता हूँ, इसके दर्शनमात्र से ही सब पापों का नाश होगा।

ईश्वर उवाच—इत्युक्त्वा मुनि शार्दूलो जानुदेशात्पुनर्ददौ ॥
गंगा प्रवाहं पापघ्नं कन्येति कथितं पुनः ॥

भाषा—महादेवजी बोले, यों कहकर मुनि शार्दूल जह्नु ने पापविनाशिनी गंगाजी के प्रवाह को जानुप्रदेश से परित्याग कर राजा को दे दिया। और गंगाजी को पुत्री कह कर संबोधन किया।

सोपि राजा महाबाहुः परिक्रम्य प्रणम्य च ॥
तां प्राप्य संयया वग्रे चक्रैकेन रथेन हि ॥

भाषा—महाबाहु राजा भगीरथ गंगाजी को ले और राजर्षि जह्नु को परिक्रमापूर्वक प्रणाम कर एक चक्ररथ के द्वारा आगे को चले।

ईश्वर उवाच-पुनाराजा महाबाहु र्नन्दनाद्रि समीपगे ।।
वासुकि प्रमुखान्नागांस्तपस्तप्तुं समास्थितान ।।

भाषा—महादेवजी बोले-फिर राजा भगीरथ उस स्थान में गए जहाँ नन्दन पर्वत के निकट वासुकी आदि नाग तप करने को उपस्थित थे।

तमेवार्थं चिंतमानान शिवसंन्यस्तमानसान् ।।
कीर्त्तयानान हि गंगेति गंगा गंगेति वा पुनः ।।

भाषा—महादेव में अपनी चेतोवृति को लगाए हुए उसी अर्थ का विचार कर रहे थे और वारंवार 'गंगा' नाम का कीर्तन कर रहे थे।

तस्मिन्नेव स्थले रम्ये ददर्श मुक्ति लालसान ।।
दृष्ट्वा तान्विस्मयाविष्टो गंगा स्तोतुं मनोदधे ।।

भाषा—उसी सुन्दर रमणीय स्थान में मुक्ति की अभिलाषा करनेवाले नागों को

देखा, उन्हें देख आश्चर्य युक्त हो राजा भगीरथ गंगाजी की स्तुति करने को उद्यत हुए।

चिंतयामास बहुधा किं कर्तव्यमतः परम् ॥
पाताले नागनिलये नयिष्यंति सरिद्वराम् ॥

भाषा—और वारंवार यह विचार करने लगे कि अब हमें क्या करना कर्तव्य है क्योंकि अब यह गंगाजी को नागलोक पाताल में ले जायेंगे।

किं कर्त्तव्य क्व गच्छामि को मे दुःखं निवारयेत ॥
इति वै चिंतयानो सौ तुष्टाव च सरिद्वराम ॥

भाषा—हाय मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, मेरे दुःख को कौन निवारण करेगा ? इस प्रकार विचार करते-करते ही गंगाजी को संतुष्ट किया।

नाम्नां सहस्र माख्यातं गंगायास्तत्र पार्वति ॥
दिव्य रूप धरा देवी प्रत्यक्षं प्राह तं नृपम ॥

भाषा—हे पार्वति ! राजा ने उस समय गंगाजी के सहस्रनाम का कीर्तन किया, तब गंगाजी ने प्रत्यक्ष दिव्य रूप धारणकर राजा से कहा।

ईश्वर उवाच—इति स्तुता महादेवि गंगा परम पाविनी ॥
राज्ञा भगीरथे नाशु प्रत्यक्षं प्राह जाह्नवी ॥

भाषा—महादेवजी बोले, हे महादेवि ! जब राजा भगीरथ ने परम पवित्र करनेवाली गंगाजी की स्तुति की तो जाह्नवी ने तत्काल प्रकट हो भगीरथ से कहा।

वरं वरय भद्रं ते वरार्होऽसि भगीरथ ॥
इदं वै मामकं रूपं न दृष्टं केनचित्पुरा ॥

भाषा—तुम्हारा कल्याण हो तुम वर लाभ करने के योग्य हो, अतएव वर मांगो, हे भगीरथ ! मेरा यह रूप पहिले किसी ने नहीं देखा है।

ईश्वर उवाच—इत्युक्त्वा जाह्नवी देवी दर्शयामास स्वं वपुः ॥
त्रैलोक्य दुर्लभं देहं क्वणत्कांची गुणान्विम् ॥

भाषा—महादेवजी बोले, यों कहकर गंगा जी ने अपने शरीर का दर्शन कराया, इस शरीर का दर्शन त्रिलोकी में दुर्लभ था, गंगाजी के देह में कौंदनी झन-झन शब्द करती थी।

भगीरथ उवाच—कृपां विधेहि दासेऽस्मि न्मयि दुःख समाकुले ॥

न गंतव्यं त्वया देवि पाताल निलये शुभे ॥

भाषा—भगीरथ जी बोले, दुख से व्याकुल हुए मुझ दास के ऊपर कृपा करो। महर्षि से कोप से दग्ध हुए मेरे पितरों को मुक्ति बिना दिये तुम पाताल में मत जाओ किन्तु समग्र भाव से भारतवर्ष ही में तुम्हें स्थिती करनी योग्य है।

बिना मुक्ति प्रेषयित्वा मत्पितॄ न्कोपदग्धकान् ॥
त्वया समग्र भावेन स्वयं भारत वर्ष के ॥
श्री गंगोवाच—भगीरथ महाभाग एवमेव भविष्यति ॥
कलेर्द्वितीय पादे तु गमिष्यामि पुनस्तले ॥

भाषा—श्री गंगाजी बोलीं, हे महाभाग भगीरथ! ऐसा ही होगा, कलियुग के द्वितीय चरण में पाताल को जाऊँगी. इसमें संदेह नहीं है, हे राजन्! तुम्हें धन्य है।

गच्छ राजन्महीपाल साधु साधु न संशयः ॥
ईश्वर उवाच—एतस्मिन्नंतरे नागास्तद्वरं सहसा प्रिये ॥
अचुर्वासुकये सर्वे वरदानादिकं तथा ॥

भाषा—महादेव जी बोले, हे प्रिये ! इसी अवसर पर नागों ने वासुकी को यह वर सुनाया।

स श्रुत्वा नागवचनं प्रमथा धिपपूजिते ॥
सहस्र फण शोभाग्रे गंगाया निकटे ययौ ॥

भाषा–हे गणपूजिते ! जब उन्होंने नागों के बचन सुने तब शेष जी से सुशोभित गगाजी के निकट उन्होंने प्रस्थान किया।

निर्दहन्विषज्वालाभिः पर्वतान् सरितोम्बुदान ॥
वृक्षान गुल्मलता पुंजान्वनानि सहसा ततः ॥

भाषा–चलते समय वे अपने विष की ज्वाला से क्या पर्वत, क्या सरिता (नदियें) क्या मेघों, क्या वृक्षो, क्या गुल्मों, क्या लतापुञ्ज क्या बन सभी को भस्म करने लगे।

अनेक शतसाहस्र सर्पनाग गणैर्वृतः ॥
दृष्ट्वा भगीरथ राजा तादृशोपद्रव प्रिये ॥

भाषा–अनेक सैकड़ो सहस्रों नागसमदाय से युक्त हो वहा गए, हे प्रिये राजा भगीरथ ने जब ऐसा उपद्रव देखा।

अस्तौषीत्सहसा शेषं नागा नामाधिकं तथा ॥
प्रणामाञ्छतशश्चक्रे नारायण परायणः ॥

भाषा-तब उन्होंने नागों के अधिक नामोच्चारण पूर्वक शेषनाग को सन्तुष्ट किया, और नारायण के विषय में दत्तचित्त हो सैकड़ों वार प्रणाम किया।

बहुधा संस्तुतो राज्ञा शेषं श्री विष्णु संज्ञकः ॥
प्रसन्नश्च यथावत्तु त्यक्त्वा तं सागरात्मजम् ॥

भाषा—इस प्रकार विष्णु स्वरूप शेष जी की जब राजा ने स्तुति की तब वे यथावत प्रसन्न हो गए और उन्होंने सगरकुलोत्पन्न भगीरथ को छोड़ दिया।

आजहार तदा गंगा पाताल निलये ययौ ॥
एतस्मिन्समये गंगा प्रोवाच शतशीर्षकम् ॥

भाषा-किन्तु गंगाजी का अपहरण कर पाताल लोक में चला गया, इसी समय गंगा जी ने शेष जी से कहा।

इति स्तुतो गंगयासौ शेषः सौभाग्यदायकः ॥
उवाचार्द्धपथि प्राणे किमर्थं संस्तुतोस्म्यहम् ॥

भाषा–जब सौभाग्यदायी शेषजी की गंगाजी ने इस प्रकार स्तुति की तब हे प्रिये ! अर्धमार्ग में ही शेषजी बोले कि तुमने किस हेतु हमारी स्तुति की ।

इत्युक्ता तेन सा गंगा प्रोवाच विनयालसम् ॥
भगीरथेन सततं कैलासादेव वासुके ॥

भाषा–इस प्रकार पूछी हुई गंगा ने नम्रतापूर्वक यह वचन कहे, हे वासुकि ! राजा भगीरथ ने कैलाश पर्वत के ऊपर से ।

निमंत्रितास्मि भूमौ हि पितॄणां मुक्तिकारणात् ॥
सांप्रतं तदवश्यं वै कर्त्तव्यं भगवन्मया ॥

भाषा—अपने पितरों की मुक्ति के कारण भूमि में मुझे निमंत्रित किया है, अतएव हे भगवन् ! वह कार्य मुझे अवश्य कर्तव्य है ।

चरमेस्मिन् युगे भूय आगमिष्यामि ते स्थले ॥
इदानीं मुंच मे शीघ्रं समुद्रे मे मतिर्गतिः ॥

भाषा—और अन्तिम युग में मैं तुम्हारे निवास स्थान में आगमन करूँगी, अब शीघ्र मुझे छोड़ दो, संप्रति समुद्र जाने की मेरी मति है।

ॐ मित्युक्त्वा सर्प्प राजस्त्यक्त्वा तद्ब्रह्मणे वपुः ।
प्रणम्य च परिक्रम्य ययौ स निलये स्वके ॥

भाषा—"बहुत अच्छा" यों कहकर वासुकि ने ब्रह्मस्वरूप गंगाजी का परित्याग कर दिया और वारंवार प्रणाम और प्रदक्षिणा करके अपने स्थान को चले गये।

तस्य संचरतो देवि कस्मिं श्चित्पर्वते वरे ॥
कन्या युग्मं महाश्चर्य्य रूपं तत्र व्यदृश्यत ॥

भाषा—हे देवि ! वन में विचरते-विचरते राजा ने किसी उत्तम पर्वत के ऊपर महा-आश्चर्यपद रूपधारी दो कन्याओं का दर्शन किया।

पप्रच्छ राजा कन्ये ते के युवां निर्जने वने ॥
अहं तु सुख संत्यक्तो व्रजामि निर्ज्जने वने ॥

भाषा—राजा ने उन कन्याओं से पूछा कि तुम दोनों इस निर्जन वन में कौन हो और मैं स्वयम् सुख-परित्याग पूर्वक निर्जन वन में विचरता हूँ ।

भगीरथोस्मि हे कन्ये युवाभ्यां कुत्र गम्यते ॥
इति तद्देवि तं श्रुत्वा सिता प्रोवाच कन्यका ॥

भाषा—हे कन्याओं ! मैं भगीरथ हूँ, तुम दोनों कहाँ जाती हो ? हे देवि ! राजा के यह वचन सुन श्वेत रूप धारिणी कन्या बोली ।

गोप्यमस्ति न ते रूपं गंगास्मि हि भगीरथ ॥
इयं या त्वासिता देवी सूर्य्यस्य तनया शुभा ॥

भाषा—हे भगीरथ ! मेरा रूप तुमसे गोप्य नहीं है सो मैं गंगा हूँ, और यह जो श्याम रूप धारिणी देवी है यह सूर्य की कन्या है ।

यमुनेति समाख्याता सर्वकल्मष नाशिनी ।।
दशधाहं महाराज निःसरामि हिमालयात ।।

भाषा—इसका यमुना नाम है और यह समस्त पापों का विनाश करनेवाली है, हे महाराज ! मैं दशधा विभक्त होकर हिमालय से निकलती हूँ ।

जेष्ठा श्रेष्ठतरा धारा त्वया सह गमिष्यति ।।
पुनरन्यास्तु या धाराः संगमेष्यंति मे पुनः ।।

भाषा–किन्तु जेष्ठ (बड़ी) अतएव सब में श्रेष्ठ जो धारा है यह तुम्हारे साथ गमन करेगी, अनन्तर जो मेरी अन्य धाराएँ आवेंगी ।

नाना नाम्न्यो महाराज भविष्यंति महीतले ।।
दर्शना त्स्पर्शनात्पुण्या यतो मे द्रव संभवाः ।।

भाषा—हे महाराज ! महीतल के ऊपर उनके अनेक नाम होंगे, क्योंकि वे मुझ ही से प्रादुर्भूत होंगी । अतएव दर्शन और स्पर्श करने से पुण्यदायिनी हैं ।

इदं गंगोत्तरं नाम तीर्थ राड्ढि भगीरथ ।।

भाषा—हे भगीरथ ! यह गंगोत्तर नाम तीर्थराज है ।

ईश्वर उवाच—इत्युक्त्वा तं महीपालं गंगा परम पाविनी ॥
जाता प्रवाहरूपा सा तरंग भंगिचंचला ॥

भाषा—महादेवजी बोले, उस राजा भगीरथ से इस प्रकार कहकर परम पावनी गंगा आड़ी तिर्च्छी तरंगों से व्याप्त द्रव रूप हो गई ।

गंगोत्तर समाख्यातं दक्षिणे मुनि सेवितम् ॥
तद्वामे याऽसिता देवी यमुना सा प्रकीर्त्तिता ॥

भाषा—दक्षिण की ओर मुनियों से सेवित वह 'गंगोत्तर' नाम तीर्थ है, और उसके वामभाग में जो कृष्णवर्ण देवी है वह यमुना नाम से कीर्तन करी गई है ।

यामुनोत्तर माख्यातं सर्व सिद्धि प्रदायकम् ॥
इति तीर्थ द्वयं यस्तु प्रातः काले च संस्मरेत ॥

भाषा—समस्त सिद्धियों के देनेवाले इस तीर्थ को यामुनोत्तर कहते हैं। जो व्यक्ति प्रभात समय इन दोनों तीर्थों का स्मरण करता है ।

दुःखानि तस्य नश्यंति यथा राज्ञो महेश्वरि ॥
नीत्वा तां तु शुभां धारां गंगाख्यां पापनाशिनीम् ॥
निर्ययौ स्वपितृस्थाने महाराजो भगीरथः

भाषा—हे महेश्वरि ! राजा भगीरथ ही के समान उसके भी पाप विनष्ट हो जाते हैं। अथ च महाराज भगीरथ पापों का नाश करनेवाली गंगाजी की शुभ धारा को लेकर अपने पितरों के स्थान में गए।

अतिक्रम्याऽनेकदेशान्समुद्रांतं महायशाः ॥
पूर्वाशा सागरे गंगा मिलिता सा सहस्रधा ॥

भाषा—समुद्र पर्यन्त अनेक देशों का अतिक्रमण करते-करते वह गंगा पूर्व की ओर सहस्र प्रकार से सागर में मिल गई उसे गंगासागर कहते हैं।

तीर्थं पुण्यतरं तद्धै गंगासागर संगमम् ॥
यत्र कुत्रापि देवेशि स्मरणान्मुक्तिदायकम् ॥

भाषा—गंगासागर नामक अत्यंत पवित्र तीर्थराज का चाहे जहाँ स्मरण करने से मुक्ति का लाभ होता है।

तस्यापि पितरो मुक्तिं प्राप्नुयुश्च सुदुर्लभाम् ॥
इति ते कथितं देवि गंगाया श्चावतारणम् ॥

भाषा–और स्मरणकर्ता के पितर भी दुर्लभ मोक्ष का लाभ करते हैं। हे देवि ! इस प्रकार गंगा का अवतरण हमने तुम्हारे समक्ष वर्णन किया है।

भगीरथो पाख्यानं च महापातकनाशनम् ॥
इदं परममाख्यानं शृणु ते भक्ति तत्परः ॥
पठे द्वापि महादेवि स नरो मुक्तिभाग्भवेत ॥

भाषा–राजा भगीरथ का उपाख्यान महापातकों का नाश करनेवाला है. जो मनुष्य इस परम आख्यान का पाठ भक्ति में तत्पर होके करता है अथवा श्रवण करता है वह व्यक्ति मुक्तिभागी होता है।

उत्तरकाशी माहात्म्य ।

इयमुत्तरकाशी हि प्राणिनां मुक्तिदायिनी ॥
धन्या लोके महाभाग कलौ येषामिह स्थितिः ॥
यत्र सर्वांशभावेन वसन्ते सर्व देवताः ॥

भाषा–यह उत्तरकाशी प्राणियों को मुक्ति देनेवाली है । हे महाभाग ! कलियुग में उन्हीं व्यक्तियों को धन्य है जो वहाँ निवास करते हैं । इस महान् तीर्थ में अपने-अपने सर्व अंशों से सम्पूर्ण देवतागण निवास करते हैं ।

* श्री जगन्नाथ माहात्म्य *

लोक में प्रसिद्ध कांची नामक पुरी है। उसमें महाराजा रत्नग्रीव राज्य करता था। उसने अपने पुत्र को राज्य देकर तीर्थयात्रा का विचार किया। एक दिन राजा ने अपनी सभा में एक तपस्वी ब्राह्मण को देखकर उससे तीर्थों का वृत्तान्त पूछा। ब्राह्मण बोला कि हम पर्य्यटन करते हुए एक समय गंगासागर के जल से प्रक्षालित नील नामक पर्वत पर गये। वहाँ हमने चतुर्भुजी मूर्तिवाले शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए भीलों को देखा, तब उनसे चतुर्भुज होने का कारण पूछा। किरातों ने कहा कि हम लोगों का एक छोटा बालक अन्य बालक के साथ खेलता हुआ इस पर्वत के शृंग पर चढ़ गया। तब उसने वहाँ मणियों से खचित सुवर्ण की दीवारों से बना हुआ एक अद्भुत देवालय देखा। यहां एक मन्दिर में लक्ष्मी नारदादिकों से सेवित श्रीहरि को देखकर समीप चलागया। जब देवगण पूजा करके नैवेद्य लगाकर अपने-अपने

लोकों को चले गए तब उस लड़के ने नैवेद्य के एक भात का सीथ पड़ा हुआ पाया और श्रीहरि का दर्शन करके भात का सीथ खालिया, जिससे वह चतुर्भुज हो गया। उस बालक से यह समाचार पाकर हमलोग भी इकट्ठे होकर देवदेव का दर्शन किया और स्वादु युक्त वहां का भात आदि नैवेद्य भोजन करके हम लोग चतुर्भुज रूप हो गए। ऐसा कह ब्राह्मणने रत्नग्रीव से कहा कि हमभी गंगासागर के संगम में स्नान करके उस शृंग पर चढ़े। वहां देवदेवादिकों से बन्दित महाराज को देख मैंने नमस्कार किया और वहां के भात के भोजन से शंख चक्रादिकों से चिह्नित चतुर्भुजत्व पाया। ऐसा ब्राह्मण का वचन सुन राजा रत्नग्रीव ब्राह्मण की आज्ञा से पुरुषोत्तम जी के दर्शन को चला और गंगासागर संगम में पहुँचकर ब्राह्मण से बोला कि नीलपर्वत कितनी दूर है। तब ब्राह्मण ने विस्मित होकर कहा कि नीलपर्वत का स्थल तो यही है; यहाँ ही भील दिखाई दिये थे और इसी मार्ग होकर हम पर्वत पर चढ़े थे। हे राजन्! जब तक पुरुषोत्तमजी का दर्शन न हो तब तक आप यहीं ठहरे रहें। राजा श्रीहरि का ध्यान करने लगा। जब राजा को परमेश्वर के गुणगान करते पाँच दिन बीत गये तब भगवान् त्रिदण्डी का वेष धारण किये हुए राजा के समीप आकर बोले कि हे राजन्! कलह मध्याह्न समय में श्रीहरि तुमको अपना दर्शन देंगे। तुम, तुम्हारा मंत्री, तुम्हारी स्त्री,

यह तपस्वी ब्राह्मण और तुम्हारे पुर का करम्भ नामक कोरी जो बड़ा साधु है, ये सब नील पर्वत पर जायँगे और वहाँ श्रीहरि के धाम को देखेंगे। दूसरे दिन मध्याह्न के समय नीलपर्वत राजा को दिखाई दिया, जो चान्दी के शृंगों से अति शोभित हो रहा था। तब पाँचों आदमी विजय मुहूर्त में नीलपर्वत पर पढ़े। उसके एक शृंग के ऊपर सुवर्ण से बने हुए देवमन्दिर में, सुवर्ण के सिंहासन पर विराजमान, चतुर्भुजी मूर्ति धारण किये हुए श्रीहरि को देखकर सबों ने प्रणाम किया। उसके अनन्तर सब लोग चतुर्भुजरूप हो शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथों में लिये हुए पुरी में निवास करने लगे। उस पुरी में निवास करनेवाले का जन्म सुफल हो जाता है। जो पुरुष तीर्थराज के जल में स्नान करके पुरुषोत्तम भगवान का दर्शन करता है, उसका सदा स्वर्ग में निवास होता है। जो क्षेत्र में शरीर छोड़ता है, उसका जीवन सफल है।

पृथ्वी में सब नगरियों में उत्तम अवन्ती नामक नगरी है। कृतयुग में उस नगरी का राजा इन्द्रद्युम्न था। वह एक समय विष्णु की आराधना की इच्छा से बहुतसी सेना, भृत्य और पुरोहितों को संग ले अवन्तीपुरी से चलकर लवणोदक समुद्र के तीर पहुँचा। राजा ने दस योजन लम्बा और ५ योजन चौड़ा बहुत आश्चर्यों से युक्त तीन लोक से पूजित उस दुर्लभ क्षेत्र को देखकर वहाँ निवास किया।

पुरुषोत्तम के दहिने एक बट का वृक्ष है, जो कल्पांतर में भी विनाश नहीं होता। बट को देखने और उसकी छाया में प्राप्त होने से ब्रह्महत्या भी दूर हो जाती है। उस वृक्ष की प्रदक्षिणा और उसको नमस्कार करने से संपूर्ण पाप छूट जाते हैं। बट के उत्तर दिशा में केशव के प्रसाद अर्थात् धर्ममय स्थान में भगवान की रची हुई मूर्ति है। एक समय सूर्य्य के पुत्र धर्मराज ने बट के समीप विष्णु भगवान की स्तुति की और प्रणाम करके उनसे कहा कि हे नाथ! इस विख्यात और पवित्र पुरुषोत्तम स्थान में सब कामना देनेवाली एक मूर्ति है। उसके दर्शन और उसमें श्रद्धा करनेवाले संपूर्ण मनुष्य श्वेतभुवन को चले जाते हैं, इस कारण से यमपुरी शून्य हुई जाती है, हे देव! तुम मुझ पर प्रसन्न होकर इस प्रतिमा को हर लो। धर्मराज का ऐसा वचन सुन विष्णु ने उस इंद्रनील की मूर्ति को पुरुषोत्तम क्षेत्र के बालू में गुप्त कर दिया। उसके पश्चात् इन्द्रद्युम्न का आगमन हुआ।

राजा इन्द्रद्युम्न पुरुषोत्तम क्षेत्र में जाकर विचार करने लगा कि विष्णु भगवान का मनरूपी पुरुषोत्तम क्षेत्र हैं। कल्पवृक्ष के समान यहाँ बटवृक्ष स्थित है। इन्द्रनील प्रतिमा को भगवान ने गुप्त कर दिया है, विष्णु भगवान की अन्य कोई सुन्दर मूर्ति यहां नहीं देख पड़ती, इसलिये जिससे भगवान प्रत्यक्ष मुझको दर्शन दें, मैं प्रयत्न करता हूँ।

ऐसा कह राजा ने उत्तम शास्त्र के जाननेवाले गणकों को बुलाकर यत्न से भूमि का शोधन करवाया और उस पर सोने और रत्नों से सुशोभित और सुन्दर भीतों तथा सोने के स्तंभों से युक्त भगवान का मन्दिर बनवाया ।

उसके उपरांत राजा इन्द्रद्युम्न ने भगवान की प्राप्ति के लिये बड़े विधान से अश्वमेध यज्ञ समाप्त किया ।

राजा की स्तुति से प्रसन्न हो वासुदेव भगवान ने स्वप्न में दर्शन दिया और उसने कहा कि हे राजन् ! जो तू सनातनी राजपूज्य प्रतिमा को यहाँ स्थापित करने की इच्छा करता है तो मैं उसका उपाय तुझसे कहता हूँ; जब रात्रि व्यतीत हो जावेगी और निर्मल सूर्य्योदय होगा, तब अनेक प्रकार के वृक्षों से सुशोभित समुद्र के तट के समीप लवणोदधि समुद्र से जल बहेगा । उस समय कोलालंघी नामक महावृक्ष समुद्र की वेला से हन्यमान होने पर भी न कांपेगा; उस समय जब तू हाथ में कुल्हाड़ा लेकर वहाँ अकेले गमन करेगा तब उस वृक्ष को देखेगा, निदान तुम इन चिन्हों को देखकर अशंकित हो उस वृक्ष से दिव्य प्रतिमा बनाना । राजा इन्द्रद्युम्न प्रभात होने पर समुद्र में स्नान कर ब्राह्मणों को दान दे अकेला समुद्र के तट पर गया और अति तेजमान महान शाखोंवाला करड़ा मंजीठ के वरण के समान कान्तिवाला विष्णु के उस पुण्यवृक्ष को

जल में स्थित देखकर प्रसन्न हुआ। जब वह कुल्हाड़े से उसे छेदन करने लगा और उसने बीच से छेदन करने की इच्छा की तब उस निरीक्ष्यमान काष्ट में उसको अद्भुत दर्शन हुए। उस समय प्रकाशमान हो महात्मा लोग राजा के पास आकर बोले कि तू किसलिये इस वृक्ष को काटता है ? राजा ने कहा कि हे ब्राह्मणों ! मैं जगत के पति देव-देव के आराधना के लिये इससे मूर्ति बनाऊँगा। यह सुनकर उनमें से एक बोला कि हे महाभाग ! तू इस वृक्ष की छाया में हमारे संग स्थित हो; शिल्प कर्मवालों में श्रेष्ठ यह दूसरा ब्राह्मण, जो सब कर्म्मों में विश्वकर्मा के समान है, तेरे उद्देश के अनुसार प्रतिमा बना देगा। यह सुन राजा ने वृक्ष की छाया में बैठकर उस ब्राह्मण से कहा कि तुम कृष्ण बलदेव और सुभद्रा इन तीनों की तीन प्रतिमा बनाओ। शिल्प कर्मों में निपुण ब्राह्मण वेषधारी विश्वकर्मा ने शुभ लक्षणों से युक्त दिव्य वस्त्रों को पहिनी हुई अनेक रत्नों से अलंकृत मनोहर प्रतिमाओं को बनाया। यह देखकर राजा परम विस्मय को प्राप्त हो बोला कि तुम दोनों देवताओं के समान आचरण करनेवाले कौन हो ? ब्राह्मणों में से एक पुरुष गोला कि तुम मुझको पुरुषोत्तम भगवान् जानो; जब तक समुद्र, पर्वत और स्वर्ग में देवता रहेंगे, तब तक इन्द्रद्युम्न नामवाला और यज्ञांग से संभव वह तीर्थ रहेगा। मनुष्य एक बार यहां स्नान करने से इन्द्र लोक में प्राप्त हो

जावेंगे। जो मनुष्य इस सरोवर के तट पर पिंडदान करेगा उसके २१ कुल का उद्धार हो जावेगा। इस सरोवर के दक्षिण भाग के नैऋत्य कोन में एक वट का वृक्ष है, उसके समीप एक सुन्दर मंडप बना है। ऐसा कह विश्वकर्मा समेत हरि भगवान अन्तर्द्धान हो गये। राजा श्रीकृष्ण, बलदेव और सुभद्रा को बिमान के समान रथ में बैठाकर लाया और शुभ तिथि तथा सुन्दर मुहूर्त में ब्राह्मणों के सहित अपने मन्दिर में इनकी प्रतिष्ठा की। मार्कंडेय मुनि महाप्रलय के समय महावन्हि को देखकर भय से व्याकुल होकर पृथ्वी में भ्रमता फिरा। जब उसे कहीं विश्राम न मिला तब वह पुरुषेश के पास सनातन वटराज के समीप जाकर उसके मूल में स्थित हुआ, जहाँ न कालाग्नि का ही भय था और न शरीर को खेद होता था। जब पृथ्वी जलार्णव हो गई तब डूबते हुए मार्कंडेय मुनि ने उस वट की शाखा पर पलंग के ऊपर बाल रूप कृष्ण भगवान को देखा। उस बालक के कहने पर मुनि उसके मुख में प्रवेश कर गया। और बालक के मुख में सम्पूर्ण ब्रह्मांड को देखकर अन्त में बाहर निकला। उसने बाहर निकल वट वृक्ष के ऊपर पलंग पर स्थित उस बालक को फिर देखा। बालक बोला कि हे मुने! सुख से यहाँ विश्राम कर, जब ब्रह्मा उत्पन्न होंगे, तब मैं पृथ्वी, आकाश और सब जीवों को रचूँगा। मार्कंडेय बोले कि हे भगवान्! मैं परमात्मा शंकर को स्थापना करूँगा,

तुम कहो मैं किस स्थान में उनको स्थित करूँ । जगन्नाथजी बोले कि हे मुने ! तुम शीघ्र ही शिवालय बनाकर शिव की स्थापना करो । शिव की स्थापना से मेरा ही स्थापना हो जावेगा, क्योंकि हमारे और शिव में कुछ अन्तर नहीं है । हे विप्र ! पुरुषोत्तम देव के उत्तर दिशा में अपने नाम से चिन्हित शिवालय बनाओ । यह मार्कंडेय नामक तीर्थ करके लोक में विख्यात होगा ।

मनुष्यों को उचित है कि मार्कंडेय ह्रद में स्नान कर शिवालय में जाकर तीन बार शिव की प्रदक्षिणा करे और मार्कंडेय तथा केशव भगवान् के पूजन करके उनकी स्तुति और उनको प्रणाम करे और कल्पवृक्ष के समीप जाकर तीन प्रदक्षिणा करके उस वटवृक्ष का पूजन करे । जो मनुष्य कृष्ण के आगे स्थित गरुड़ का दर्शन करता है वह विष्णुलोक में प्राप्त होता है और जो वट, गरुड़, पुरुषोत्तम, बलदेव और सुभद्रा का दर्शन करता है; उसको परम गति लाभ होती है । जहाँ इन्द्रनीलमय विष्णु भगवान रेत से आवृत होकर छिपे हैं, उस स्थान के दर्शन करने से मनुष्य विष्णुपुर में जाता है । जिस भगवान ने नृसिंह रूप धर हिरण्यकशिपु दैत्य को मारा था वही वहाँ स्थित हैं ।

सतयुग में श्वेत नाम से विख्यात एक राजा था । वह कई हजार वर्षों तक राज्य

करके अन्त काल में इस लोक की कामनाओं से बिरत हो दक्षिण दिशा के समुद्र के तट पर गया। वहाँ उसने एक अति उत्तम देव मन्दिर बनवाकर उसमें चन्द्रमा के समान कान्ति वाली माधव की मूर्ति को स्थापित किया। राजा की स्तुति से प्रसन्न हो विष्णु भगवान प्रकट होकर बोले कि हे राजन्! तेरी यह कीर्ति तीनों लोकों में प्रकाशित होगी और श्वेत गंगा का यश सम्पूर्ण नर तथा देवता गान करेंगे। जो मनुष्य श्वेत गंगा के जल को कुशा के अग्रभाग से स्पर्श करेगा और उस का निवास स्वर्ग में होगा। जो कोई माधव की प्रतिमा का दर्शन करेगा, वह मेरे लोक में जायगा।

चतुर्दशी को मार्कंडेय हृद में और पूर्णिमा को समुद्र में स्नान का बड़ा पुण्य है। मार्कंडेय बट, रोहिणयाहद, कृष्ण, महोदधि और इन्द्रद्युम्न सरोवर ये पाँच पंचतीर्थ हैं। ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा को जो ज्येष्ठ नक्षत्र हो तो तीर्थराज में स्नान करने से महान फल लाभ होता है। मनुष्यों को उचित है कि वट को नमस्कार करके उससे ३०० धनुष दक्षिण और समुद्र के निकट, जहाँ मन को रमण करने वाला स्वर्ग के द्वार का चिन्ह देख पड़ता है, गमन करे। वह पहले उग्रसेन को देखकर स्वर्ग द्वार से समुद्र पर जाय और पश्चात् यज्ञांग संभव तीर्थ में जाकर इन्द्रद्युम्न नामक पवित्र सरोवर में आचमन कर मंत्र का उच्चारण करे। जो एकादशी के दिन व्रतकर

ज्येष्ठ की पूर्णिमा के दिन पुरुषोत्तम को देखता है वह भगवान् के लोक में जाता है पृथ्वी पर जितने तीर्थ, नदी, सरोवर, तालाब, बावली, कुएँ और हद हैं, वे सब ज्येष्ठ के महीने में पुरुषोत्तम तीर्थ में शयन करते हैं और ज्येष्ठ शुक्ला दशमी के दिन प्रत्यक्ष होते हैं। यह दशमी दस पापों का नाश करती है, इस लिये इसका नाम दशहरा पड़ा है। वैशाख शुक्ला तृतीया के दिन जो मनुष्य चन्दन से विभूषित श्रीकृष्ण का दर्शन करता है वह भगवान के स्थान में प्राप्त होता है। ज्येष्ठ के महीने में नक्षत्र सहित पूर्णिमासी के दिन सदा हरि को स्नान कराया जाता है। जो मनुष्य "गुड़िच क्षेत्र" में जाते हुए रथ में स्थित श्रीकृष्ण, बलदेव और सुभद्रा के दर्शन करते हैं, वे हरि के भवन में प्राप्त होते हैं। जो पुरुष वहाँ ७ दिन तक मंडप में स्थित श्रीकृष्ण, बलदेव और सुभद्रा का दर्शन करते हैं, वे विष्णुलोक में जाते हैं। पूर्व काल में राजा इन्द्रद्युम्न ने हरि की प्रार्थना करके उसने कहा कि हे प्रभो! मेरी इच्छा है कि सरोवर के तीर आपकी यात्रा हो। तब पुरुषोत्तम भगवान ने उसको बर दिया कि "गुड़िच क्षेत्र" में सरोवर के तीर ७ दिन तक मेरी यात्रा रहेगी। आषाढ़ शुक्ल में गुड़िचा नाम वाली यात्रा के समय श्रीकृष्ण, बलदेव और सुभद्रा, के दर्शन करने से अश्वमेध यज्ञ से भी अधिक फल होता है। * इति श्री जगन्नाथ महात्म्यम् समाप्तः *

श्री रामेश्वर माहात्म्यम्

समुद्र के सेतु के दर्शन करने से ब्रह्महत्या के पाप से छूट जाता है। ब्रह्महत्या करनेवाले मनुष्य को उचित है कि वह सेतुबंध यात्रा के मार्ग में चारों वर्णों से भिक्षा माँगे। श्रीरामचन्द्र की आज्ञा से नल वानर ने १०० योजन चौड़ा सेतु बांधा था; उसके दर्शन मात्र से उसके ब्रह्महत्या पाप का नाश हो जाता है। उसको उचित है कि सेतु के दर्शन से विशुद्ध होकर सागर में स्नान करे।

श्रीरामचन्द्र ने रावण को जीतकर लक्ष्मण, सीता, विभीषण आदि राक्षस और सुग्रीव आदि वानरों के सहित पुष्पक विमान पर चढ़ लंका से प्रस्थान किया। विमान आकाश मार्ग से चला। श्रीरामचन्द्र जानकी जी को स्थानों को दिखाने लगे वह बोले कि हे सीते! देखो यह सैना टिकने का स्थान है; यहां सेतु बांधने के पहले शिवजी मेरे ऊपर प्रसन्न हुये थे; यह समुद्र का घाट सेतुबंध नाम से प्रसिद्ध तीनों लोकों में पूजित हुआ है; यह पवित्र स्थान पापों का नाश करने वाला है।

सेतु आरंभ के समय श्रीरामचन्द्र ने लोक के हित के लिये वहां रामेश्वर शिव को स्थापित किया। उन्होंने कहा कि जो व्यक्ति सेतुबंध का दर्शन करके रामेश्वर शिव को प्रणाम करेगा, उसका ब्रह्महत्यादि पाप छूट जायगा। जो प्राणी सेतुबंधु में स्नान और रामेश्वर के दर्शन करके वाराणसी के गंगाजल से रामेश्वर को स्नान करावेगा और जलकी कांवर समुद्र में डाल देगा उसको निःसन्देह ब्रह्मलोक मिलेगा।

शिवजी के १२ ज्योतिर्लिङ्ग हैं—[१] सौराष्ट्र देश में सोमनाथ, [२] श्रीशैल पर मल्लिकार्जुन, [३] उज्जैन में महाकालेश्वर, [४] ओंकार में अमरेश्वर, [५] हिमालय में केदारेश्वर, [६] डांकिनी में भीमशंकर, [७] वाराणसी में विश्वेश, [८] गोदावरी के तट पर त्र्यंबक, [९] चिताभूमि पर वैद्यनाथ, [१०] दारुका वन में नागेश, [११ [सेतुबन्ध में रामेश्वर और [१२ वां] शिवालय में घृष्णेश्वर।

रामचन्द्रजी लक्ष्मण तथा सुग्रीव आदि १८ पद्म सेनाओं के सहित सीता को छुड़ाने के लिए दक्षिण समुद्र के पास पहुँचे। उनको जल पीने के समय स्मरण हुआ कि आज हमने शिवजी का दर्शन नहीं किया, बिना दर्शन किए हम जल कैसे पिएँगे। ऐसा विचार कर उन्होंने वानरों से मृत्तिका मंगाकर मृत्तिका का शिवलिंग बनाया और आवाहन तथा पूजन करके उनसे विनय किया कि हे शंकर! आपकी कृपा से रावण दुर्जय

हुआ है; आप मेरा सहाय कीजिए। शिवजी प्रकट होकर बोले! कि हे रामचन्द्र तुम्हारा मंगल होगा। उसके पश्चात श्रीरामचन्द्र ने शिवजी की जलधारा से जलपान करके शिवजी से विनय किया कि हे शंकर! आर्य लोगों के हित के लिए आप इस स्थान पर निवास कीजिए। शिवजी ने रामचन्द्र के वचन से प्रसन्न होकर वहां लिंग रूप से निवास किया, उसी लिंग को रामेश्वर कहते हैं। रामेश्वर शिव के स्मरण करने से संपूर्ण पापों का नाश हो जाता है।

श्रीरामचन्द्र के बांधे हुए सेतु के समीप सब क्षेत्रों में उत्तम रामेश्वर क्षेत्र है। श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से वानरगण सहस्रों पर्वतों के शृङ्ग, वृक्ष, बेलि, तृण आदि लाये। नल ने समुद्र के ऊपर १० योजन चौड़ा और १०० योजन लंबा सेतु बांधा। जहां रामचन्द्र जी ने कुश शय्या पर शयन किया और सेतु बांधा वही स्थान प्रसिद्ध तीर्थ हो गया। सेतुबन्ध के समीप के तीर्थों में नीचे लिखे हुए २४ तीर्थ प्रधान हैं;—१ चक्र-तीर्थ (जो देवीपत्तन में है) २ वेताल वरद (देवीपत्तन की ओर), ३ पाप विनाशन, ४ सीतासर, ५ वां मंगल तीर्थ, ६ अमृतवापिका, ७ वां ब्रह्मकुण्ड, ८ वां हनुमत्कुण्ड, ९ वां अगस्त्यतीर्थ, १० वां रामतीर्थ, ११ लक्ष्मणतीर्थ, १२ जटातीर्थ, १३ लक्ष्मीतीर्थ, १४ अग्नितीर्थ, १५ चक्रतीर्थ, १६ शिवतीर्थ, १७ शंखतीर्थ, १८ यमुनातीर्थ, १९ गंगा-

तीर्थ, २० गयातीर्थ, २१ कोटितीर्थ, २२ साध्यामृतीर्थ, २३ मानसतीर्थ, और २४ वां धनुष्कोटितीर्थ।

सेतुमूल के समीप चक्रतीर्थ है! धर्म ने दक्षिण के समुद्र के तट पर बहुत काल तक तप किया और स्नान के लिए वहां एक पुष्करिणी बनाया, जिसका नाम धर्मपुष्करिणी पड़ा। धर्म शिवजी को प्रसन्न करके उनका वाहन वृष बन गया। उसके पश्चात् ध्यान करते हुए गालव मुनि को एक राक्षस ने जा पकड़ा। उस समय मुनि विष्णु को पुकारने लगे। विष्णु की आज्ञा से सुदर्शन चक्र ने वहां जाकर उस राक्षस का सिर काट लिया। उसके उपरांत वह चक्र धर्मपुष्करिणी में प्रवेश कर गया; तभी से धर्मपुष्करिणी का नाम चक्रतीर्थ हो गया।

चक्रतीर्थ के दक्षिण भाग में बेताल बरद तीर्थ है। एक ऋषि के आदेशानुसार कपालस्फोट नामक दैत्य दक्षिण-समुद्र के तट पर पवित्र तीर्थ में पहुँचा। पवन के वेग से उस तीर्थ के जलकण उड़कर उस दैत्य के शरीर पर गिरे। जलकणों के स्पर्श से उसने अपना बेताल रूप छोड़कर पूर्व रूप धारण कर लिया। पूर्व जन्म में वहविजयदत्त नामक ब्राह्मण था; किन्तु गालव मुनि के शाप से बेताल हुआ था। उसके पश्चात् वह उस तीर्थ में स्नान करके मनुष्यदेह छोड़कर दिव्य रूप हो स्वर्ग में चला गया। उसी दिन से उस

तीर्थ का नाम बेताल वरद हुआ।

बेतालवरद तीर्थ में स्नान कर गंधमादन पर्वत को, जो सेतुरूप से समुद्र में स्थित है, जाना चाहिये। उसके ऊपर लोक में प्रसिद्ध पापविनाशन तीर्थ है। सुमति नामक ब्राह्मण करोड़ों वर्ष नरक भोगकर ब्राह्मण के गृह जन्मा, परन्तु उसको ब्रह्मराक्षस का आवेश हो गया। तब अगस्त्य मुनि के उपदेश से उसके पिता ने गंधमादन पर्वत के पापविनाशन तीर्थ में उसको संकल्प पूर्वक तीन दिन स्नान कराया, जिससे ब्राह्मण का पुत्र आरोग्य हो गया और अंत में मुक्ति पाया। पापों के नाश करने से उस तीर्थ का नाम पापविनाशन पड़ा है।

गंगा आदि तीर्थ सीता सरोवर में निवास करते हैं। इसी तीर्थ में स्नान करने से ब्रह्महत्या ने इन्द्र को छोड़ा। रामचन्द्रजी के संदेह निवृत्त करने के लिए सीता ने अग्नि में प्रवेश किया और अग्नि से निकल अपने नाम का यह तीर्थ बनाया। तभी से उसका नाम सीतासरोवर हुआ।

सीताकुण्ड में स्नान कर मंगलतीर्थ को जाना चाहिये, जिसमें लक्ष्मीजी निवास करती हैं। इन्द्रादि देवता अलक्ष्मी के नाश के लिये नित्य उस तीर्थ में स्नान करते हैं। सेतुबंध के बीच गंधमादन पर्वत पर मंगलतीर्थ है। उसमें सीता और रामचन्द्

सदा सन्निहित रहते हैं।

रामनाथ क्षेत्र में अमृतवापिका है, जिसमें स्नान करनेवाले मनुष्य अजर अमर हो जाते हैं। मंगलतीर्थ के पास के तीर्थ में अगस्त्य मुनि के भ्राता की मुक्ति हुई, उसी से उस तीर्थ का नाम अमृतवापी हुआ; क्योंकि मोक्ष को अमृत कहते हैं।

अमृतवापी में स्नान कर ब्रह्मकुण्ड तीर्थ को जाना चाहिए। ब्रह्मकुण्ड में स्नान करनेवाले मनुष्य को यज्ञ, तप, दान, तीर्थ करने का कुछ प्रयोजन नहीं है। जो मनुष्य ब्रह्मकुण्ड से निकली विभूति को धारण करता है, उसके समीप ब्रह्मा, विष्णु और शिव जी सदा निवास करते हैं। एक समय ब्रह्मा और विष्णु का परस्पर विवाद हुआ। दोनों अपने को बड़ा कहने लगे। उसी समय मध्य में एक लिंग प्रकट हुआ। उसके अनन्तर यह निश्चय हुआ कि दोनों में से जो इस लिंग के आदि अन्त को निश्चय करे, वही सबमें बड़ा और लोक का कर्त्ता गिना जाय। ब्रह्मा हंस का रूप धर ऊपर को उड़े और विष्णु वाराह रूप धर नीचे चले। १००० वर्ष के पीछे विष्णुजी ने लौटकर देवताओं से कहा कि हमको लिंग का अन्त न मिला। इतने में ब्रह्मा भी आ पहुँचे। वह असत्य बोले कि हम इस लिंग के अग्र को देख आये हैं। तब शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्मा! तुमने हमारे सन्मुख झूठ कहा इसलिये जगत में कोई तुम्हारी पूजा न करेगा।

पीछे ब्रह्मा की प्रार्थना से प्रसन्न होकर शिवजी बोले कि हमारा वचन तो मिथ्या नहीं हो सकता, परन्तु तुम गन्धमादन पर्वत पर जाकर यज्ञ करो, जिससे हमारे शाप का दोष निवृत्त हो जायगा। प्रतिमा में तुम्हारी पूजा न होगी; किन्तु श्रौत स्मार्त कर्मों में तुम्हारा पूजन होगा। ब्रह्माजी ने गंधमादन पर्वत पर जाकर ८८ हजार वर्ष पर्यन्त कई यज्ञ किये। तब शिवजी ने प्रकट होकर यह वरदान दिया कि अब श्रौत स्मार्त कर्मों में तुम्हारा पूजन हुआ करेगा और तुम्हारा यह यज्ञ का स्थान ब्रह्मकुण्ड के नाम से जगत् में प्रसिद्ध होगा। जो एक बार भी इस ब्रह्मकुण्ड में स्नान करेगा उसके लिये मुक्ति का का द्वार खुल जायगा। जो इस कुण्ड के भस्म को धारण करेगा, वह आवागमन से रहित होजायगा।

ब्रह्मकुण्ड में स्नान कर हनुमत्कुण्ड में जाना चाहिये। जब रामचन्द्र रावण को मार कर लौटे और गंधमादन पर्वत पर पहुँचे, तब हनूमान ने अपने नाम से उत्तम तीर्थ बनाया। साक्षात् रुद्र उस तीर्थ का सेवन करते हैं। धर्मसख राजा ने उस तीर्थ में स्नान कर दीर्घायु १०० पुत्र पाये। जो स्त्री उस तीर्थ में स्नान करती है, उसको अवश्य पुत्र उत्पन्न होता है।

हनुमत्कुण्ड के पश्चात् अगस्त्य तीर्थ को जाना चाहिये। उस तीर्थ को साक्षात्

अगस्त्यजी ने बनाया है। पूर्व काल में सुमेरु और विंध्य पर्वत का परस्पर विवाद हुआ; तब विंध्याचल इतना बढ़ा कि सब जीवों का श्वास रुक गया, उस समय शिवजी की आज्ञा से अगस्त्यजी ने उस पर्वत को अपने पैर से ऐसा दबाया कि वह भूमि के समान हो गया। फिर अगस्त्यजी वहाँ से चले और दक्षिण दिशा में विचरते हुए गंधमादन पर्वत पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने नाम से तीर्थ बनाया; जिसमें वह अपनी भार्य्या लोपामुद्रा के साथ आज तक निवास करते हैं। दीर्घतपा मुनि के पुत्र कक्षीवान् ने उस तीर्थ के प्रभाव से स्वनय की कन्या से विवाह किया।

बाद रामकुण्ड को जाना चाहिये। उस सरोवर के तीर पर अल्प दक्षिणा के भी यज्ञ करने से सम्पूर्ण फल मिलता है। अगस्त्य मुनि के शिष्य सुतीक्ष्ण मुनि ने उस सरोवर के तीर पर बहुत काल तक तप किया। राजा युधिष्ठिर उस तीर्थ में स्नान और शिवलिंग का दर्शन करके असत्य भाषण के महादोष से छूट गये।

बाद लक्ष्मणतीर्थ को जाकर उसमें स्नान करना चाहिये। उस तीर्थ के तट पर लक्ष्मणजी ने शिवलिंग स्थापन किया है। बलदेवजी लक्ष्मणतीर्थ में स्नान और लक्ष्मणेश्वर का सेवनकर ब्रह्महत्या से छूट गये।

पूर्व काल में शिवजी ने गंधमादन पर्वत में सबके उपकार के अर्थ एक तीर्थ बनाया।

रामचन्द्रजी ने रावण को मारने के पश्चात् उस तीर्थ में जटा धोई थी, इससे उस तीर्थ का नाम जटातीर्थ पड़ा।

राजा युधिष्ठिर ने कृष्णचन्द्र की प्रेरणा से इन्द्रप्रस्थ से जाकर लक्ष्मीतीर्थ में स्नान किया, जिससे उन्होंने बड़ा ऐश्वर्य्य पाया।

पूर्व काल में श्रीरामचन्द्रजी रावण को मार सीता और लक्ष्मण के सहित जानकी की शुद्धि के लिये सेतु मार्ग से गंधमादन पर पहुँचे। उन्होंने वहाँ लक्ष्मीतीर्थ के तट पर स्थिर हो अग्नि को आवाहन किया। अग्नि समुद्र से निकलकर कहने लगी कि हे रामचन्द्रजी! जानकी के पातिव्रत्य धर्म के प्रभाव से आपने रावण को जीता है; आप इनको ग्रहण कीजिये। तब रामचन्द्रजी ने सीता को ग्रहण किया। रामचन्द्र के आवाहन करने से जहाँ अग्नि प्रकट हुई, वहाँ ही अग्नितीर्थ हुआ। पूर्व काल में पाटलिपुत्र नामक नगर के रहनेवाले पशुमान नामक वैश्य का पुत्र दुष्पण्य उस तीर्थ के जल के स्पर्श से पिशाच-योनि से मुक्त हो स्वर्ग को गया।

पूर्व काल में अहिर्बुध नामक ऋषि गंधमादन पर्वत में सुदर्शनचक्र की उपासना करते थे। उस समय राक्षस आकर उनको पीड़ा देने लगे; तब सुदर्शनचक्र ने आकर सब राक्षसों को मार डाला और मुनि की प्रार्थना से उस तीर्थ में निवास किया। उस

दिन से उस तीर्थ का नाम चक्रतीर्थ पड़ा। पूर्व काल में जब सूर्य्य भगवान् ने उस तीर्थ में स्नान किया, तब उनके कटे हुए हाथ पहिले की भाँति पूर्ण हो गये।

कालभैरव शिवतीर्थ में स्नान करके ब्रह्महत्या से छूटे। ब्रह्मा ने कहा कि हे महादेव! तू मेरे ललाट से उत्पन्न हुआ, इसलिये मेरा पुत्र है। ब्रह्मा के अहंकार-युक्त वचन सुन शिवजी ने कालभैरव को भेजा, भैरव ने ब्रह्मा का पाँचवाँ सिर काट लिया। पीछे शिवजी ब्रह्मा पर प्रसन्न होकर कालभैरव से बोले कि लोक की मर्य्यादा रखने के लिये तुम प्रायश्चित्त करो। कालभैरव ब्रह्मा का सिर हाथ में लिये हुए पुण्यतीर्थ में स्नान करते हुए काशी में पहुँचे। ब्रह्महत्या भयंकर स्त्री के रूप से उनके साथ-साथ फिरती थी। काशी में पहुँचने पर भैरव की ३ भाग ब्रह्महत्या नष्ट हो गई; किन्तु एक भाग रह गई। तब कालभैरव ने गंधमादन पर्वत में पहुँच शिवतीर्थ में स्नान किया, जिससे सम्पूर्ण हत्या दूर हो गई।

पूर्व काल में शंख मुनि ने विष्णु की प्रसन्नता के लिये गंधमादन पर्वत में तप किया और अपने नाम से शंखतीर्थ भी बनाया। उस तीर्थ में स्नान करने से कृतघ्न पुरुष भी शुद्ध हो जाता है।

॥ इति श्रीरामेश्वर माहात्म्यं समाप्तम् ॥

॥ श्री द्वारिकानाथ माहात्म्यम् ॥

मगधदेश का राजा जरासंध अपने प्रताप से संपूर्ण पृथ्वी को अपने अधिकार में करके पृथ्वीनाथ बन गया। पृथ्वी के बहुत से राजा उसके भय से उसके सहायक बन गए और बहुतेरे अपने देश को छोड़कर भाग गए। (कृष्ण ने कहा था कि हम बड़े-बड़े अस्त्रों से लगातार ३०० वर्ष तक जरासंध के साथ लड़ेंगे, तो भी उसको नहीं जीत सकेंगे, क्योंकि वह अमर के समान तेजस्वी और बली है) अस्ति और प्राप्ति नामक जरासंध की दो पुत्री कंस से ब्याही गई थीं। जब कृष्ण ने कंस को मारा, तब उन्होंने अपना दुःख जरासंध से जा सुनाया। जरासंध बार-बार मथुरा पर आक्रमण करने लगा। हंस और डिंभक दो अति बलवान् पुरुष जरासंध के सहायक थे। १७ वीं लड़ाई के समय बलरामजी ने हंस को मारा। डिंभक ने हंस की ग्लानि से यमुना में डूबकर अपना प्राण छोड़ दिया। जरासंध उनकी मृत्यु का समाचार पाकर उदास हो अपनी राजधानी की ओर चला। उसके लौटने पर कृष्ण आदि यादव आनंदित

मन से फिर मथुरा में बसने लगे; किन्तु कंस की दोनों स्त्रियाँ, कृष्ण, बलराम को मारने के लिये अपने पिता जरासंध को फिर उभाड़ने लगीं। तब कृष्ण ने उदास हो मथुरा से भागने का विचार किया। सब मथुरावासी अनंत ऐश्वर्य को आपस में बाँट-कर प्रत्येक आदमी स्वल्प भार लेकर पश्चिमी दिशा में भाग गए। वे लोग भारतवर्ष के पश्चिमी विभाग में रैवत पर्वत की चोटियों से सुशोभित कुशस्थली (अर्थात् द्वारिका) पुरी में जा बसे। उन्होंने अच्छे प्रकार से वहाँ के दुर्ग अर्थात् किले का संस्कार किया। वह दुर्ग देवताओं के भी गमन करने योग्य न रहा। उस दुर्ग से स्त्रियाँ भी अनायास लड़ सकती थीं। सब लोग निर्भय होकर गोमंत नामक पर्वत पर निवास करने लगे। वह पर्वत ३ योजन में फैला हुआ था। एक-एक योजन पर एक-एक सैन्य व्यूह बना था। प्रत्येक योजन के अन्तर पर सौ-सौ द्वार बने थे।

द्वारिकापुरी में जाकर पिंडारक तीर्थ में स्नान करने से बहुत सुवर्ण मिलता है। उस तीर्थ में अब भी पद्म के तुल्य एक मुद्रा, त्रिशूल और पद्म के चिह्न देख पड़ते हैं। वहाँ महादेवजी सर्वदा निवास करते हैं।

प्यासे हुए चन्द आदमियों ने जल को ढूँढते हुए द्वारिका के एक स्थान में तृण लताओं से परिपूर्ण एक बड़ा कूप पाया। उन्होंने उसके भीतर एक बड़ा गिरगिट

देखा। जब उनके बहुत यत्न करने पर गिरगिट कूप से नहीं निकला, तब उन्होंने वहाँ से जाकर कृष्ण से वह वृत्तांत कह सुनाया। कृष्ण भगवान् ने वहाँ जाकर कूप से गिरगिट को निकाला। उन्होंने गिरगिट रूपी राजा नृग से पूछा कि तुम्हारा रूप ऐसा क्यों हुआ है। गिरगिट बोला कि अग्निहोत्री ब्राह्मण की एक गऊ भूल कर हमारे गौओं में आ मिली। मैंने एक ब्राह्मण को वह गऊ फ़िर दान कर दी। अग्निहोत्री ने उस गऊ को दूसरे ब्राह्मण के घर देखा। दोनों ब्राह्मण झगड़ते हुए मेरे पास आए। मैं प्रतिग्रहीता ब्राह्मण को एक गऊ के बदले में एक सौ गऊ देता था, किन्तु वह अस्वीकार करके चला गया। तब मैं दूसरे ब्राह्मण को उस गऊ के बदले में एक सहस्र गऊ लेने को कहा, पर उसने लेने से अस्वीकार करके अपनी ही गऊ को माँगा। उसके पश्चात् जब मैंने उससे सोने-चाँदी से खचित रथ लेने को कहा, तब वह उसको भी अस्वीकार करके क्रोधयुक्त हो अपने घर चला गया। उसी समय में काल-वश होकर यमराज के समीप उपस्थित हुआ। यमराज ने कहा कि हे महाराज नृग! तुम्हारे पुण्य की संख्या नहीं है, किन्तु तुमसे कुछ पाप भी हुआ है। ब्राह्मण की गऊ खा जाने से रक्षा करने की तुम्हारी प्रतिज्ञा नष्ट हुई, इस कारण तुमको पाप हुआ और ब्राह्मण स्वग्रहण करने से तुमको दूसरा पाप लगा। तुम पाप का फल पहिले

अथवा पीछे भोगोगे। मैंने कहा कि मैं पहिले ही पाप का फल भोग करूँगा। हे प्रभो! मैं उसी समय पृथ्वी में गिरा। उस समय धर्मराज ने मुझसे कहा कि सहस्र वर्ष पूरे होने पर तुम्हारा पाप-कर्म नष्ट होगा, कृष्ण भगवान् तुम्हारा उद्धार करेंगे। मैं गिरगिट रूप से नीचे सिर करके कूप में गिर गया। ऐसा कह राजा नृग गिरगिट रूप छोड़कर दिव्य विमान में बैठ सुरलोक में चले गए।

महर्षि दुर्वासा यह कहा करते थे कि मुझको, जो मैं अल्प अपराध में बड़ा क्रोध करता हूँ, कौन मनुष्य सत्कार-पूर्वक अपने गृह में रख सकता है। जब किसी ने उनका सत्कार नहीं किया, तब कृष्ण ने अपने निज गृह में उनका वास कराया। वह कभी सहस्रों आदमी के भोजन का सामान अकेले ही भोजन कर लेते; कभी बहुत थोड़ा भोजन करते, कभी हँसते और कभी अकस्मात् रोदन करने में प्रवृत्त हो जाते थे। उस समय पृथ्वी पर दुर्वासा के समानअवस्था वाला कोई मनुष्य न था। उसने अपने वास-गृह में जाकर बिछाई हुई शय्या और अलंकृत कन्याओं को जला दिया। एक दिन दुर्वासा ने कृष्ण से कहा कि मुझको भोजन के लिये शीघ्र ही पायस दो। कृष्ण ने उनको उष्ण पायस दिया। दुर्वासा ने कुछ पायस भोजन करके कृष्ण से कहा कि तुम इस पायस को अपने सारे अंग में लगाओ। कृष्ण ने जूठे पायस को अपने शरीर और

मस्तक में लगा लिया। तब दुर्वासा ने रुक्मिणी को देखकर उसके शरीर में पायस लगाया। उसके पश्चात् वह पायसलिप्तांगी रुक्मिणी को शीघ्र ही रथ में जोड़कर रथ में बैठ कृष्ण के गृह से बाहर निकले। उन्होंने कृष्ण के सम्मुख ही बालिका रुक्मिणी को कोड़े से मारा और प्रशस्त राजमार्ग से रथ को चलाया। जब रुक्मिणी थक गई, तब दुर्वासा ने क्रुद्ध होकर रथ को वेग-पूर्वक दौड़ाया। उसके पश्चात् वह असंत क्रोधयुक्त हो रथ से उतरकर उर्ध्व मार्ग से दक्षिण की ओर दौड़े। उस समय कृष्ण, जिनके अंग में पायस लगा हुआ था, मुनि के पीछे-पीछे दौड़कर उनसे विनय करने लगे कि हे भगवान्! आप मुझ पर प्रसन्न होवें। तब महर्षि दुर्वासा प्रसन्न होकर बोले कि हे कृष्ण! तुमने क्रोध को जीत लिया है, मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, तुम्हारी टूटी, जली अथवा नष्ट हुई सब वस्तुएँ जैसी की तैसी तथा उससे भी उत्कृष्ट हो जायँगी। तुम्हारे शरीर के जितने भाग में पायस लगा है, वह अभेद्य हो जाएगा, किन्तु तुम्हारे दोनों पदतल में पायस नहीं लगा, मुझको इसी बात का संशय है। उसके पश्चात् ब्राह्मण ने रुक्मिणी से कहा कि हे सुन्दरी! तुम्हारा यश और कीर्ति लोक की सब स्त्रियों से श्रेष्ठ होगी। कृष्ण की सोलह सहस्र स्त्रियों में तुम वरिष्ठा होगी, इत्यादि। उसी समय कृष्ण का शरीर श्रीसम्पन्न हो गया। दुर्वासा ने जिन-जिन वस्तुओं को तोड़-फोड़ दिया था

तथा जलाया था सब नई हो गईं। दुर्वासा उसी स्थान में अन्तर्द्धान हो गए। रुद्र ने दुर्वासा नामक वीर्यवान् ब्राह्मण बनकर कृष्ण के गृह में बहुत काल तक निवास करके दुःसह व्यवहार किया था।

प्रभास में द्वारिका के यादवों के विनाश होने के पश्चात् द्वारिकावासियों के अर्जुन के साथ जाने के लिये नगर से बाहर होने पर समुद्र ने समस्त द्वारिका नगरी को अपने जल में डुबो दिया। ५ लाख यदुवंशी वीर परस्पर लड़कर प्रभास में मर गए थे।

राजा आनर्त के रेवत नामक पुत्र आनर्त देश का राजा हुआ। कुशस्थली उसकी राजधानी हुई।

शर्याती का पुत्र आनर्त और आनर्त का पुत्र रेवत था, जिसने समुद्र के भीतर कुशस्थली नामक पुरी बसाई। वह आनर्त आदि देशों का राज्य करने लगा। उसके १०० पुत्र हुए और रेवती नाम की एक कन्या हुई। राजा रेवत अपनी पुत्री के लिये वर पूछने के अर्थ पुत्री के साथ ब्रह्मलोक में गए। उस समय ब्रह्मा की सभा में गंधर्वगणों का गाना हो रहा था। जब गंधर्वों का गाना समाप्त हुआ, तब रेवत ने अपना अभि-

प्राय ब्रह्मा से कह सुनाया। ब्रह्मा ने कहा कि हे राजेन्द्र! जिन राजपुत्रों को तुमने वर बनाने का निश्चय किया था, वे अपने पिता-पुत्र तथा बांधवों के सहित मर गए। अब सत्ताइसवाँ द्वापर बीतता है। तुम्हारे वंश के सब लोग मृतक हो गए। दैत्यों ने तुम्हारी पुरी लूट ली। अब वहाँ मथुरापुरी के सोमवंशी राजा उग्रसेन राज्य करते हैं। श्रीकृष्ण ने सब यादवों को द्वारिका में बसाया है। वहाँ के वसुदेव के पुत्र बलदेव-जी तुम्हारी कन्या के योग्य वर हैं। ऐसा ब्रह्मा का वचन सुन राजा रेवत द्वारिका में आये और रेवती नामक अपनी कन्या को बलदेवजी को समर्पण करके बदरिकाश्रम में चले गए।

जब कृष्ण ने मथुरा के राजा कंस को मार डाला, तब अस्ति और प्राप्ति नामक उसकी दोनों स्त्रियों ने अपने पिता मगध देश के राजा जरासंध से अपना दुःख जा सुनाया। जरासंध ने २३ अक्षौहिणी सेना लेकर मथुरा को चारों ओर से घेर लिया (२१८७० हाथी, २१८७० रथ, ६५६१० घोड़े और १०९३५० पैदल की एक अक्षौ-हिणी होती है। बड़ी लड़ाई के अन्त में वह कृष्ण आदि यदुवंशियों से परास्त होकर मगध देश को लौट गया। इसी भाँति जरासंध ने २३ अक्षौहिणी सेना लेकर १७ बार मथुरा पर आक्रमण किया, किन्तु परास्त होकर सत्रहों बार उसको लौट जाना

पड़ा। अठारहवीं बार जरासंध के आक्रमण करने से पहिले ही नारद की प्रेरणा से कालयवन ने आकर मथुरा को घेर लिया। उस समय कृष्ण ने विचार किया कि महा बलवान् कालयवन मथुरा को घेर रहा है और कल अथवा परसों जरासंध भी अवश्य आवेगा, इसलिये एक अगम किले में यादवों को रखकर कालयवन का वध करना चाहिये। ऐसा विचारकर उन्होंने समुद्र के बीच में १२ योजन का किला बनाकर उसमें द्वारिका नामक आश्चर्य नगर बनाया और अपने योग के प्रभाव से मथुरावासियों को उस नगर में पहुँचा दिया। उसके पश्चात् वह द्वारिका से मथुरा में आकर कालयवन के सामने होकर मथुरा के द्वार से बाहर निकले। कालयवन श्रीकृष्ण को पकड़ने के लिये उनके पीछे दौड़ा, जो पर्वत की गुफा में राजा मुचुकुन्द की दृष्टि से जल गया। कृष्ण ने मथुरा में आकर कालयवन की सेना को मारकर उसका सब धन द्वारिका में भेज दिया। उसी समय जरासंध फिर २३ अक्षौहिणी सेना लेकर मथुरा पर चढ़ आया। कृष्ण और बलदेव वहाँ से शीघ्र भागे। जरासंध उनके पीछे दौड़ने लगा। दोनों भाई दूर जाकर प्रवर्षण नामक पर्वत पर चढ़ गए। जरासंध उस पर्वत के चारों ओर आग लगाकर चला गया। कृष्ण और बलदेव पर्वत से कूदकर द्वारिका में चले गए।

कृष्ण की ८ पटरानी थीं:—(१) विदर्भ देश के कुण्डनपुर के राजा भीष्मक की पुत्री रुक्मणी, (२) जांबवान् की पुत्री जांबवती, (३) द्वारिका के सत्राजित की पुत्री सत्यभामा, (४) सूर्य की पुत्री कालिंदी, (५) उज्जैन की रहनेवाली वसुदेव की बहिन राजाधिदेवी की पुत्री मित्रविंदा, (६) अयोध्या के राजा नग्नजित की कन्या सत्या, जिसको नग्नजिती भी कहते हैं, (७) कैकय देश में रहनेवाली वसुदेव की बहिन श्रुतिकीर्ति की पुत्री भद्रा और (८) मद्रदेश के राजा की पुत्री लक्ष्मणा।

यादवों की संख्या ३ करोड़ थी; उनमें से ६० हजार देवताओं के अंश से बड़े बलवान् थे।

कृष्ण के परम धाम जाने के पीछे समुद्र ने रुक्मिणी के महल को छोड़ कर सारी द्वारिका नगरी को अपने जल में डुबो दिया। उस महल को समुद्र अब तक नहीं बोर सकते; क्योंकि वहाँ विहार करने के लिये कृष्ण भगवान् नित्य आते हैं।

द्वारावती के गोमती नदी का जल साक्षात् ब्रह्म रूप है। वहाँ के सब पाषाण और सब मनुष्य चक्रांकित हैं। वहाँ सब लोगों के पालक त्रिविक्रम भगवान् सर्वदा निवास करते हैं। जो मनुष्य द्वारावती के गोमती चक्र से युक्त १२ शालग्राम शिला का पूजन

करता है, वह वैकुंठ में जाकर पूजित होता है। जिस स्थान पर द्वारावती की शिला रहती है, वह स्थान वैकुण्ठ भवन के तुल्य है; उस स्थान में मरनेवाले मनुष्य विष्णु लोक में जाते हैं। जो पुरुष ३ रात्रि द्वारिका में निवास करके गोमती के जल में स्नान करता है, वह धन्य है। विराट् पुरुष के ७ धातु सातों पुरियाँ हैं।

मनुष्य गोपीचंदन को अपने अंग में लगाने से ब्रह्महत्या के पाप से विमुक्त हो जाता है। गोपीचंदन गंगा जल के समान पवित्र है; उसका तिलक लगाने से चांडाल भी शुद्ध हो जाता है। जिस घर में गोपीचंदन रहता है, वह गृह विष्णु का मंदिर है। जो मनुष्य गोपीचंदन का तिलक लगाता है, वह विष्णु लोक में निवास करता है। ब्राह्मण और गऊ को मारनेवाला भी गोपीचंदन शरीर में लगाने से तत्काल ही सब पापों से विमुक्त हो जाता है।

जिस स्थान में द्वारिका चक्र और शालग्राम शिला दोनों रहते हैं, वह स्थान मुक्ति-दायक हो जाता है। द्वारिका तीर्थ संपूर्ण पापों का नाश करनेवाला और भुक्ति-मुक्ति का

देनेवाला है। जिस स्थान में शालग्राम शिला और द्वारिका की शिला अर्थात् गोमती चक्र रहता है, वह स्थान निःसंदेह मुक्ति का देनेवाला है। अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंतिका और द्वारिका ये सातों पुरियाँ मोक्ष देनेवाली हैं।

द्वारिका के चारों ओर चारों वर्णों के प्रवेश करने के लिये द्वार बने हुए हैं, इसी कारण से तत्त्ववेत्ताओं ने उसको द्वारावती कहा है।

द्वारिका में समुद्र के पास पंचसर नामक तीर्थ है, जिसमें स्नान करने से सब पाप छूट जाते हैं।

॥ इति श्रीद्वारिकाधीश माहात्म्य ॥

श्रीअयोध्यापुरी माहात्म्य

अयोध्या घाघरा नदी के तट पर सप्तपुरियों में से एक है। यह स्थान श्रीरामचन्द्रजी की जन्मभूमि है। मुक्ति को देनेवाली इस पुरी का विधिपूर्वक दर्शन करने से सब पाप दूर होते हैं। स्वर्गद्वार तीर्थ में स्नानकर श्रीभगवान् रघुनाथजी के दर्शन करने से महत् फल मिलता है। यहाँ अनेक मंदिर हैं, जिनमें मुख्य ये हैं—हनुमानगढ़ी, कनक-भवन [सोने का गढ़], रामघाट, रामकोट, मनीपर्वत। यहाँ प्रतिवर्ष रामनवमी और झूला का मेला समारोह से होता है। यहाँ से ६ कोस पर नन्दिग्राम स्थान है, जहाँ भरतजी ने तपस्या की थी। यहाँ से १८ कोस की दूरी पर नैमिषारण्य तीर्थ है।

॥ इति श्रीअयोध्यापुरी माहात्म्य ॥

श्रीमथुरापुरी माहात्म्य

यह श्रीकृष्णजी की जन्म-भूमि और विष्णु भगवान् के आठवें अवतार के लिए प्रसिद्ध है। आदि वैदिक काल से ही मथुरा के प्राचीन नगर का महत्त्व रहा है। श्रीमथुराजी में जप-उपवास करता हुआ पुरुष मुक्ति पाता है। यदि प्रमादवश कोई मनुष्य यहाँ पाप भी करे, तो विश्रामघाट में जाकर स्नान करने से तत्काल उसके पाप भस्म हो जाते हैं। विश्रामघाट में विधिपूर्वक स्नानकर अलग-अलग तिल-जल से तर्पण करके वह मनुष्य अपने नरकगामी पितरों का उद्धार करके विष्णुलोक में वास करवाता है। यह सात मोक्षदा पुरियों में से एक है। इसका प्राचीन नाम मधुपुरी या मधुरा है। यहाँ मधु नामक दैत्य का क्रीडास्थल था। उस दैत्य को शत्रुघ्नजी ने मारकर यह नगर बसाया और इसका शासन अपने पुत्र सुबाहु को सौंपा।

॥ इति श्रीमथुरापुरी माहात्म्य ॥

श्रीकाशीपुरी माहात्म्य

असी और वरुणा इन दोनों नदियों के बीच पाँच कोस तक काशीपुरी है, जिस स्थान में देवता भी मुक्ति चाहते हैं। मणिकर्णिका, ज्ञानबावड़ी, विष्णुपादोदक तीर्थ तथा पंचगंगा में स्नान करके मनुष्य फिर माता का स्तन पान नहीं करता है। यह नगर हिन्दुओं की धार्मिक राजधानी तथा वैदिक काल की सभ्यता का केन्द्र रह चुका है। श्रीविश्वनाथजी के दर्शन करके मुक्ति मिलती है और मनुष्य जन्म-मरण से रहित हो जाता है। यह भारतवर्ष के बहुत ही पवित्र स्थानों में से है तथा सहस्रों भक्त-जन यहाँ प्रतिवर्ष मोक्ष-प्राप्ति के अभिप्राय से आते हैं। काशी सप्तपुरियों में से एक है। 'काश्यां मरणान्मुक्तिः' यह समस्त शास्त्रों का निर्विवाद मत है। पुराणों में इसे अविमुक्तक्षेत्र कहा है।

श्रीकांचीपुरी माहात्म्य

विष्णुकांची में साक्षात् विष्णु हैं तथा शिवकांची में स्वयं शिव हैं। इस पुरी की गणना भारत के सात पवित्र नगरों में की जाती है। यह स्थान दक्षिण भारत में कांजीवरम् के नाम से प्रसिद्ध है और इसे दक्षिण काशी कहते हैं। नगर के एक भाग को "शिव-कांची" कहते हैं। यहाँ पर सात तीर्थ अथवा तालाब हैं, जो स्नान के लिए अत्यन्त पवित्र समझे जाते हैं। इनमें से मुख्य तीर्थ सर्वतीर्थम् के नाम से प्रसिद्ध है। लोगों का मत है कि भारतवर्ष की सब नदियाँ पार्वतीजी के तप का दर्शन करने के लिए यहाँ पर एकत्रित हुई हैं। जैनों और बौद्धों के मठों और स्तूपों के खंडहर, प्राचीन पल्लवों के देवालय, वैकुण्ठ, पेरूमल-मन्दिर तथा कैलाशनाथ-मंदिर इत्यादि अनेक दर्शनीय स्थान हैं।

अवन्तिकापुरी माहात्म्य

यह पुरी भी भारत की उन सात पुरियों में से है, जिसका प्रत्येक सनातनी हिन्दू मोक्ष-प्राप्ति के निमित्त श्रद्धा और भक्ति से स्मरण करता है। ईसा--सम्वत् के आरम्भ से यह नगर उज्जैन के नाम से प्रसिद्ध है। वेद, पुराण तथा रामायण और महाभारत में अवन्तिका के माहात्म्य का अनेकों स्थानों में विवरण है। यह पुरी क्षिप्रा नदी के तीर पर बसी हुई है। यह बहुत प्राचीन काल से बड़े-बड़े सम्राटों की राजधानी और विद्वानों का शिक्षापीठ रही है। यहाँ महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग है। प्रयाग और नासिक की भाँति यहाँ भी प्रत्येक बारहवें वर्ष जब सिंहराशि के बृहस्पति होते हैं, तब कुम्भ का मेला लगता है। अग्निपुराण में लिखा है कि अवन्तिकापुरी पापों को नष्ट करती है और अन्त काल में मोक्ष-प्रदान करती है। जगद्गुरु शंकराचार्य के समय यहाँ राजा सुधन्वा राज्य करता था।

॥ इति श्रीअवन्तिकापुरी माहात्म्य ॥

श्रीकुरुक्षेत्र महात्म्य

कुरुक्षेत्र के रामतीर्थ में अपने वित्तानुसार विधिपूर्वक जो सूर्यग्रहण में सुवर्ण-दान करता है, वह मुक्तिभागी होता है। लोभवश जो अधम जन यहाँ ग्रहण में दान लेते हैं, उनको सौ कोटि कल्पों तक भी मनुष्य-जन्म नहीं मिलता। यहीं महाभारत का भीषण युद्ध हुआ था। यह धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र महाराज कुरु की अमर कीर्ति है। कुरुक्षेत्र में जो सूर्यकुण्ड है, उसमें सूर्यग्रहण के समय स्नान करने का बड़ा भारी माहात्म्य है। कुरुक्षेत्र का सूर्यग्रहण का मेला भारत के बहुत बड़े मेलों में गिना जाता है। यहाँ अनेक दर्शनीय स्थान हैं। जिस स्थान पर भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था, उसके भी यहाँ दर्शन होते हैं।

श्रीहरिक्षेत्र माहात्म्य

हरिक्षेत्र-चरणोदक से स्नान कर, श्रीनारायण का दर्शन कर मनुष्य सब पापों से छूटकर भगवान् के संग वैकुण्ठ में विहार करता है। इसी स्थान पर श्रीविष्णु भगवान् ने ग्राह के मुख से गजेन्द्र का उद्धार किया था।

श्रीगयाक्षेत्र माहात्म्य

यह श्रेष्ठ तीर्थ श्राद्धादिक कर्म करने से पितरों को मोक्ष देनेवाला है। नरक में स्थित पितर सदैव इच्छा करते हैं कि मेरा पुत्र गया जाय और हम मोक्ष प्राप्त करें। गया में अपने पुत्र को देखकर पितर अति प्रसन्न होते हैं और कहते हैं कि यदि मेरा नाम लेकर पैर से भी जल दे, तो मानो अक्षय शान्ति मिल गई। शास्त्र का कथन है कि पितृगण से मुक्त होने के लिए प्रत्येक सन्तान को गया-श्राद्ध करना चाहिए। याज्ञवल्क्य-स्मृति में लिखा है कि जो प्राणी गया कर आते हैं, उनकी दश आगे की और दश पीछे की पीढ़ियों का उद्धार हो जाता है।

श्रीपुष्करक्षेत्र माहात्म्य

जो मनुष्य कार्तिक में पुष्करराज में स्नान करके श्राद्ध करे और दक्षिणा-सहित ब्राह्मणों को भोजन दे, वह विष्णुलोक को प्राप्त होता है। एक बार इस तीर्थ में स्नान करके, एकाग्रचित्त होकर यज्ञस्तम्भ के दर्शन करे, तो मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है।

श्रीवाराहक्षेत्र माहात्म्य

साठ हजार वर्ष तक योगाभ्यास करके जो फल मिलता है, वही फल विधि-पूर्वक वाराहक्षेत्र के दर्शनमात्र करने से प्राप्त होता है। वाराह तीर्थ में भक्तिभाव-पूर्वक स्नान कर श्रीनारायण का पूजन करने से तत्क्षण सप्तजन्म-पर्यन्त के किए हुए पाप नष्ट होते हैं और अभीष्ट फल मिलता है।

श्रीप्रयागराज माहात्म्य

यहाँ पर ब्रह्मा ने चारों वेदों की प्राप्ति के पश्चात् एक घोड़े की बलि चढ़ाई थी। गंगा, यमुना तथा अन्तर्हित सरस्वती के पुनीत संगम में स्नान कर माधव का दर्शन करके वह पुरुष पुण्यवानों के भोगों को भोग के श्रीमाधवजी के स्वरूप को पाता है। भक्तियुक्त हो मनुष्य माघ के महीने में त्रिवेणी में स्नान करके महत् फल को पाता है।

श्रीनैमिषारण्य माहात्म्य

इस पुण्य भूमि में ही सूत - शौनकादि साठ सहस्र ऋषि एकत्र होकर धर्म की चर्चा किया करते थे। यहाँ पर अनेक तीर्थ विराजमान हैं, जिनके दर्शनों से अपार आनन्द मिलता है। विशेष दर्शन श्रीदेवराज भगवान्, पुण्डरीक वल्ली, लक्ष्मी धर्म वर्धन विमान विराजमान हैं, जिनकी भक्तिपूर्वक आराधना करने से महद् फल की प्राप्ति होती है।

श्रीचित्रकूट माहात्म्य

शिवपुराण में लिखा है कि चित्रकूट के दर्शन से पापात्मा भी निष्पाप हो जाता है। महाभारत में लिखा है कि कोटितीर्थ और मन्दाकिनी गंगा का स्नान तथा चित्रकूट की यात्रा करने से अश्वमेध-यज्ञ का फल प्राप्त होता है। जो यात्री निराहार रहकर मन्दाकिनी और गुप्त गोदावरी में स्नानादि तीर्थ-विधि करते हैं, उनके ज्ञान और श्री की वृद्धि होती है।

श्रीनर्मदा माहात्म्य

स्वर्ग, भूमि और अंतरिक्ष में जो-जो तीर्थ हैं, वे सब नर्मदा में हैं। शुद्धात्मा पुरुष इनमें से किसी में स्नान करे, तो उत्तम गति को पाता है। नर्मदा के तीर पर किया हुआ स्नान, दान, जप, होम, वेदपाठ और पूजन आदि सभी अक्षय पुण्य को देनेवाले हैं।

॥ इति श्रीनर्मदा माहात्म्य ॥

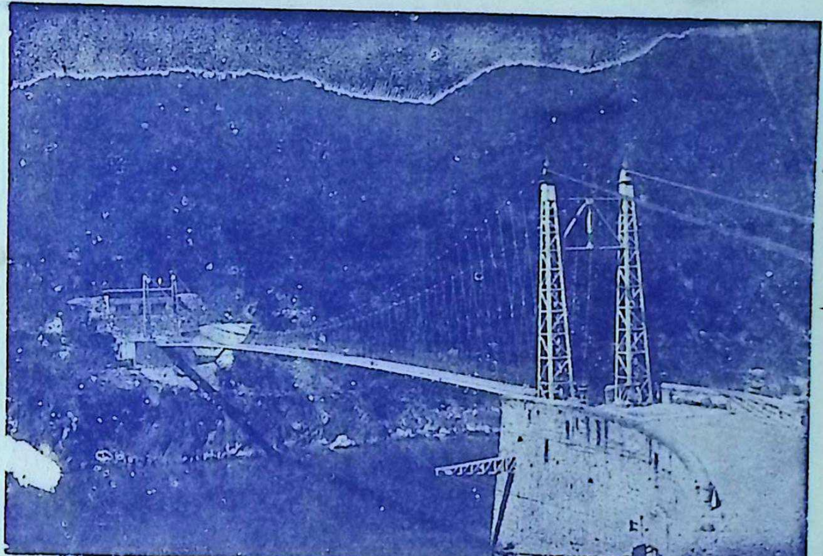

लक्ष्मण झूला—यह स्थान ऋषीकेश से ३ मील दूर उत्तर की ओर है

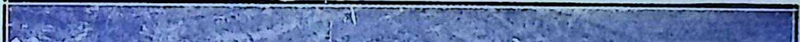

देवप्रयाग—(१,५५० फीट) यह अलकनन्दा तवा भागीरथी का संगम स्थान है और यहाँ से आगे यह दोनों नदियाँ श्री गंगा जी के नाम से विख्यात है।

पंडुकेश्वर

यहाँ पूर्वकाल में राजा पाण्डु ने तप किया व पीछे पांडवों ने भी यहाँ निवास किया। ऊपर योगध्यानी व वासुदेव के प्रसिद्ध मन्दिर दिखलाई दे रहे हैं।

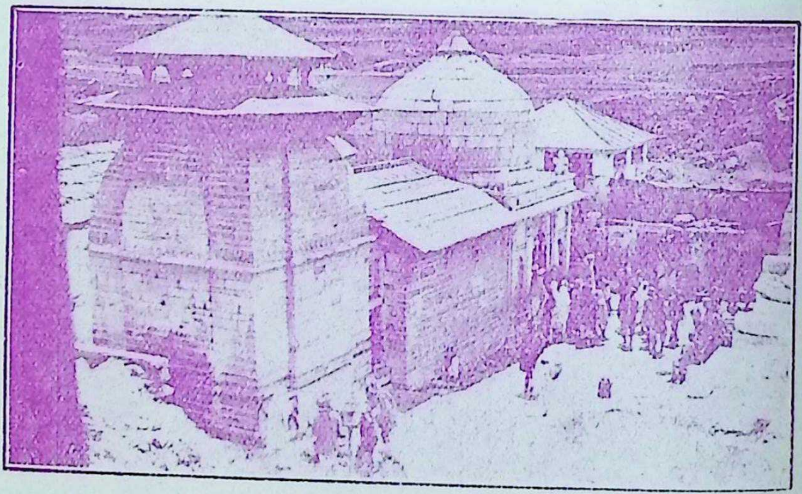

श्रीबदरीनाथजी का मन्दिर

(१०२४४ फ़ी०)। सातवीं शताब्दी में श्रीस्वामी शंकराचार्यजी ने श्रीबद्रीविशाल की मूर्ति को नारदकुण्ड से निकालकर इस धाम का जीर्णोद्धार किया।

(उत्तराखण्ड यात्रा मार्ग के मीलों का निचोड़)

(१) हरिद्वार से यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ और बदरीनाथ।

		मोटर से	पैदल	कुल मील	कुल दूरी
(अ)	हरिद्वार से (नरेन्द्रनगर-टेहरी होकर) यमुनोत्तरी	६८	७२	१४०	१४०
(आ)	यमुनोत्तरी से गंगोत्तरी	—	९९	९९	२३९
(इ)	गंगोत्तरी से केदारनाथ	—	१२१	१२१	३६०
(ई)	केदारनाथ से बदरीनाथ	—	१०१	१०१	४६१
(उ)	बदरीनाथ से हरिद्वार	१४१	५१	१९२	३५३
	जोड़	२०९	२४४	६५३	—

(२) हरिद्वार से केदारनाथ और बदरीनाथ

		मोटर से	पैदल	कुल मील	कुल दूरी
(अ)	हरिद्वार से केदारनाथ	१००	५१	१५१	१५१
(आ)	केदारनाथ से बदरीनाथ	—	१०१	१०१	२५२
(इ)	बदरीनाथ से हरिद्वार	१४१	५१	१९२	४४४
	जोड़	२४१	२०३	४४४	—

(३) हरिद्वार से बदरीनाथ

		मोटर से	पैदल	कुल मील	कुल दूरी
(अ)	हरिद्वार से बदरीनाथ	१४१	५१	१९२	१९२
(आ)	बदरीनाथ से हरिद्वार	१४१	५१	१९२	३८४
	जोड़	२८२	१०२	३८४	—

उत्तराखण्ड यात्रा एक दृष्टि में

		मोटर से	पैदल	कुल मील
१.	हरिद्वार से नरेन्द्रनगर-टेहरी होकर यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ, बदरीनाथ और वापस हरिद्वार	२०९	४४४	६५३
२.	हरिद्वार से केदारनाथ, बदरीनाथ और वापस हरिद्वार	२४१	२०३	४४४
३.	हरिद्वार से सीधे बदरीनाथ और वापस हरिद्वार	२८२	१०२	३८४

उत्तराखण्ड-यात्रा

श्रीबदरीनाथ धाम भारत-स्थित अन्य तीन धामों से विकट माना जाता है, कारण कि अन्य तीन धाम—जगन्नाथ, रामेश्वर तथा द्वारिका—देश की समतल भूमि में स्थित हैं और वहाँ तक रेल द्वारा आसानी के साथ यात्रा होती है, किन्तु श्री-बदरीनाथ ही ऐसा धाम है जो सुदूर पर्वतराज की गोद में उत्तराखण्ड की पवित्र भूमि में स्थित है। पहले इस तीर्थराज की यात्रा करने में लोग बहुत घबड़ाते थे किन्तु अब यह मार्ग बहुत सुगम हो गया है। इस धाम के अतिरिक्त उत्तराखण्ड में यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी तथा केदारनाथ के सुप्रसिद्ध तीर्थ विराजमान हैं। अधिकतर यात्री केदारनाथ होकर बदरीनाथ जाते हैं। अब तो दिन ब दिन अधिक संख्या में यात्री यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी होकर केदारनाथ तथा बदरीनाथ की यात्रा करते हैं। कुछ वैष्णव यात्री केवल बदरीनाथ की ही यात्रा करते हैं। इस यात्रा मार्ग में अब चमोली तक १६ फुट चौड़ी मोटर की सड़क बन गई है और जोशीमठ तक शीघ्र मोटर की सड़क बननेवाली है।

उत्तराखण्ड की यात्रा वैशाखी के मेले के बाद (जो अप्रैल के मध्य में होता है) हरिद्वार से आरम्भ होती है। हरिद्वार ईस्ट इंडियन रेलवे का स्टेशन है। यह बड़ा

प्राचीन नगर है और प्राचीन काल में यह कपिल नाम से प्रसिद्ध था। यही उत्तराखण्ड यात्रा का द्वार है। पतितपावनी गंगा उत्तराखण्ड हिमालय से निकलकर अपने पर्वतीय जीवन को त्यागकर यहीं पर देश की समतल भूमि में प्रवेश करती हैं। यहाँ हर बारहवें वर्ष कुम्भ का बड़ा मेला होता है। यहाँ हरि की पौढ़ी में स्नान करने का प्रसिद्ध घाट है। पास ही मायापुर और कनखल है।

हरिद्वार से १५ मील आगे ऋषीकेश है। यहाँ तक रेल आती है और यह रेलवे का अन्तिम स्टेशन है। यहाँ से पर्वत शुरू हो जाते हैं। यहाँ भरत-मन्दिर प्रसिद्ध है। यह नगर गंगा के तट पर बसा हुआ है। यहाँ से श्रीबदरी-केदार के लिए मोटर और पैदल का मार्ग इस प्रकार है—

नोट—श्रीनगर से मोटर का दूसरा रास्ता कोटद्वार रेलवे स्टेशन को गया है। इस मार्ग की मील संख्या इस प्रकार है—

श्रीनगर से पौड़ी—१६ मील
पौड़ी से कोटद्वार—६६ मील

कुल ८५ मील।

कहाँ से	कहाँ तक	मील मोटर मार्ग	संख्या पैदल मार्ग
ऋषीकेश	देवप्रयाग	४२	—
देवप्रयाग	कीर्तिनगर	२१	—
कीर्तिनगर	श्रीनगर	—	३
श्रीनगर	रुद्रप्रयाग	२२	—
रुद्रप्रयाग	केदारनाथ	—	४८
केदारनाथ	बद्रीनाथ	—	१०१
बद्रीनाथ	चमोली	—	४८
चमोली	श्रीनगर	६३	—
श्रीनगर	कीर्तिनगर	—	३
कीर्तिनगर	ऋषीकेश	६३	—
	कुल मील ...	२११	२०३

अर्थात् मोटर मार्ग २११ मील
पैदल मार्ग २०३ ,,

कुल ४१४ ,,

ऋषीकेश से सीधे बदरीनाथ—१७६ मील। जो यात्री ऋषीकेश से सीधे बदरीनाथ जाना चाहते हैं, उनके यात्रा-मार्ग का विवरण इस प्रकार है:—

कहाँ से	कहाँ तक	मील मोटर मार्ग	संख्या पैदल मार्ग
ऋषीकेश	कीर्तिनगर	६३	—
कीर्तिनगर	श्रीनगर	—	३
श्रीनगर	चमोली	६३	—
चमोली	बदरीनाथ	—	४७
	कुल	१२६	५०

उत्तराखण्ड जिला गढ़वाल में है और यह जिला दो भागों में विभक्त है यथा (१) रियासत-टेहरी गढ़वाल तथा (२) बृटिश गढ़वाल। गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी के तीर्थ रियासत टेहरी-गढ़वाल में हैं और केदारनाथ और बदरीनाथ बृटिश गढ़वाल में हैं।

ऋषीकेश से देवप्रयाग—४२ मील मोटर के मार्ग से है। ऋषीकेश से देवप्रयाग होकर कीर्तिनगर तक ६३ मील लम्बी मोटर की सड़क रियासत टेहरी ने बनवाई और इस सड़क पर मोटर सन् १९३५ ईसवी से चलनी आरम्भ हुई।

देवप्रयाग (१७०० फीट)

देवप्रयाग में भागीरथी और अलकनन्दा का संगम होता है। यहाँ से आगे यह गंगा के नाम से विख्यात है। यह प्रसिद्ध तीर्थ है। रावण-वध के पश्चात् श्रीरामचन्द्रजी ने यहाँ एक हजार वर्ष तक तप किया और उनके नाम से यहाँ एक भव्य मंदिर स्थापित है। यहाँ श्रीबदरीनाथ धाम के पंडागण रहते हैं। यहाँ डाकघर, तारघर, बँगला, अस्पताल, पुलिस-चौकी, धर्मशाला, बाजार और श्रीरघुनाथ-कीर्ति-संस्कृत महाविद्यालय है।

कीर्तिनगर

देवप्रयाग से २१ मील आगे मोटर मार्ग से कीर्तिनगर है। यह टिहरी-रियासत के मोटर-सर्विस का अन्तिम स्टेशन है। यहाँ एक छोटा बाजार और डाकघर है। यहाँ पर अलकनन्दा का पुल पारकर रास्ता बृटिश गढ़वाल को जाता है। कीर्तिनगर से श्रीनगर (३ मील) पैदल का मार्ग है, क्योंकि अभी इन दोनों स्थानों को मिलानेवाली मोटर सड़क नहीं बनी है।

श्रीनगर [१,९०० फीट]

श्रीनगर पहुँचने से आधा मील पहले कमलेश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर है। यहाँ श्रीरामचन्द्रजी ने एक हजार कमल चढ़ाकर शिवजी की उपासना की थी। श्रीनगर गढ़वाल का सबसे बड़ा नगर है। यह पहले गढ़वाल-नरेश की राजधानी थी। यहाँ अंग्रेजी हाईस्कूल, डाकघर, तारघर, अस्पताल, पुलिस चौकी, धर्मशाला और सरकारी बँगला है।

रुद्रप्रयाग (२,००० फीट)

श्रीनगर से रुद्रप्रयाग २२ मील मोटर मार्ग से है। रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी और अलकनन्दा का संगम है। यहाँ रुद्रनाथ महादेव का मन्दिर है। एक छोटा बाजार, तारघर, डाकघर, सरकारी बँगला, अस्पताल और धर्मशाला है। यहाँ से एक रास्ता पुल पारकर मन्दाकिनी के किनारे-किनारे केदारनाथ जाता है और दूसरा रास्ता अलकनन्दा के किनारे-किनारे बदरीनाथ जाता है। रुद्रप्रयाग से केदारनाथ ४८ मील है और रुद्रप्रयाग से सीधे बदरीनाथ ८८ मील है।

(उत्तराखण्ड यात्रा मार्ग के मीलों का निचोड़)

(१) हरिद्वार से यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ और बदरीनाथ।

		मोटर से	पैदल	कुल मील	कुल दूरी
(अ)	हरिद्वार से (नरेन्द्रनगर-टेहरी होकर) यमुनोत्तरी	६८	७२	१४०	१४०
(आ)	यमुनोत्तरी से गंगोत्तरी	—	९९	९९	२३९
(इ)	गंगोत्तरी से केदारनाथ	—	१२१	१२१	३६०
(ई)	केदारनाथ से बदरीनाथ	—	१०१	१०१	४६१
(उ)	बदरीनाथ से हरिद्वार	१४१	५१	१९२	३५३
	जोड़	२०९	२४४	६५३	—

(२) हरिद्वार से केदारनाथ और बदरीनाथ

		मोटर से	पैदल	कुल मील	कुल दूरी
(अ)	हरिद्वार से केदारनाथ	१००	५१	१५१	१५१
(आ)	केदारनाथ से बदरीनाथ	—	१०१	१०१	२५२
(इ)	बदरीनाथ से हरिद्वार	१४१	५१	१९२	४४४
	जोड़	२४१	२०३	४४४	—

(३) हरिद्वार से बदरीनाथ

		मोटर से	पैदल	कुल मील	कुल दूरी
(अ)	हरिद्वार से बदरीनाथ	१४१	५१	१९२	१९२
(आ)	बदरीनाथ से हरिद्वार	१४१	५१	१९२	३८४
	जोड़	२८२	१०२	३८४	—

उत्तराखण्ड यात्रा एक दृष्टि में

		मोटर से	पैदल	कुल मील
१.	हरिद्वार से नरेन्द्रनगर-टेहरी होकर यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ, बदरीनाथ और वापस हरिद्वार	२०९	४४४	६५३
२.	हरिद्वार से केदारनाथ, बदरीनाथ और वापस हरिद्वार	२४१	२०३	४४४
३.	हरिद्वार से सीधे बदरीनाथ और वापस हरिद्वार	२८२	१०२	३८४

उत्तराखण्ड-यात्रा

श्रीबदरीनाथ धाम भारत-स्थित अन्य तीन धामों से विकट माना जाता है, कारण कि अन्य तीन धाम—जगन्नाथ, रामेश्वर तथा द्वारिका—देश की समतल भूमि में स्थित हैं और वहाँ तक रेल द्वारा आसानी के साथ यात्रा होती है, किन्तु श्री-बदरीनाथ ही ऐसा धाम है जो सुदूर पर्वतराज की गोद में उत्तराखण्ड की पवित्र भूमि में स्थित है। पहले इस तीर्थराज की यात्रा करने में लोग बहुत घबड़ाते थे किन्तु अब यह मार्ग बहुत सुगम हो गया है। इस धाम के अतिरिक्त उत्तराखण्ड में यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी तथा केदारनाथ के सुप्रसिद्ध तीर्थ विराजमान हैं। अधिकतर यात्री केदारनाथ होकर बदरीनाथ जाते हैं। अब तो दिन ब दिन अधिक संख्या में यात्री यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी होकर केदारनाथ तथा बदरीनाथ की यात्रा करते हैं। कुछ वैष्णव यात्री केवल बदरीनाथ की ही यात्रा करते हैं। इस यात्रा मार्ग में अब चमोली तक १६ फुट चौड़ी मोटर की सड़क बन गई है और जोशीमठ तक शीघ्र मोटर की सड़क बननेवाली है।

उत्तराखण्ड की यात्रा वैशाखी के मेले के बाद (जो अप्रैल के मध्य में होता है) हरिद्वार से आरम्भ होती है। हरिद्वार ईस्ट इंडियन रेलवे का स्टेशन है। यह बड़ा

प्राचीन नगर है और प्राचीन काल में यह कपिल नाम से प्रसिद्ध था। यही उत्तराखण्ड यात्रा का द्वार है। पतितपावनी गंगा उत्तराखण्ड हिमालय से निकलकर अपने पर्वतीय जीवन को त्यागकर यहीं पर देश की समतल भूमि में प्रवेश करती हैं। यहाँ हर बारहवें वर्ष कुम्भ का बड़ा मेला होता है। यहाँ हरि की पौढ़ी में स्नान करने का प्रसिद्ध घाट है। पास ही मायापुर और कनखल है।

हरिद्वार से १५ मील आगे ऋषीकेश है। यहाँ तक रेल आती है और यह रेलवे का अन्तिम स्टेशन है। यहाँ से पर्वत शुरू हो जाते हैं। यहाँ भरत-मन्दिर प्रसिद्ध है। यह नगर गंगा के तट पर बसा हुआ है। यहाँ से श्रीबदरी-केदार के लिए मोटर और पैदल का मार्ग इस प्रकार है—

नोट—श्रीनगर से मोटर का दूसरा रास्ता कोटद्वार रेलवे स्टेशन को गया है। इस मार्ग की मील संख्या इस प्रकार है—

श्रीनगर से पौड़ी—१९ मील
पौड़ी से कोटद्वार—६६ मील

कुल ८५ मील।

कहाँ से	कहाँ तक	मील मोटर मार्ग	संख्या पैदल मार्ग
ऋषीकेश	देवप्रयाग	४२	—
देवप्रयाग	कीर्तिनगर	२१	—
कीर्तिनगर	श्रीनगर	—	३
श्रीनगर	रुद्रप्रयाग	२२	—
रुद्रप्रयाग	केदारनाथ	—	४८
केदारनाथ	बदरीनाथ	—	१०१
बदरीनाथ	चमोली	—	४८
चमोली	श्रीनगर	६३	—
श्रीनगर	कीर्तिनगर	—	३
कीर्तिनगर	ऋषीकेश	६३	—
	कुल मील ...	२११	२०३

अर्थात् मोटर मार्ग २११ मील
पैदल मार्ग २०३ ,,
कुल ४१४ ,,

ऋषीकेश से सीधे बद्रीनाथ—१७६ मील। जो यात्री ऋषीकेश से सीधे बद्रीनाथ जाना चाहते हैं, उनके यात्रा-मार्ग का विवरण इस प्रकार है:—

कहाँ से	कहाँ तक	मील मोटर मार्ग	संख्या पैदल मार्ग
ऋषीकेश	कीर्तिनगर	६३	—
कीर्तिनगर	श्रीनगर	—	३
श्रीनगर	चमोली	६३	—
चमोली	बद्रीनाथ	—	४७
	कुल	१२६	५०

उत्तराखण्ड जिला गढ़वाल में है और यह जिला दो भागों में विभक्त है यथा (१) रियासत-टेहरी गढ़वाल तथा (२) वृटिश गढ़वाल। गंगोत्री और यमुनोत्तरी के तीर्थ रियासत टेहरी-गढ़वाल में हैं और केदारनाथ और बद्रीनाथ वृटिश गढ़वाल में हैं।

ऋषीकेश से देवप्रयाग—४२ मील मोटर के मार्ग से है। ऋषीकेश से देवप्रयाग होकर कीर्तिनगर तक ६३ मील लम्बी मोटर की सड़क रियासत टेहरी ने बनवाई और इस सड़क पर मोटर सन् १९३५ ईसवी से चलनी आरम्भ हुई।

देवप्रयाग (१७०० फीट)

देवप्रयाग में भागीरथी और अलकनन्दा का संगम होता है। यहाँ से आगे यह गंगा के नाम से विख्यात है। यह प्रसिद्ध तीर्थ है। रावण-वध के पश्चात् श्री-रामचन्द्रजी ने यहाँ एक हजार वर्ष तक तप किया और उनके नाम से यहाँ एक भव्य मंदिर स्थापित है। यहाँ श्रीबदरीनाथ धाम के पंडागण रहते हैं। यहाँ डाकघर, तारघर, बँगला, अस्पताल, पुलिस-चौकी, धर्मशाला, बाजार और श्रीरघुनाथ-कीर्ति-संस्कृत महाविद्यालय है।

कीर्तिनगर

देवप्रयाग से २१ मील आगे मोटर मार्ग से कीर्तिनगर है। यह टिहरी-रियासत के मोटर-सर्विस का अन्तिम स्टेशन है। यहाँ एक छोटा बाजार और डाकघर है। यहाँ पर अलकनन्दा का पुल पारकर रास्ता बृटिश गढ़वाल को जाता है। कीर्तिनगर से श्रीनगर (३ मील) पैदल का मार्ग है, क्योंकि अभी इन दोनों स्थानों को मिलानेवाली मोटर सड़क नहीं बनी है।

श्रीनगर [१,६०० फीट]

श्रीनगर पहुँचने से आधा मील पहले कमलेश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर है। यहाँ श्रीरामचन्द्रजी ने एक हजार कमल चढ़ाकर शिवजी की उपासना की थी। श्रीनगर गढ़वाल का सबसे बड़ा नगर है। यह पहले गढ़वाल-नरेश की राजधानी थी। यहाँ अंग्रेजी हाईस्कूल, डाकघर, तारघर, अस्पताल, पुलिस चौकी, धर्मशाला और सरकारी बँगला है।

रुद्रप्रयाग (२,००० फीट)

श्रीनगर से रुद्रप्रयाग २२ मील मोटर मार्ग से है। रुद्रप्रयाग में मन्दाकिनी और अलकनन्दा का संगम है। यहाँ रुद्रनाथ महादेव का मन्दिर है। एक छोटा बाजार, तारघर, डाकघर, सरकारी बँगला, अस्पताल और धर्मशाला है। यहाँ से एक रास्ता पुल पारकर मन्दाकिनी के किनारे-किनारे केदारनाथ जाता है और दूसरा रास्ता अलकनन्दा के किनारे-किनारे बदरीनाथ जाता है। रुद्रप्रयाग से केदारनाथ ४८ मील है और रुद्रप्रयाग से सीधे बदरीनाथ ८८ मील है।

श्रीकेदारनाथ मार्ग

उँचाई फीट में	नाम चट्टी	मील संख्या	विवरण
२,०००	रुद्रप्रयाग	०	
	छतोली	५	
	तिलवाड़ा	१	
	रामपुर	१	
३,०००	अगस्त्यमुनि	४	यहाँ हवाई जहाज के उतरने का स्थान तथा मंदिर और डाकघर है।
	भीरी	७	
	कुण्ड	४	
४,८५०	गुप्तकाशी	२॥	कड़ी चढ़ाई। यहाँ मंदिर, बाजार, डाकघर और बँगला है।
	नाला	१	
	ब्यूंग	३	

५,२५०	फाटा	३	यहाँ अस्पताल है।
	रामपुर	३	
	पाटीगाड़	२	चढ़ाई
६,०००	त्रियुगीनारायण	४	

त्रियुगीनारायण में शिव-पार्वती का विवाह हुआ था। तब से यहाँ अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है।

उँचाई फीट में	नाम चट्टी	मील संख्या	विवरण
६,०००	त्रियुगीनारायण	०	
५,७६०	सोमद्वारा	३	
६,५००	गौरीकुण्ड	३	
	चीरवासा भैरव	२	
	रामबाड़ा	२	
११,७५०	श्रीकेदारनाथ	३	रास्ता चढ़ाई का है।

श्रीकेदारनाथ (११,७५० फीट)

इस पुरी के पीछे हिमालय का भव्य दृश्य है। यहाँ श्रीकेदारनाथजी का विशाल मंदिर है। कहते हैं कि इसे पाण्डवों ने बनाया था। पास ही हंसकुण्ड, रेतकुण्ड और उदककुण्ड है। यहाँ बाजार, धर्मशालायें तथा डाकघर है। यह मंदिर अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में खुलता है और दीपावली के पश्चात् बंद हो जाता है।

केदारनाथ से बदरीनाथ—१०१ मील

केदारनाथ से नाला तक २३ मील उसी रास्ते वापस आना पड़ता है। नाला से ३ मील आगे ऊखीमठ है। यहाँ केदारनाथजी का गद्दीस्थान है। पट बन्द होने पर छः महीने तक केदारनाथजी की पूजा यहीं होती है। गद्दी पर महादेवजी की मूर्ति है।

उँचाई फीट में	नाम चट्टी	मील संख्या	विवरण
४,३००	ऊखीमठ	०	

	गणेश चट्टी	३।।	
	पोथीवासा	५	
	चोपता	३	चढ़ाई
१२,०७२	तुंगनाथ	२	
	मंडल	६	उतार व बँगला है।
	गोपेश्वर	६	
३,१५०	चमोली	३	

चमोली (लालसाँगा) यहाँ थाना, बँगला, अस्पताल, डाकघर, तारघर, तहसील, खजाना।

डिप्टी कलक्टर की कचहरी तथा छोटा बाजार अलकनंदा के तट पर है। यहाँ से बदरीनाथ ४७ मील है। हरिद्वार-ऋषीकेश और कोटद्वार से यहाँ (चमोली) तक १६ फ़ीट चौड़ी मोटर-सड़क बन चुकी है। अब जोशीमठ तक भी मोटर-सड़क शीघ्र बननेवाली है।

उँचाई फीट में	नाम चट्टी	मील संख्या	विवरण
	मठ	१।।	

	छिनका	१॥	
३,५००	सियासैण	२॥	डाकघर, अच्छी चट्टी
	हाट	१	
४,०००	पीपलकोटी	३	डाकघर, तारघर, धर्मशाला, बँगला और अच्छा बाजार है।
	गरुड़गंगा	४	गरुड़जी के दर्शन और स्नान।
	टंगणी	२	
	पातालगंगा	२	
५,३००	गुलाबकोटी	२	सरकारी बँगला, छोटी चट्टी
५,०००	हेलंग (कुम्हार चट्टी)	२	बड़ी चट्टी, डाकघर, धर्मशाला
	खनोल्टी	१	
	झरकुला	२	
	सिंहधार	२	अच्छी चट्टी
६,१५०	जोशीमठ	१	

जोशीमठ (६,१५० फीट)

यहाँ सुप्रसिद्ध उत्तर भारत का सिद्ध पीठ श्रीज्योतिर्मठ है, जिसके स्वामी जगद्गुरु स्वामी शंकराचार्य हैं। मंदिर बदरीनाथ के रावल तथा अन्य कर्मचारी शीतकाल में यहीं रहते हैं। यहाँ बाजार, डाक व तारघर, अस्पताल, धर्मशाला, पुलिस-चौकी, नृसिंह-मन्दिर, भगवती दुर्गा का मन्दिर, वासुदेव-मन्दिर तथा हिन्दी-मिडिल स्कूल है। यहाँ से एक रास्ता पूर्व को धौली नदी के किनारे नीती घाटा (जहाँ भोटिया रहते हैं) होकर तिब्बत के अन्तर्गत कैलाश-मानसरोवर को जाता है। दूसरा रास्ता उत्तर की ओर श्रीबद्रीनाथ-धाम को जाता है। यहाँ से श्रीबद्रीनाथपुरी १६ मील है।

ऊँचाई फीट में	नाम चट्टी	मील संख्या	विवरण
४,५००	विष्णुप्रयाग	२॥	मन्दिर और धौली और अलकनन्दा का संगम
	घाट	३॥	

६,०००	पाण्डुकेश्वर	२	मन्दिर, धर्मशाला, डाकघर, बंगला तथा बड़ी चट्टी है।
	लामबगड़	२॥	
	हनुमानचट्टी	४	
१०,२४४	श्रीबदरीनाथ	४॥	

श्रीबदरीनाथ-धाम [१०,२४४ फीट]

यहाँ पहुँचकर यात्री अपना जीवन सफल समझता है। हरएक धर्मप्राण हिन्दू की यह अभिलाषा रहती है कि जीवन रहते एक बार यहाँ आकर भगवान् के दर्शन कर लें। भगवान् का मन्दिर व पुरी एक खुली हुई घाटी में अलकनन्दा के दाहिने तट पर विराजमान है। कहते हैं, बौद्धकाल में भगवान् की मूर्ति को बौद्धों ने अलकनन्दा के अन्तर्गत तप्तकुंड के नीचे नारदकुंड में डाल दिया था। भगवत्-प्रेरणा से सातवीं या आठवीं शताब्दी में स्वामी शंकराचार्य ने नारदकुंड से मूर्ति को निकालकर इस धाम

का जीर्णोद्धार किया। मन्दिर के सामने गरुड़जी की मूर्ति है। मन्दिर के अन्दर श्यामवर्ण भगवान् की मूर्ति एक हाथ से कुछ छोटी बीच में विराजमान है। भगवान् के दाहिनी तरफ कुबेरजी और गरुड़जी हैं और बाईं ओर उद्धवजी, नारद तथा नरनारायण हैं। परिक्रमा में लक्ष्मीजी का मन्दिर, भोगमंडी, भगवान् का कोठार, कचहरी तथा घण्टाकर्ण क्षेत्रपाल हैं।

मन्दिर के नीचे अलकनन्दा के पास प्रसिद्ध तप्तकुंड है। इस अग्नितीर्थ में स्नान व दान करने से महान् फल मिलता है। पास ही नारद-शिला, नारदकुंड, नृसिंहशिला, वाराहशिला और गरुड़शिला है। तप्तकुंड के ऊपर केदारेश्वर तथा आदि स्वामी शंकराचार्य का मन्दिर है।

यहाँ बड़ा बाजार, अस्पताल, डाक व तारघर, पुलिस-चौकी, धर्मशालाएं, तथा सरकारी बँगला है। बाजार में हमारी फर्म—महेशानन्द एण्ड सन्स—की शाखा है, जहाँ श्रीबदरी-केदार व चारोंधाम के माहात्म्य, फोटो, तसवीर, लोकेट, सीनरी कार्ड, संगमरमर पत्थर पर तथा मखमल की डब्बी में भगवान् की मूर्ति तथा अन्य मनोहर चीजें मिलती हैं। इसी ब्रांच में इस फर्म की भारत-विख्यात श्रीबद्रिकाश्रम के पर्वतराज से निकली श्रेष्ठ "लोहज" शिलाजीत मिलती है।

पुरी के उत्तरी भाग में अलकनन्दा के किनारे ब्रह्मकपाल तीर्थ है। यहाँ पिंडदान होता है। आगे १॥ मील पर मातामूर्ति के दर्शन हैं। यहाँ बामन द्वादशी को बड़ा मेला होता है। यहाँ से आध मील की दूरी पर अलकनन्दा के उस पार माना गाँव है। यह इस ओर भारत की सरहद का अन्तिम गाँव है, और यहाँ भोटिया रहते हैं। यहाँ मुचकुन्दगुफा और गणेशगुफा है। यहाँ से एक रास्ता माना घाटा (१८,४०२ फीट) होकर, जो यहाँ से २६ मील है, कैलाश और मानसरोवर (तिब्बत) को जाता है।

वसुधारा

बदरीनाथ से माना गाँव—	२ मील
माना से वसुधारा—	३ ,,

वसुधारा में ४०० फीट ऊँचा प्रसिद्ध जल-प्रपात है। यह दर्शनीय स्थान है।

सतोपंथ

बदरीनाथ—	० मील
मातामूर्ति—	२ ,,

चमतोली—		३॥ ,,
लक्ष्मीवन—		२ ,,
सौधारा—		२॥ ,,
चक्रतीर्थ—		३ ,,
सतोपंथ—	(१४,४४० फीट)	२॥ ,,
सोनकुण्ड—		१॥ ,,
विष्णुकुण्ड—		॥ ,,

सतोपंथ में बर्फानी जल का स्वच्छ व सुन्दर तिकोना तालाब है। इसका घेरा पौन मील है और चौड़ाई १,३०० फीट है। जुलाई, अगस्त और सितम्बर के महीने में यहाँ जाने का रास्ता खुला रहता है।

वापसी मार्ग—चमोली (३,१५० फीट)

बदरीनाथ से चमोली ४८ मील है और चमोली तक उसी मार्ग से वापस आना होता है। चमोली से नंदप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग और श्रीनगर होकर मोटर

सड़क एक ओर ऋषीकेश रेलवे स्टेशन और दूसरी ओर कोटद्वार रेलवे स्टेशन को गई है। इस मार्ग का विवरण इस प्रकार है:—

नन्दप्रयाग [२,८८० फीट]

चमोली से २ मील पर कुहेड़ चट्टी और वहाँ से २ मील पर मैठाणा और वहाँ से ३ मील पर नंदप्रयाग है, मार्ग मोटर का है। यहाँ डाक, तार, टेलीफोन आफिस, डिस्ट्रिक्टबोर्ड का बँगला और अच्छा बाजार है। यहाँ राजा नन्द ने यज्ञ किया था, तभी से इसका नाम नंदप्रयाग पड़ा। इस स्थान का पूर्व नाम कण्वाश्रम है, कारण कि यहाँ महात्मा कण्व ने तप किया था। यह पंच प्रयागों में है। यहाँ नन्दाकिनी तथा अलकनंदा का संगम है। यहाँ श्रीगोपालजी, शिवजी और बाजार में चण्डिकादेवी के मन्दिर हैं।

यहाँ हमारी फर्म—"महेशानंद एन्ड सन्स" का हेड आफिस है। उत्तराखण्ड में यह सबसे पहला फर्म है, जिसने शिलाजीत तथा यात्रा-सम्बन्धी पुस्तक-प्रकाशन का कार्य सन् १८९४ ईस्वी में आरम्भ किया था। इस फर्म की "लोहज" शिलाजीत अपनी शुद्धता तथा श्रेष्ठता के कारण भारत भर में प्रसिद्ध है।

नन्दप्रयाग से गरुड़

नन्दप्रयाग से एक रास्ता पैदल सड़क का नन्दाकिनी नदी के किनारे होकर घाट जाता है। वहाँ से थराली, ग्वालदम होकर गरुड़ मोटर स्टेशन को जाता है। इस मार्ग की मील-संख्या इस प्रकार है:—

नन्दप्रयाग	० मील	
घाट	११ ,,	डाकघर, बँगला
डुंगरी	१३ ,,	
थराली	५ ,,	बँगला, बाजार, अस्पताल,
ग्वालदम	७ ,,	डाकघर, बँगला
बैजनाथ	१० ,,	डाकघर, बाजार, अस्पताल
गरुड़	१ ,,	मोटर-स्टेशन है।
रानीखेत	५० ,,	मोटर सर्विस
काठगोदाम	६० ,,	रेलवे स्टेशन

कर्णप्रयाग (२,६०० फीट)

उँचाई फीटों में	नाम चट्टी	मील	विवरण
२, ८००	सोनला	३	
	लंगासू	४	
	उमट्टा	४	
२, ६००	कर्णप्रयाग	२	

कर्णप्रयाग में पिंडर और अलकनन्दा का संगम है। यहाँ सरकारी हाईस्कूल, तारघर, डाकघर, अस्पताल, धर्मशाला, बँगला और उमादेवी का मन्दिर है।

यहाँ ऋ० कु० पंडित महीधर शर्मा की फर्म का हेड आफिस है।

यहाँ से एक रास्ता पैदल का रानीखेत और रामनगर रेलवे स्टेशन को जाता है। इसका वर्णन आगे दे रक्खा है। दूसरा रास्ता मोटर सड़क का है। वह अलकनंदा के किनारे-किनारे रुद्रप्रयाग होकर श्रीनगर जाता है। वहाँ से मोटर की सड़क एक तरफ ऋषीकेश और दूसरी तरफ कोटद्वार रेलवे स्टेशन को जाती है।

कर्णप्रयाग से रानीखेत [६० मील]

नाम चट्टी	मील	विवरण
कर्णप्रयाग	०	
सिमली	४	डाकघर
आदबद्री	८	डाकघर, बँगला
लोहबा	११	अस्पताल, बँगला, डाकघर
मेहलचौरी	७	यहाँ कुली बदले जाते हैं।
पनुवाखाल	१	यहाँ से आगे अलमोड़ा जिला है
* गंगाई या चौखुटिया	७	अस्पताल, डाकघर, बँगला, बाजार

रामनगर

* गंगाई से एक रास्ता इस तरह रामनगर को जाता है।

गंगाई	०	
भिकियासैंग	१८	मोटर स्टेशन है।
रामनगर	४४	रेलवे स्टेशन।

(नोटः—भिकियासैंग से रामनगर को मोटर सर्विस है।)

द्वाराहाट	१०॥	अस्पताल, बाजार
रानीखेत	१३॥	यह छावनी ५६८० फीट की ऊँचाई पर है। यहाँ से काठगोदाम रेलवे की मोटर सर्विस है
काठगोदाम	६०	रेलवे स्टेशन।

रुद्रप्रयाग [२,००० फीट]

उँचाई फीटों में	नाम स्थान	मील	विवरण
२, ६००	कर्णप्रयाग	०	
३, ०००	गौचर	६	यहाँ हवाई जहाज के उतरने का सुन्दर स्थान व डाकघर है।
	कमेड़ा	२	
२, ५००	नगरासू	२	डाक बँगला

	शिवानन्दी	३	डाकघर
२,०००	रुद्रप्रयाग	८	

पहला रास्ताः—श्रीनगर से कोटद्वार

रुद्रप्रयाग से श्रीनगर २२ मील है। श्रीनगर से एक रास्ता मोटर का कोटद्वार रेलवे स्टेशन को गया है। इस रास्ते का विवरण इस प्रकार है:—श्रीनगर से पौड़ी १६ मील है। पौड़ी गढ़वाल जिले का हेड क्वार्टर है। यह स्थान ५,५०० फ़ीट की उँचाई पर स्थित है। यहाँ से दुगड्डा ५६ मील है। दुगड्डा से कोटद्वार १० मील है। दुगड्डा से एक मोटर का रास्ता लैन्सडौन छावनी को जाता है।

दूसरा रास्ताः—श्रीनगर से ऋषीकेश

श्रीनगर से ३ मील आगे पैदल के रास्ते अलकनन्दा का पुल पारकर कीर्तिनगर मिलता है। यह टेहरी-गढ़वाल स्टेट में है। यहाँ बाजार व डाकघर है और यहाँ से देवप्रयाग २१ मील और देवप्रयाग से ४२ मील आगे ऋषीकेश है। ऋषीकेश से हरिद्वार १५ मील है।

यमुनोत्तरी-गंगोत्तरी मार्ग

यमुनोत्तरी और गंगोत्तरी दोनों परम पूजनीय तीर्थ टेहरी-गढ़वाल रियासत में हैं। यहाँ जाने के भी कई मार्ग हैं। एक रास्ता देहरादून रेलवे स्टेशन से मोटर द्वारा मसूरी जाता है। मसूरी से धरासू ३८ मील है। रास्ता पैदल का है। इस मार्ग में मील-संख्या इस प्रकार है।

मसूरी	०	मील
सुवाखोली	६	,,
थत्यूड़ा	६	,,
मोलधार	५	,,
अँधियारी	७	,,
चापड़ा	१	,,
रयाड़ चट्टी	६	,,
धरासू	७	,,
धरासू से यमुनोत्तरी	४८	,,
धरासू से गंगोत्तरी	७३॥	,,

दूसरा रास्ता

दूसरा रास्ता यमुनोत्तरी-गंगोत्तरी जाने का ऋषीकेश से है। इस मार्ग की मील-संख्या इस प्रकार है:----

ऋषीकेश--	० मील	
नरेन्द्रनगर--	१० ,,	यह टेहरी-गढ़वाल स्टेट की नई राजधानी है। यह स्थान ४,००० फीट ऊँचा है।
टेहरी	४३ ,,	यह टेहरी-रियासत की पुरानी राजधानी है। यह स्थान २,५२६ फीट ऊँचा है।

नोट--ऋषीकेश से नरेन्द्रनगर और टेहरी तक मोटर का मार्ग है। टेहरी से धरासू २६ मील है। टेहरी से यमुनोत्तरी-गंगोत्तरी का मार्ग नीचे तीसरे रास्ते में दिया गया है।

तीसरा रास्ता

यमुनोत्तरी और गंगोत्तरी जाने का तीसरा रास्ता देवप्रयाग से है। ऋषीकेश से देवप्रयाग तक पूर्वकथित ४२ मील लम्बी मोटर की सड़क है। देवप्रयाग से आगे टेहरी को ३४ मील पैदल मार्ग भागीरथी के किनारे-किनारे गया है।

इस रास्ते की मील-संख्या आगे दी जाती है:--

नाम स्थान	मील	विवरण
देवप्रयाग	०	
खसाड़ा	१०	
कोटेश्वर	४	
बराड्या	६	
क्यारी	८	
टिहरी	६	यह पुरानी राजधानी व नगर है।
सिराई	५॥	
मरिडयाना	६	

छाम	५
नगूण	५
धरासू	५
कल्याणी	४
गेंऊला	५
सिलक्यारी	५
राड़ीधार	५
डंडाल गाँव	२
सिमली	२
गंगनानी	२
खैराल चट्टी	२
जगन्नाथ	३
जमुना चट्टी	१
ओजरी चट्टी	२
हडोटी	२॥

राणागाँव	२	
हनुमान चट्टी	२	
खरसाली मार्कण्डेय तीर्थ	४	
यमुनोत्तरी	४	उँचाई १०,८०० फीट

यमुनोत्तरी से गंगोत्तरी—६६ मील है।

यमुनोत्तरी	०	
सिमली	२५	उसी रास्ते वापस
सिगोंट	७॥	
नाकोरी	३॥	
उत्तरकाशी	६	यह प्रसिद्ध तीर्थस्थान है।
गंगोरी	३	
सुक्खी	४	
झाला	३	

हर्सिल	२	(उँचाई ८,१०० है। यहाँ के सेब मशहूर हैं)।
धराली	३	
जाँगला	४	
भैरोंघाटी	२॥	
गंगोत्तरी	६॥	

गंगोत्तरी से त्रियुगीनारायण—१०७॥ मील है ।

गंगोत्री	०	
भल्लाचट्टी	४०	उसी रास्ते से वापस
सौरा की गाड	३	
फयाल्ह	३	
छूंणा चट्टी	३	
बेलक	४	
पगराना	५	

झाला	४	
बूढ़ाकेदार	५	
भैरव चट्टी	६॥	
भौंट चट्टी	३	
घुत्तू	ह	
दुफन्दा	६	
पंवाली	३	(ऊँचाई ११, २६४ फीट)
मग्गू की मांडा	ह	
त्रियुगीनारायण	५	प्रसिद्ध तीर्थस्थान है।
सोमद्वारा	३॥।	
गौरीकुंड	३	
रामबाड़ा	४	
श्रीकेदारनाथ	३	(ऊँचाई ११,७५३ फीट)

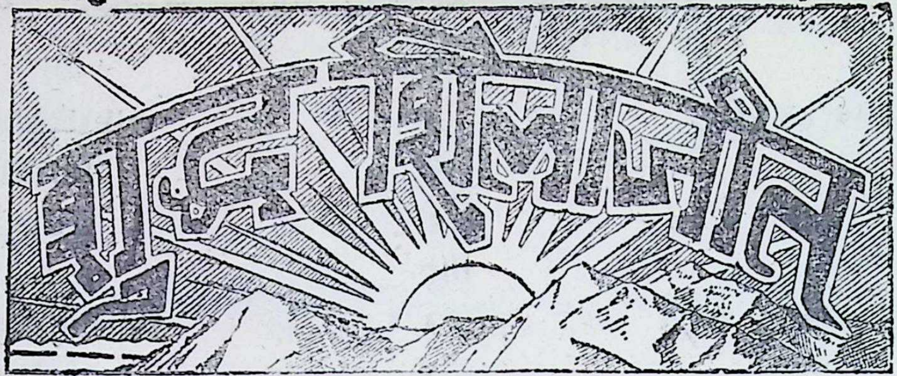

गर्मी के मौसम में श्रीबदरिकाश्रम के पर्वत शृंगों से "लोहज" शिलाजीत निकलता है। शिलाजीत प्रत्येक प्रकार के वीर्य की खराबी को दूर कर मनुष्य के अन्दर अपूर्व बल का संचार करता है। मूत्र-विकार व रक्त-विकार को भी दूर करने में यह अद्वितीय महौषधि है। श्रीबदरिकाश्रम में ही नहीं, बल्कि समस्त भारत में हमारा पहला फर्म है, जिसने सन् १८६४ ई० में इस व्यवसाय को आरम्भ किया। हमारा शिलाजीत अपनी शुद्धता व श्रेष्ठता के लिए भारत भर में प्रसिद्ध है।

महेशानन्द एण्ड सन्स, नंदप्रयाग-गढ़वाल।

[शाखा—बदरीनाथ तथा लखनऊ]

तपोभूमि—श्रीबदरिकाश्रम

यह उत्तराखण्ड के तीर्थों की आधुनिक ढंग से लिखी हुई अनुपम मार्ग-प्रदर्शिका है। इसमें इन तीर्थों का ऐतिहासिक तथा पौराणिक महत्त्व भी दिया गया है। पुस्तक अनेक चित्रों व दोरंगे नक्शे से सुसज्जित है।

Call Of Badrinath

"तपोभूमि श्रीबदरिकाश्रम" की तरह यह अंग्रेजी में लिखी हुई बहुत ही मनोहर पुस्तक है। ३२ चित्रों तथा ४ नक्शों को देने से इसकी उपयोगिता बहुत बढ़ गई है।

अन्य पुस्तकें

इसके अतिरिक्त चारोंधाम माहात्म्य छोटे, बड़े, हिन्दी, संस्कृत, बँगला, नैपाली आदि भाषा में प्रस्तुत मिलेगा।

चित्र-विभाग

हमारे यहाँ उत्तराखण्ड के तीर्थों के सुमनोहर फोटो तथा चित्र भी मिलते हैं।

दृश्यों के कार्ड

उत्तराखण्ड यात्रा मार्ग के दृश्यों [सीनरी] के कार्ड उत्कृष्ट कोटि के मिलते हैं, जैसे १ अलकापुरी, २ नीलकण्ठ, ३ बदरीनाथ-मंदिर, ४ बदरीनाथपुरी, ५ पाण्डुकेश्वर, ६ गरुड़गंगा, ७ नन्दप्रयाग, ८ लछमन झूला, ९ तुंगनाथ, १० गंगोत्रीपुरी, ११ कंडी की सवारी, १२ डंडी की सवारी आदि।

इसके अतिरिक्त नीचे लिखी चीजें भी मिलती हैं:—

१—संगमरमर पत्थर पर मोती की माला से सुसज्जित भगवान् की मूर्ति।

२—मखमल की डब्बी में भी भगवान् का फोटो।

३—अष्टधातु के तथा मूर्तिवाले तावीज।

४—किस्म-किस्म की अँगूठियाँ।

५—कोट में लगाने के लाकेट मिलते हैं।

महेशानंद एण्ड सन्स, नंदप्रयाग-गढ़वाल

[शाखाएँ बदरीनाथ और लखनऊ]

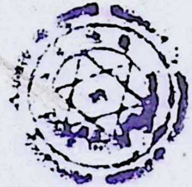

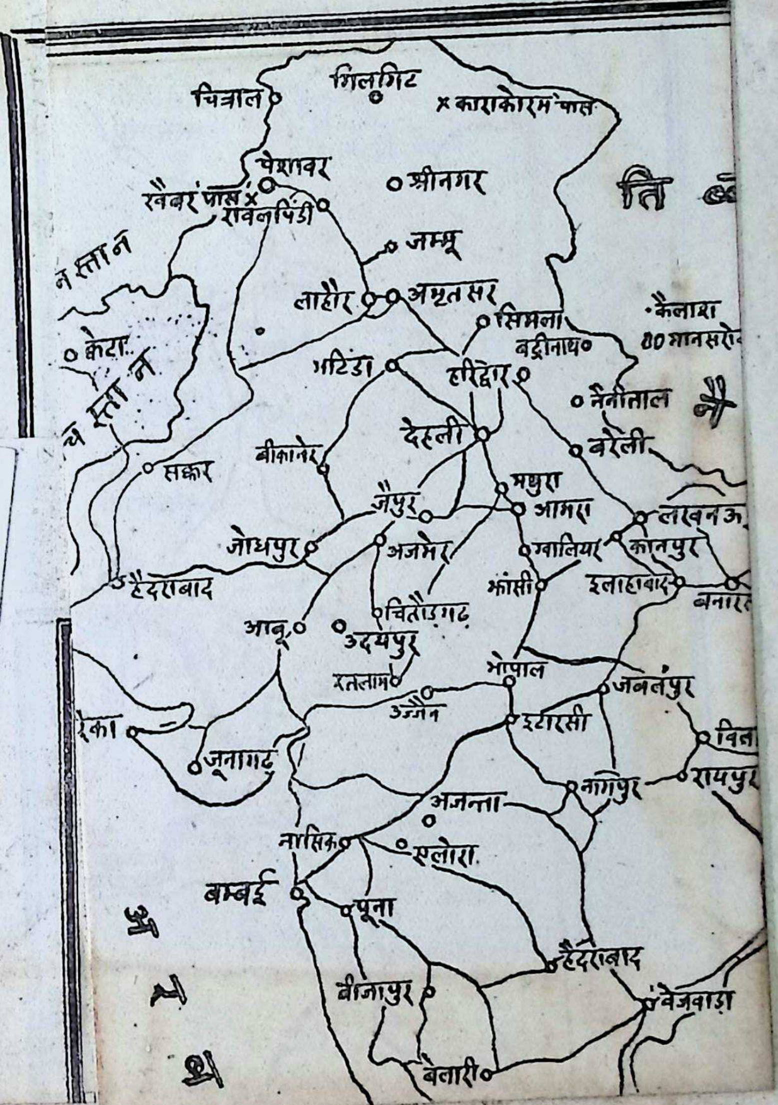

चित्राल
गिलगिट
कराकोरम पास
पेशावर
खैबर पास
रावलपिंडी
श्रीनगर
जम्मू
लाहौर
अमृतसर
सिमला
बद्रीनाथ
कैलाश
मानसरोवर
क्वेटा
भटिंडा
हरिद्वार
नैनीताल
देहली
बरेली
सक्कर
बीकानेर
मथुरा
जैपुर
आगरा
लखनऊ
जोधपुर
अजमेर
ग्वालियर
कानपुर
हैदराबाद
झांसी
इलाहाबाद
चितौड़गढ़
आबू
उदयपुर
रतलाम
उज्जैन
भोपाल
जबलपुर
इटारसी
जूनागढ़
नागपुर
रायपुर
अजन्ता
नासिक
एलोरा
बम्बई
पूना
हैदराबाद
बीजापुर
बेजवाड़ा
बेलारी

मोटर सड़क की मील संख्याः (टिहरी-गढ़वाल स्टेट)

	नाम स्थान	१ ऋषिकेश	२ टिहरी	३ देवप्रयाग	४ कीर्तिनगर
१	ऋषिकेश	०	५३	४२	६३
२	टिहरी	५३	०	०	०
३	देवप्रयाग	४२	०	०	२१
४	कीर्तिनगर	६३	०	२१	०

मोटर सड़क की मील संख्याः (बृटिश-गढ़वाल)

	नाम स्थान	१ कोटद्वार	२ दुगड्डा	३ पौड़ी	४ श्रीनगर	५ रुद्रप्रयाग	६ कर्णप्रयाग	७ नन्दप्रयाग	८ चमोली
१	कोटद्वार	०	१०	६६	८५	१०७	१२८	१४१	१४८
२	दुगड्डा	१०	०	५६	७५	९७	११८	१३१	१३८
३	पौड़ी	६६	५६	०	१९	४१	६२	७५	८२
४	श्रीनगर	८५	७५	१९	०	२२	४३	५६	६३
५	रुद्रप्रयाग	१०७	९७	४१	२२	०	२१	३४	४१
६	कर्णप्रयाग	१२८	११८	६२	४३	२१	०	१३	२०
७	नन्दप्रयाग	१४१	१३१	७५	५६	३४	१३	०	७
८	चमोली	१४८	१३८	८२	६३	४१	२०	७	०

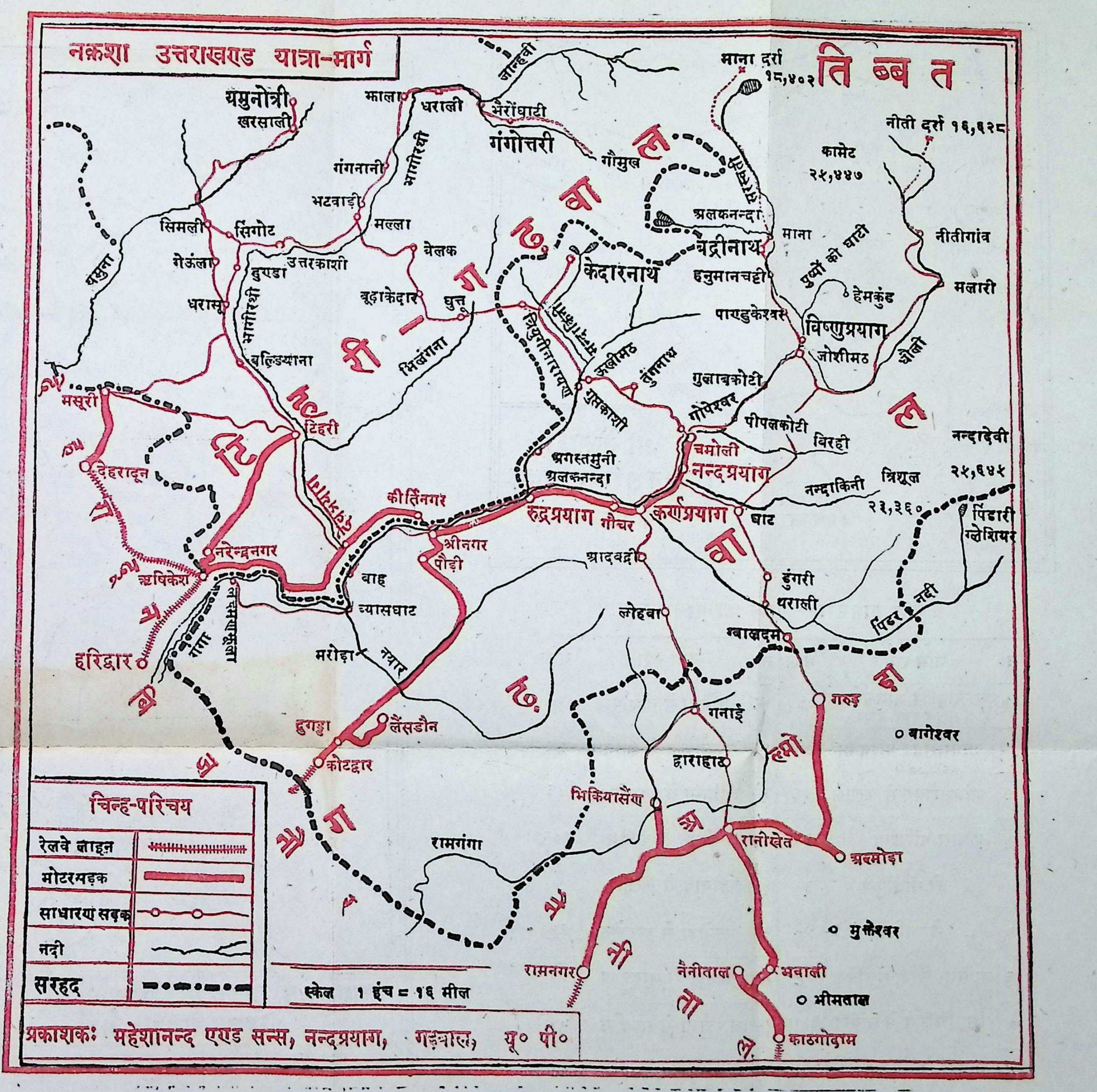

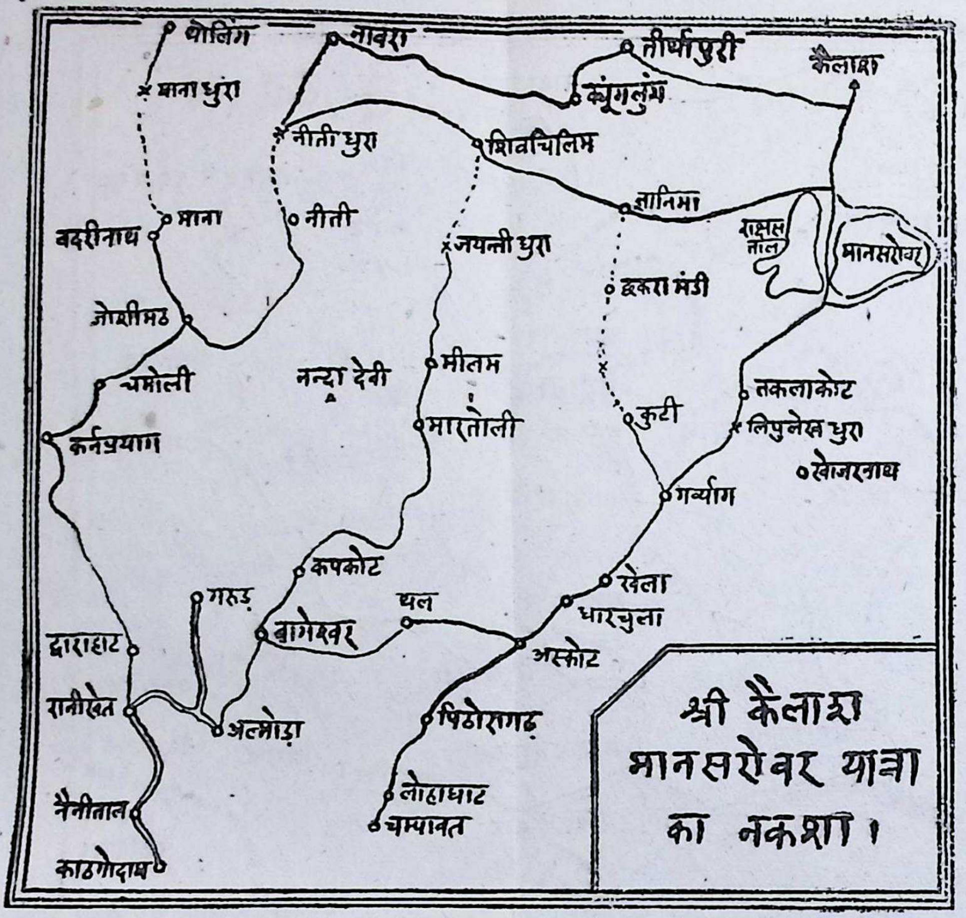

कैलास मानसरोवर यात्रा की मील संख्या

नं०	नाम स्थान	मील	नं०	नाम स्थान	मील
१	अल्मोड़ा से मानसरोवर (लीपुलेख धुरा होकर)	२२१	१०	ज्ञानिमा से तीर्थापुरी	२७
२	मानसरोवर परिक्रमा	५४	११	तकलाकोट से ज्ञानिमा	४९
३	मानसरोवर से कैलास	१६	१२	ज्ञानिमा से गारतोक	७६
४	कैलास परिक्रमा	३२	१३	जोशीमठ से कैलास	२०२
	„ से तीर्थापुरी	३७	१४	बद्रीनाथ से कैलास	२४०
५	„ से ज्ञानिमा मंडी	४०	१५	अल्मोड़ा से अस्कोट	६९
६	ज्ञानिमा से शिवचिलिम	२८	१६	अस्कोट से धारचुला	२१
७	शिवचिलिम से नावरा	३८॥	१७	धारचुला से गर्ब्यांग	५१
८	नावरा से थोलिंग	३३॥	१८	गर्ब्यांग से तकलाकोट	२८
९	थोलिंग से बद्रीनाथ	१००	१९	बाम्पा से गारतोक	१२६

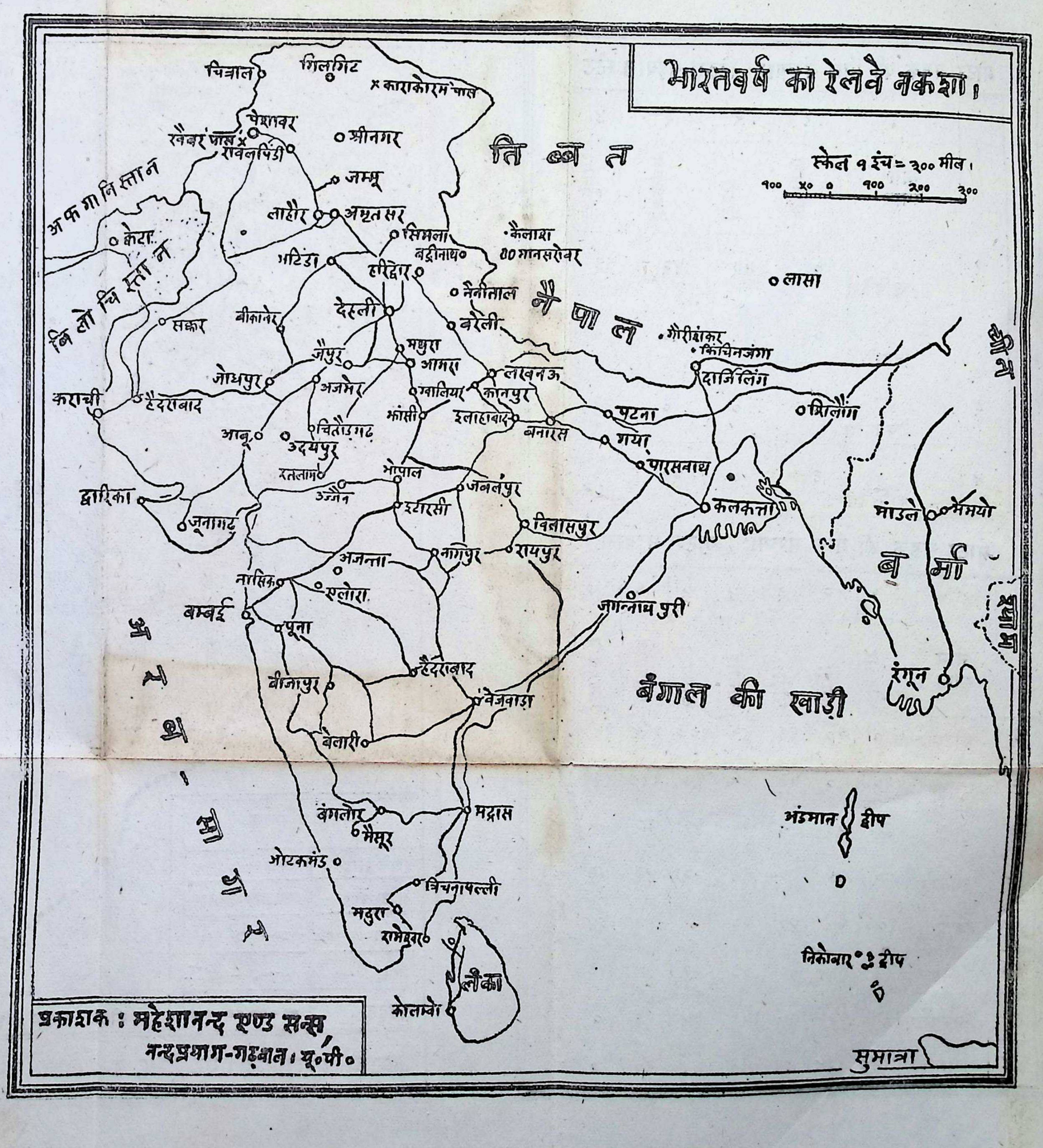

महेशानन्द एण्ड सन्स

पो० नन्दप्रयाग, जि० गढ़वाल